अल्पमोली संस्करण

कोई शिकायत नहीं

लेखिका

कृष्णा हठीसिंग

भूमिका

सरोजिनी नायडू
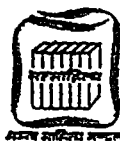
सस्ता साहित्य प्रकाशन

१९५९

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली-१

पहली बार : १९५९
अल्पमोली-संस्करण
मूल्य डेढ़ रुपया

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस,
दिल्ली

मेरे पति
राजा
को

प्रकाशकीय

'मडल' के आत्मकथा, जीवनी तथा सस्मरण-साहित्य की लड़ी मे श्रीमती कृष्णा हठीसिग की यह पुस्तक एक महत्वपूर्ण कडी है।

६ अगस्त, १९४२ को प्रात काल ववई मे राष्ट्रीय नेताओ की जो गिरफ्तारी हुई, जिसकी परिणति '४२ की राष्ट्रीय क्राति और १९४७ मे सत्ता हस्तातरण के साथ हुई, उसीसे इस पुस्तक का भी जन्म हुआ। गिरफ्तारियो के पहले रेले मे ही लेखिका के अग्रज पडित जवाहरलाल नेहरू, पति श्री गुणोत्तम हठीसिंग और अन्यान्य निकट व्यक्ति जेल के सीकचो के भीतर धकेल दिये गये। उसीकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप इस पुस्तक की रचना हुई।

'कोई शिकायत नही' कोरी आत्मकथा नही है, न इतिहास। यह एक परिवार की और एक युग की कहानी है, जिसकी पक्ति-पक्ति मे आत्मानुभव की छाप है। इसमे हमे नेहरू-परिवार की अतरग झलकियॉ मिलती है, जो अन्यत्र कही नही मिलती। इसमे हमे अपने नेताओ के ऐसे सजीव चित्र मिलते है, जो इस रूप मे पहले कभी हमारे सामने नही आये।

एक राजनैतिक परिवार का चित्र होने पर भी प्रस्तुत पुस्तक मूलत राजनैतिक नही है। इसमे हमे मानव-जीवन के सभी पहलुओ की—हर्ष की, शोक की, प्रेम की, वियोग की, प्रसन्नता की, क्रोध की, उदासी और निष्क्रियता की और जोश तथा उमग और सक्रियता की, कर्मक्षेत्र मे सतत सघर्ष की—सभी की झाकी मिलती है।

हमारी आजादी की लडाई के वारे मे वहुत-कुछ लिखा गया है। इस लडाई मे भाग लेनेवाले नेताओ तथा शहीदो के वारे मे भी वहुत-सी सामग्री प्रस्तुत की गई है और की जा रही है, लेकिन इस पुस्तक का अपना महत्व है और वह इसलिए कि इतने लम्वे और महान सघर्ष का यह वडा ही स्पन्दनशील चित्रण है। मानव से पृथक इतिहास का कोई मूल्य नही होता और इस पुस्तक की सवसे वडी खूवी यही है कि इसमे लेखिका का लक्ष्य-विन्दु मानव है।

नेहरू-परिवार भारत का ही नही, सारे ससार का आकर्षण-केन्द्र रहा है।

लेखिका द्वारा अकित किये गये चित्र उस परिवार के सवध मे वडी भावपूर्ण सामग्री प्रदान करते हैं, उस परिवार के छोटे-वडे अनेक व्यक्तियो के जीवन के विविध पहलुओ का दर्शन कराते हैं।

एक वात यह भी है कि लेखिका की लेखन-शैली वडी आकर्षक है। नेहरूजी ने ठीक ही लिखा है—"तुम्हारे (लेखिका के) लिखने मे एक ऐसी स्वाभाविक गति है और खुद-व-खुद एक ऐसा बहाव है कि जो पढनेवाले का दिल लुभा लेता है।"

हमे विश्वास है कि यह पुस्तक पाठको को राजनीति के मानवीय पहलू को समझने मे सहायता देगी और इसकी ताजगी हमेशा वनी रहेगी।

दो शब्द

कुछ साल हुए, मेरे पति ने मुझसे कहा कि जो किताब लिखने का मै इरादा करती हू, वह लिख डालू, पर उस वक्त मैने इसकी कोशिश नही की। मार्च, १९४१ मे जब राजा जेल गये और मै अकेली रह गई, तो मैने तय किया कि इस काम को शुरू करू। मै किताब के एक-दो अध्याय लिख चुकी थी कि मेरा बडा लडका टायफाइड से बीमार पड गया और मै लिखने का काम जारी न रख सकी। राजा छोड दिये गये, बच्चा अच्छा हो गया, तब भी मै किताब का काम फिर से शुरू न कर सकी।

एक साल से कुछ ज्यादा समय इसी तरह बीत गया। राजा दुबारा अनिश्चित काल के लिए जेल चले गये और मै फिर एक बार अकेली रह गई। मेरे पास अब कोई काम न था और वक्त काटना मुश्किल होता था। इसलिए मैने अपनी किताब का काम फिर शुरू करने का निश्चय किया। जो विचार और पुराने दिनो की याद मेरे मन मे प्रवाह की तरह पैदा होती थी, उन्हे लिख सकने की वजह से उन महीनो का अकेलापन बर्दाश्त करने मे मुझे कुछ मदद मिली। इस काम मे अगर मुझे अपने पति का पथ-प्रदर्शन मिलता और अपने भाई की कडी नुक्ता-चीनी भी मिली होती, तो मै उसका खुशी से स्वागत करती, पर ऐसा हो नही सका। अगर हमारे एक दोस्त इस काम मे मदद न करते और मेरे लिखे हुए पर नजर डालकर ठीक सलाह-मशविरा न देते, तो मै यह काम इतनी जल्दी खत्म न कर सकती।

मै डॉ० अमिय चक्रवर्ती की, जिन्हे मै 'अमिय दा' कहती हू और अपना गुरु मानती हू, आभारी हू, जिन्होने बार-बार मुझसे कह-कहकर यह किताब लिखने को तैयार किया। उधर यरवदा जेल की डरावनी दीवारो के भीतर से राजा भी मेरी हिम्मत बढाते थे। इसीलिए आखिर मैने बडी झिझक के साथ यह काम शुरू किया।

बीमारी के बावजूद भी श्रीमती सरोजिनी नायडू ने इस किताब की भूमिका लिखने का कष्ट किया है, जिसके लिए मै अत्यन्त कृतज्ञ हू।

—कृष्णा हठीसिंग

विगत काल की स्मृति है
विस्मृत दुख की प्राप्ति।

भूमिका

किसी भी पुस्तक की भूमिका लिखने के लिए मैं शायद ही कभी राजी होती हू, लेकिन चूकि कृष्णा हठीसिंग को मै बचपन से ही जानती हू, इसलिए इस स्मृति-सग्रह के लिए आशीर्वाद पाने के उनके हक को मैने फौरन मजूर कर लिया।

वह बताती है कि अगस्त के मनहूस इतवार के दिन जब बहुत से राष्ट्रीय कर्मी-जन, जिनमे-उनका लगभग पूरा कुटुम्ब भी शामिल था, जेल मे डाल दिये गए थे, तो बाद के लम्बे और चिंता से भरे महीनो की तनहाई मे अपने को थोडी तसल्ली देने के लिए उन्होने इस पुस्तक को लिखना शुरू किया।

सीधी-सादी भाषा-शैली मे और पूरी सफाई के साथ अपने शुरू के दिनो की कहानी उन्होने इस पुस्तक में कही है। वह अब भी तो बिल्कुल बालक ही है। धन और सौदर्य से भरे-पूरे घर मे अपने सुखद पर अल्हड बचपन का चित्र उन्होने खीचा है, फिर एक विद्रोही और मुश्किल से काबू मे आनेवाली लडकी का, जो ऐसे वायु-मण्डल मे पली थी, जिसे एक दुबले-पतले, पर ओह, कितने महान् महात्मा ने यकीन न आनेवाले तरीके पर बदल डाला, यानी भरी-पूरी हालत से सघर्ष और भयकर बलिदान की समर-भूमि के रूप मे उसे परिणत कर दिया। इसके बाद लेखिका ने अपने स्वीजरलैंड-निवास और रोग-ग्रस्त भाभी की झलक दिखाई है और अपने पिता और भाई के साथ फ्रास, इग्लैड, जर्मनी और रूस के भ्रमण का उल्लेख किया है। उस सिलसिले मे वह बताती है कि विदेश मे किन-किन प्रसिद्ध व्यक्तियो मे उनकी भेंट हुई। आगे उन्होने जनाना जेल मे सत्याग्रही कैदी के अपने तजुरबे दिये है, और बिना किसी छिपाव-दुराव के अपने परिणय और शादी के प्रसग और नगरो और अपरिचित वायुमडल के नये तौर-तरीके के रहन-सहन के प्रति अपनी प्रति-क्रिया का जिक्र किया है। अपने दोनो पुत्र, हर्ष और अजित, को भी वह पुस्तक मे लाई है, जिनकी वजह से अब मौजूदा राजनैतिक आदोलन मे सक्रिय भाग लेने से उन्हे वचित हो जाना पडा है। यहा-वहा पुस्तक के पन्ने पिता-माता तथा अन्य स्नेही जनो की मृत्यु के कारण आसुओ से भीगे है।

यह बहुत-कुछ निजी कहानी होते हुए भी नेहरू-परिवार के इतिहास के साथ

घुली-मिली है और इसी कारण सर्वसाधारण के लिए यह महत्त्वपूर्ण और प्रेरणा-दायक है। क्या पच्चीस वर्ष तक नेहरू परिवार का इतिहास स्वतन्त्रता के लिए किये गए भारतीय संघर्ष के इतिहास का सजीव प्रतीक और एक महत्त्वपूर्ण अग नही है ?

इस सीधे-सादे विवरण मे महान् मोतीलाल की तस्वीर भी हमे मिलती है। कहा मिलेगा उन-जैसा दूसरा ! यहां वह एक ऐसे भक्तिपूर्ण परिवार के सच्चे स्नेहभाजक कुलपति और अधिनायक के रूप में आते है, जिसे वह हृदय से प्रेम करते थे। उनके इस महान् गुण से महात्मा गाधी भी बहुत प्रभावित थे।

फिर आते है जवाहरलाल। दुनियां के बडे-बडे कामो के लिए उत्साह और निर्भीकतापूर्वक जिहाद बोलनेवाले। अपने हथियारो को वह उतार फेंकते है और खजर को म्यान मे डाल देते है। फिर उनके विविध रूप—भाई, पति, पिता, मित्र, और छोटे बच्चो के सखा—सामने आते है।

यही पर लेखिका ने बडे कोमल रगो मे जवाहर की स्नेहभाजिनी और बहादुर पत्नी कमला की छवि अकित की है, जिसके सक्षिप्त जीवन और मरण की दुखद घटना देश के काव्य और आख्यानो का विषय बन गई है।

स्वरूप, जिन्हे अब विजयलक्ष्मी कहते है, इस कहानी की कारीगरी में चादी के चमकीले तार की भाति आती है और इदिरा भी वधू की धानी साडी मे क्षण भर के लिए हमारी आखो के आगे घूम जाती है।

लेकिन मेरे लिए ठिगनी, शानदार, वृद्ध और कष्ट-पीडित स्त्री—मोतीलाल की पत्नी, जवाहर की माता—की याद सबसे कीमती है, जिनमे प्रेम और श्रद्धा के कारण आश्चर्यजनक साहस और सहनशीलता आगई थी। नाजुक जवानी के वर्षो मे जिनकी एक अनमोल हीरे की भाति सावधानी के साथ रक्षा और देखभाल की गई थी, वही वृद्धावस्था मे आजादी के ऊबड-खाबड और खतरनाक रास्ते पर चलने वालो का पथ-प्रदर्शन करने के लिए मणि का प्रकाश बन गई थीं।

बचपन में विधवा हो जानेवाली बडी बहन का चित्र भी बड़ा हृदयद्रावक है, जिन्होने नेहरू-परिवार की अथक सेवा के लिए अपना जीवन ही समर्पित कर दिया था और जो अपनी बहन के प्रति अपना अन्तिम कर्तव्य पूरा करके उनकी मृत्यु के चौबीस घटे बाद स्वयं चल बसी थी। जो जीवन में बहन से अभिन्न रहीं थीं, वह मृत्यु के बाद भी उनसे अलग न हो सकी।

नेहरू-परिवार के जीते-जागते इतिहास के इस चित्र-पटल पर कही गहरे तो कही हल्के, कही धुधले तो कही बिल्कुल स्याह रग भी आते है, जो मनुष्य के भाग्य के साथ सबद्ध है।

पुस्तक यहा खत्म हो जाती है, लेकिन नेहरू खानदान की सजीव कहानी आगे चलती जाती है। शानदार पिता और शानदार पुत्र द्वारा कायम की गई देशभक्ति की महान् परपरा को उनके आगे आनेवाली पीढी उचित रूप से सम्मानित करेगी।

—सरोजिनी नायडू

तुम्हारी किताब !

तुम्हारी जिस किताव का वहुत दिनो से इतजार था, उसे मैने एक वार उत्सुकता से पढ डाला और फिर कई हिस्सो को दुवारा पढा। मै इस किताव के कुछ हिस्से कई वार फिर पढना चाहूगा, लेकिन फिलहाल मुझे यह किताब दूसरो को पढने के लिए देनी पडी। इस किताव के वारे मे ठीक राय देना मेरे लिए आसान नही है; क्योकि एक तो मै वैसे ही तुम्हारी तरफदारी करता हू, और, इससे भी ज्यादा, जिन घटनाओ का तुमने जिक्र किया है, उनका हमारे जीवन से इतना गहरा सबध है कि मै मुश्किल से ही उन्हे तटस्थ होकर देख सकता हू। तो भी ऐसी हालत मे, मै जितनी सही राय दे सकता हू, देने की कोशिश करूगा।

मुझे यह किताव पसन्द है। पढने में वहुत आसान है और आकर्षक भी है। ये ही वाते तुम्हारे लिखने की खूवी सावित करती है। अपने वारे मे लिखते हुए अपने आपको कुछ ऊचा उठा देना या वनावटीपन न लाना मुश्किल काम है। तुम इस वात से दूर रही हो और तुम्हारे लिखने मे एक ऐसी स्वाभाविक गति है और खुद-व-खुद एक ऐसा बहाव है कि जो पढनेवाले का दिल लुभा लेता है। तुम अच्छा लिखती हो और तुम्हारी किताब के कई हिस्से तो दिल हिला देनेवाले और वहुत ही अच्छे है। जव कभी भी तुम इस ऊचाई पर न भी रही हो तो कुछ बुरा नही हुआ है, क्योकि इसमे तुम्हारी सचाई दिखाई दी है और अपने आपको सुदर शब्दो मे छिपाने के वदले खुद को व्यक्त करने की कोशिश नजर आती है। तुम्हारे चित्र का दायरा सीमित है और ऐसा होना भी चाहिए था, क्योकि तुमने अपने चित्र का विपय ही ऐसा चुना है, खासतौर पर यह पारिवारिक इतिहास है और यह इतिहास भी एक पूरी सिलसिलेवार कहानी न होकर कई अलग चित्रो का समूह है, न तुम उस अदरूनी कश्मकश की गहराई मे पहुची हो, जो किसी जीवन-कथा या आत्म-कथा का जरूरी भाग है। लेकिन इस गहराई मे पहुचना तुम्हारी किताव के दायरे के वाहर होता और तुम्हे सब तरह की मुश्किलो मे डाल देता। तुमने इस विशेष रूप और सामग्री को चुनकर अच्छा ही किया।

मेरा खयाल है कि अपनी किताव से सतुष्ट होने और उसपर फख्र करने के

लिए तुम्हारे पास कारण मौजूद है। सारी किताव मे दु ख की हलकी-सी छाया दिखाई देती है, जैसे कि मानो दुर्भाग्य हमारा पीछा कर रहा हो। यह तुम्हारे मन का सच्चा प्रतिविंव है और शायद वहुत से दूसरे दिलो का भी और वह सचमुच वदलती घटनाओ का कुदरती नतीजा है, जव कि हम पीछे निगाह डालकर उनपर गौर करते है। कभी-कभी जैसा कि किताव के नाम से भी नजर आता है, किस्मत को ललकारा गया है, और यह ठीक ही है, क्योकि अगर इतिहास का कुछ मतलव है तो यह कि हम लगातार किस्मत को ललकारते रहे है, या चाहो तो यह भी कह सकती हो कि हम किस्मत को तुच्छ समझते रहे है, और विना शिकायत किये किस्मत के जवाव को स्वीकार करते रहे है। पहला वार हमारा था, न कि किस्मत का, और हालाकि होनेवाली घटनाओ का हमे ज्ञान नही है, तो भी जो नतीजे हो सकते थे उनका अदाजा करने में हमने कमी नही की और इसलिए हालाकि जिंदगी कभी-कभी मुश्किल और कडवी रही है तो भी शायद ही कभी हम अचरज मे पडे हो या अचानक विना जाने-बूझे घिर गये हो। हमने इस तरीके से कितनी कामयावी पाई, इस वात का फैसला करना या यह वताना उसके लिए नामुमकिन है, जो खुद ही इसमे हिस्सा ले रहा हो।

कही-कही तुम्हारी किताव में इतनी जान है कि मेरे दिमाग मे कई तस्वीरे आगई और गुजरा हुआ जमाना मेरे सामने आकर खडा हो गया और घर की एक अजीव याद ने मुझे घेर लिया। दूसरो पर और खासकर अजनवियो पर इसका क्या असर होगा, मै नही जानता। यह सच है कि वहुत से लोग हममे दिलचस्पी रखकर हमारा सम्मान करते है, और वे तुम्हारी कहानी मे दिलचस्पी लेंगे। किसी हद तक यह कहानी दूसरो के जीवन का भी प्रतिविंव है।

—जवाहरलाल नेहरू

प्राक्कथन

"नही, अभी रात नहीं हुई है,
दो-तीन पहरेदार अभी खड़े पहरा दे रहे हैं,
परंतु अंधेरा भी वहुत बढ़ रहा है, और
ये पहरेदार, शायद सुबह होने से पहले ही
क़त्ल कर दिये जायं।"

—पिअरी व्हा पाने

९ अगस्त १९४२ को सुवह ठीक पांच वजे ववई की पुलिस अचानक हमारे घर पहुची। उनके पास जवाहर और राजा की गिरफ्तारी के वारट थे। आल इडिया काग्रेस कमिटी के जलसो में कई दिन के भारी काम की वजह से हम सव थकान से चूर थे। रात को वहुत देरतक हम सव बैठे हाल की वातो पर वहस करते रहे। आधी रात को हमारे मेहमान चले गए और जवाहर, राजा और मै उसके वाद भी एक घटे और वाते करते रहे। फिर हम सव सो गये।

रात को इतनी देर तक जागने के वाद वडे तडके जगाया जाना ही काफी वुरा था, पर अपने दरवाजे पर उस समय पुलिस को मौजूद पाना उससे भी ज्यादा वुरा था। जव दरवाजे की घटी बजी तो मै गहरी नीद मे थी, फिर भी घटी सुनते ही मै उठ बैठी और मुझसे किसीके यह कहने की जरूरत न पडी कि पुलिस आ गई है। उस वक्त सिवाय पुलिस के और आ भी कौन सकता था! मै जल्दी से जवाहर के कमरे मे गई, यह सोचकर कि वारट सिर्फ उन्हीके लिए होगा। वह वहुत ज्यादा थके हुए थे। इसलिए उनकी आखे भी नही खुल रही थी और न वह अभी ठीक से जग ही पाये थे। चद मिनट के भीतर हमारा घरभर जाग गया। और जव हमने यह समझ लिया कि होनहार होकर ही रहती है, तो हम सव जवाहर का समान वाधने मे उन्हे मदद देने लगे। राजा भी कुछ किताबे जमा करने में हाथ वटा रहे थे कि मेरी भतीजी इदिरा ने कहा, "राजाभाई, आप क्यो तैयार नही हो रहे है?" यह सुनकर मैने तेजी से पलट कर पूछा, "किसलिए?" झट से इदिरा ने कहा, "इनके लिए भी तो वारट है।" न मालूम क्यो, पर हममे से किसी

को यह खयाल नही था कि पहले ही हल्ले मे वर्किंग कमेटी के मेम्बरो के अलावा और लोगो को भी गिरफ्तार किया जायगा, पर हम गलती पर थे।

अब राजा ने भी अपना सामान ठीक किया और वहुत जल्द वे दोनो जाने के लिए तैयार हो गए। हमने उन्हे विदा किया और पुलिस अफसर अपने पहरे मे उन्हे उनकी गाडियो तक ले गये। जवाहर को किसी ना-मालूम जगह ले जाया जा रहा था और राजा को यरवदा सेंट्रल जेल पूना मे। हमने उन दोनो को नमस्कार किया और सव यह सोचते हुए वापस लौटे कि न मालूम इस बार भविष्य मे हम सवकी किस्मत मे क्या लिखा है।

उस वक्त हमारे यहा वहुत से मेहमान आये हुए थे और उनसे सारा घर भरा हुआ था। उनमे से सिर्फ दो आदमी ही गये थे, पर अव घर की हर चीज वदली हुई मालूम होती थी। अव किसी चीज की कमी हो गई थी और कोई ऐसी चीज चली गई थी, जिसके कारण पहले घरभर मे जान थी और अब वही घर सूना मालूम हो रहा था। कई दिनो से हमारे घर आने जानेवालो का ताता वधा हुआ था और अव उनकी सख्या और भी वढ गई। दोस्त, रिश्तेदार और अखवारो के रिपोर्टर हमारे घर के चक्कर काटने लगे। वे इन गिरफ्तारियो की तफसील मालूम करना चाहते थे। फिर भी हमे वे ही याद आ रहे थे, जो हमसे दूर चले गए थे, और हमारे मन मे हर वक्त उन्हीका खयाल बना रहता था।

विलकुल ऐसी ही वात कई वार हो चुकी थी, पर फिर भी कोई इस वात का अभ्यस्त न हो पाया था। हर वार जब ऐसा होता तो कुछ परेशानी और थोडा अकेलापन मालूम होने लगता था।

× × ×

अव साल भर से मेरे प्यारे और अजीज मुझसे दूर जेल की भयानक दीवारो और लोहे की शलाखो के पीछे वद थे। उन्हे देखना भी मना था। हालाकि उनकी गैरहाजिरी मेरे जीवन मे वहुत वडी कमी पैदा करती है, परतु मुझे न तो मायूस करती है और न मेरे कदम उससे डगमगाते है। मुझे पूरा यकीन है कि जिस मकसद के लिए उन्हे जेल मे डाल दिया गया है वह सच्चा और सही है और इसलिए यह अनिवार्य है कि वे उसके लिए तकलीफे उठाए।

एक साल किसी इन्सान की जिंदगी मे कोई वडी लवी मुद्दत नही है और पूरी कौम की जिंदगी मे तो यह मुद्दत कुछ भी हकीकत नही रखती। पर कभी-कभी

ऐसा होता है कि एक साल भी बहुत लबा हो जाता है और उसका हर महीना खासी लबी मुद्दत मालूम होने लगती है। मैने कई बड़े भारी आदोलन देखे है और क्या मालूम अभी और कितने ऐसे ही आदोलनो में से गुजरना होगा। इन सब वर्षो मे केवल मैने ही नही, बल्कि हमारे और बेशुमार साथियो ने भी तरह-तरह की भावनाओ का अनुभव किया है। हमने ऐसी घडिया भी देखी है जो बडी खुशी की घडियां थीं और ऐसी भी जिनमे असीम निराशा थी। कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि हमारे चारो ओर अधेरा छा गया है और हमे रास्ता सुझाई नहीं दिया है। फिर ऐसे मौके भी आये है जब इस अंधेरे मे रोशनी की कोई किरण दिखाई दी है और उसी से हमारे मन में अपनी लडाई जारी रखने के लिए नई आशा और नया जोश पैदा हुआ है।

परेशानी और तनहाई के इन महीनो मे बहुत-सी बातो की याद मेरे मन मे आती रही है। सिर्फ इस खयाल से कि दिल किसी भी काम में लगा रहे, मैने इन चीजो को लिखना शुरू किया और धीरे-धीरे इसीसे यह किताब तैयार हो गई। इन बातो को लिखते वक्त मुझे ऐसा मालूम हुआ कि मै फिर एक बार अपने बचपन के और उसके बाद के दिनो मे पहुच गई हूं। इनमे कुछ बातो की याद दिल को खुश करनेवाली रही है, और कुछ बातो से तकलीफ भी हुई है। पिछले जमाने की बहुत-सी बातें याद करते हुए मै हँसी भी हू और मेरी आखो से आंसू भी निकल पडे है। इनसे मुझे थोडी खुशी भी हुई है, पर शाति बहुत मिली है। कभी-कभी थोडा सिर दर्द भी महसूस हुआ है।

मेरे बचपन का जमाना बडे ही सुख और शाति से गुजरा है। हमारा कुनबा छोटा-सा था और हमारी छोटी-सी दुनिया सुख और शाति को दुनिया थी, जिसमे दुख या तकलीफ नाम को न थी। धीरे-धीरे हमारा जीवन काफी बदल गया, फिर भी हम सब एक साथ रहे। इसलिए इन बातो का कोई खास असर नही पडा। पर ज्यो-ज्यो वक्त गुजरता गया, परिस्थिति ने हमे मजबूर किया कि हम एक-दूसरे से दूर हो जाय। फिर भी समय बीतता गया और हालात जैसे कुछ भी रहे उन्हीके मुताबिक हम अपने-आपको आनेवाली परिस्थितियो के मुकाबले के लिए मजबूत बनाते गए।

कुछ महीने पहले मैने जवाहर को 'हिंदुस्तान मे किसी जगह' खत लिखा और हमारे खानदान मे पिछले पद्रह साल की घटनाओ का जिक्र किया। उन्होने मेरे

खत का जो जवाव दिया उससे अच्छी तरह पता चलता है कि हमारा घर क्या था और कैसा हो सकता है और जिंदगी का हम पर क्या असर पडा। पर जिन मुसीवतो का हमे मुकावला करना पडा उनका हमे जरा भी अफसोस नही है। उन्होने लिखा था—

"तुमने १६२८ के और उस जमाने के हमारे सगठित परिवार की वावत लिखा है। अव हमारे वहुत से अजीज, जो हमे प्यारे थे, मर चुके है और जो वाकी है वे इधर-उधर विखरे हुए है और एक-दूसरे से मिल भी नही सकते। हर पीढी को जमाने का जो सवक दोहराया जाता है वह उस पीढी को अपने जाती तजुरवे से ही सीखना पडता है। सगठन के वाद विगठन होता है। लेकिन नया सगठन शायद पुराने सगठन से ऊंची सतह पर होता है, क्योकि उसके अदर पिछली कामयावियो या नाकामयावियो की याद कही-न-कही अर्द्धचेतन मन मे रहती हे। पिछले जमाने का वोझ हमारे साथ लगा रहता है, वह भार भी है और प्रेरणा भी। इसलिए कि वह एक ही वक्त मे हमे नीचे की तरफ भी खीचता है और आगे को भी वढाता है। कभी-कभी हम अपने आपको जीवन, यौवन और शक्ति से पूर्ण पाते है और कभी ऐसा होता है कि हजारो वरसो का वोझा हमे दवा लेता है और इस लवी अनत यात्रा में हम अपने-आपको वूढा और थका हुआ महसूस करने लगते हैं। ये दोनो हमारे व्यक्तित्व के अग है और हम जैसे भी है, इन्हीके द्वारा वने हुए है, और इन दोनो के निरतर सम्मिश्रण और घात-प्रतिघात मे हमेशा कोई-न-कोई नई चीज पैदा होती रहती है। हम उन प्राचीन सभ्यताओ की औलाद है जिनके पीछे सैकडो तेजस्वी पीढियो के सघर्ष और सफलताओ का इतिहास और उनके जीवन की स्थिरता और गति-अगति की कहानी है। इसलिए हम इस सत्य का अनुभव उन लोगो से अधिक कर सकते है, जिनकी सभ्यता अपेक्षाकृत नई है और जिनका अतीत न इतना जटिल है और न जिसकी छाप इतनी गहरी है।

"हमारे पास ऐसा वहुत कुछ है जिससे हमारे मन और आत्मा का सतुलन वना रहता है और हमे जीवन के वारे मे एक ऐसा शात और विश्वास-पूर्ण दृष्टिकोण मिलता है, जिनके कारण हम वदली हुई घटनाओ के वीच न उत्तेजित होते हं और न चचल। यही दरअसल पुरानी तहजीव की खास निशानी हे। यही वह चीज है जो चीन के पास काफी से ज्यादा है और मेरा खयाल है कि वही चीज हिंदुस्तान के पास भी है और उसीके कारण हिंदुस्तान की अच्छी ही गुजरेगी।

"मै जब बच्चा था तो मुझे याद है कि हमारे खानदान मे बीस-पच्चीस आदमी थे, जो सब एक साथ रहते थे—जैसे मिले-जुले खानदानो मे रहा करते है । मैने उस बडे खानदान को टूटते हुए और उसके हर एक हिस्से को एक अलग सगठन का केन्द्र बनते देखा है। फिर भी ये अलग-अलग हिस्से प्रेम और समान हित के रेशमी धागो मे बधे रहे और उन सब का एक बडा सगठन हमेशा बना रहा । यह सिल-सिला जारी ही रहता है और इस तरह जारी रहता है कि आपको पता भी नही चलता। पर जब घटनाए जल्दी-जल्दी घटने लगती है,तो मन को एक तरह का धक्का लगता है। जरा सोचो कि पिछले पाच बरसो मे चीन में क्या कुछ होता रहा और वहा जो महान क्राति हुई उसने वहा के हजारो-लाखो खानदानो का ध्वस कर दिया। फिर भी चीनी कौम जिदा है और पहले से ज्यादा ताकतवर है। व्यक्ति पैदा होते है, बडे होते है और लडाई और आफतो के होते हुए भी अपनी जाति और मानवता की परपरा को चलाते है। कभी-कभी मै ऐसा महसूस करता हू कि हमें हिंदुस्तान में भी अगर ऐसे बडे अनुभवो का मौका मिले तो हम अच्छे रहेंगे। जो हो, हमे भी कुछ-न-कुछ तजुरबा हो ही रहा है और इस तरह धीरे-धीरे मगर पूरे यकीन के साथ हम भी एक नये राष्ट्र का निर्माण कर रहे है।"

कोई शिकायत नहीं

: १ :

"फूल खिले हो, किसी भौंरे के समान आश्र रस पी रही हो, सुगंधित वायु वह रही हो और काव्य का स्फुरण हो रहा हो ! ये दोनो बातें मेरे जीवन में थी। प्रकृति के साथ जीवन खेल रहा था। जव मैं छोटा था तव आशा और काव्य से जीवन सपन्न था।"

—कोलरिज

सन् १९०७ के नवम्वर की एक सुवह—जव कडाके का जाडा पड रहा था—मैं प्रयागराज मे पैदा हुई थी। अव यही शहर इलाहावाद के नाम से मशहूर है। हमारा पूरा घर रोशनी से जगमगा रहा था और वहुत रात वीत जाने पर भी घर मे लोग जाग रहे थे, क्योकि मेरी माता को वडा कष्ट हो रहा था और सभी वच्चे के पैदा होने का इन्तजार कर रहे थे। वडी तकलीफ के वाद मै पैदा हुई। मोटी-ताजी और तन्दुरुस्त। मुझे इसका पता भी न था कि मेरे इस दुनिया मे आने के समय मेरी कमजोर और नाजुक मा को इतना कष्ट हुआ कि उसकी जान ही खतरे में पड गई थी। इसके कई हफ्ते वाद भी वह जिदगी और मौत के वीच झूलती रही। इधर मै नर्सों और दूसरो की निगरानी मे उसी तरह वढती रही जैसे आमतौर पर वच्चे को वढना चाहिए।

मा धीरे-धीरे ठीक होती गई, पर वहुत दिनो तक कमजोर रही। उनके लिए यह मुमकिन न था कि वह मेरी देख-भाल कर सके। इसलिए मेरी एक मौसी और नर्सें मेरी देख-भाल करती रही। जव मेरी उम्र तीन साल के करीव हुई तो उस मेम ने, जो मेरी वहन स्वरूप की देख-भाल किया करती थी, मेरी भी देख-रेख शुरू की। मेरे भाई जवाहर मुझमे अठारह साल वडे है और मेरी वहन सात साल। इसलिए मै एक इकलौते वच्चे की तरह, जिसका कोई साथी न हो, पली। मुझमे और मेरे भाई और वहन के वीच में कोई भी चीज आम दिलचस्पी की न थी। भाई को तो मै जानती भी न थी, क्योकि जव मै पैदा हुई वह इग्लैड मे थे और मेरी उनसे पहले-पहल भेट उस वक्त हुई जव मै पाच साल की थी।

पैदा हुई उस वक्त पिताजी एक वडे वकील की हैसियत से काफी नाम पैदा

कर चुके थे और रईस थे। पिताजी ने हमारा घर 'आनन्द-भवन' उस वक्त खरीदा था, जब जवाहर की उम्र दस साल की थी। जिस जगह यह मकान बना हुआ है उसे बहुत ही पवित्र माना जाता है, क्योकि आम विश्वास है कि यही वह जगह है जहा रामचन्द्रजी के चौदह बरस के वनवास से लौटने पर भरत से उनका मिलाप हुआ था। करीब ही भारद्वाज आश्रम है, जहा पुराने जमाने मे एक बडा भारी गुरुकुल था और जो अब भी तीर्थ-स्थान माना जाता है। हमारा घर देखने के लिए लोगो की हमेशा ही भीड लग जाया करती थी—खासकर कुम्भ मेले के दिनो मे, जो प्रयाग मे हर बारह बरस के बाद लगता है। इन दिनो लाखो आदमी इस पवित्र शहर मे 'सगम' पर स्नान करने आते है। उन दिनो हमारे घर को देखने जो लोग आते उनकी तादाद इतनी ज्यादा होती कि उनको रोक रखना नामुमकिन हो जाता। ये लोग हमारे घर के अहाते मे फैल जाते थे और वहा थोडी देर आराम करते थे। हर साल माघ मेले के मौके पर भी काफी लोग वहा आते थे। उनमे बहुत कम लोग ऐसे होते थे, जो हमारा घर देखे बिना अपने शहर या गाव वापस लौटते हो। इनके वहा आने का कारण कुछ तो यह होता था कि वह इस जगह को तीर्थ-स्थान मानते थे और कुछ यह भी कि वे पिताजी और जवाहर को देखना चाहते थे, जिनके बारे में वे बहुत कुछ सुन चुके थे।

'आनद-भवन' लबा-चौडा मकान है। उसके चारो तरफ विशाल बरामदे है और इर्द-गिर्द बडा बाग है। मकान के एक तरफ लॉन है, पिछवाडे फलो का बाग और सामने फिर लॉन—जिसमे एक सावन्-भादो (ग्रीष्म-भवन) और एक टेनिस कोर्ट बना हुआ था। सावन-भादो के बीच मे शिवजी की एक मूर्ति थी। यह मूर्ति बडे-बडे पत्थरो पर प्रतिष्ठित थी और ये पत्थर एक-दूसरे पर इस तरह रखे गये थे कि सब मिलकर एक छोटे-से पहाड की तरह दिखाई देते थे। शिवजी के सिर से पानी का एक छोटा चश्मा फूटता था, जो बहकर नीचे तालाब मे गिरता था। इस तालाब मे चारो तरफ सुन्दर फूल खिले रहते थे। गर्मियो मे यह जगह बडी ठडी रहती थी और मुझे तो बहुत ही पसद थी। बाद में जब हमारा नया मकान बना तो यह सावन-भादो गिरा दिया गया, क्योंकि यह नई इमारत के रास्ते मे पडता था। पिताजी के पास बहुत से घोडे, कुत्ते, मोटरे और गाडिया थी और उन्हे सैर-सपाटे का और घोडे की सवारी का बडा शौक था। अस्तबलो के आस-पास घूमने और घोडो को देखते रहने मे मुझे बडा आनद आता था। खुद मेरा भी एक टट्टू था—

वडा ही खूबसूरत और दूध की तरह सफेद। वहुत से लोगो ने इस जानवर की ऊंची कीमते लगाई, पर पिताजी उसे वेचने से इन्कार करते रहे। मैं भी उसे ज्यादा दिन अपने पास न रख सकी, क्योंकि एक दिन उसे सांप ने डस लिया और वह अपने अस्तवल मे मरा हुआ पाया गया। मेरे लिए यह वडा भारी सदमा था, कारण कि मैं उसे वहुत चाहती थी और कई हफ्ते तक मैंने उसका शोक मनाया।

मेरे वचपन में अक्सर रिश्तेदार हमारे यहा वने रहते थे। कभी-कभी उनमें वच्चे भी हुआ करते थे और उनके साथ खेलने में मुझे वडा अच्छा लगता था। मुझे यह देखकर वडा अचभा होता था कि माताजी, बीमार होते हुए भी, अपने विस्तर पर पडे-पडे इन सव लोगो का खयाल रखती थीं और पिताजी को इतना सारा काम रहते हुए भी वह इतना वक्त निकाल ही लेते थे कि हरएक के साथ कुछ मिनट विताये और इस वात का इतमीनान कर ले कि सव आराम से हैं और खुश है। उनकी मिसाल उस चरवाहे की-सी थी जो जाहिर मे तो विलकुल बे-पर्वाह दिखाई देता है, पर जिसकी निगाह हरदम अपने पूरे गल्ले पर रहती है और पिताजी यह काम वडी ही खूबी से करते थे।

मेरी पैदाइश से कुछ साल पहले मेरी माँ के एक लडका हुआ था, जो जिंदा नही रहा और जिसका गम माताजी कभी भूल न सकी। जव मैं पैदा हुई तो माताजी को वडी ही निराशा हुई, पर पिताजी के लिए इसमें कुछ भी फर्क न था। मेरा वचपन अजीव किस्म के अकेलेपन मे वीता। मेरे साथ खेलनेवाले वच्चे वहुत ही कम थे। और मुझे वहुत से नियमो का, जो मेरे लिए निश्चित किये गए थे—पालन करना पडता था। सुवह उठने से लेकर रात को सोने के समय तक, मेरे वक्त का एक-एक क्षण मुकर्रर किये हुए कामो में वीतता था। मुझे यह वात वडी ही नापसद थी, इसलिए कि मैं जानती थी कि दूसरे बच्चो को उनके मा-वाप ज्यादा आजादी देते थे और उनके लिए वधे-वधाये नियम वनानेवाली सरक्षिका नही होती थी। मेरी सरक्षिका मुझपर जो हुकूमत चलाती थी उसे भी मैं नापसद करती थी और अक्सर मैं उसका हुक्म नही मानती थी, क्योकि एक तो यह कि मैं जिद्दी लडकी थी, दूसरे मेरी तवियत मे इतनी तेजी और गुस्सा था कि अक्सर वह मुझपर गालिव रहता था। मुझे गुस्सा आने मे देर नही लगती है, पर वह वच्चो की तरह दूर भी जल्दी हो जाता है। वहुत कम ऐसा होता है कि मेरा गुस्सा ज्यादा देर तक रहे। वैमनस्य उसमें नाम को भी नही होता, पर अक्सर उसकी वजह से मुझे

फिजूल की परेशानियो का शिकार होना पडता है ।

सजा पाना, अकेले बद कर दिया जाना या रात का खाना न मिलना, यह मेरे लिए अक्सर पेश आनेवाली बाते थी, पर मेरी वहन को शायद ही कभी ऐसी सजा मिली हो । वह हमेशा आज्ञाकारिणी और नर्म तवियत की थी—शायद इसीलिए कि आज्ञा मान लेने मे आज्ञा भग करने से कम कष्ट है । पर अपनी नाराजी और नाफरमानी के होते हुए भी मै अपनी उस्तानी को दिल से चाहती थी और मैं जानती थी कि वह भी मुझे वहुत चाहती थी ।

वचपन मे मुझे अपने माता-पिता को देखने का वहुत कम मौका मिलता था । पिताजी हमेशा काम मे लगे रहते थे और मुझे वह सुबह थोडी देर और फिर शाम को दिखाई देते थे । माताजी को मै ज्यादा देखती थी, पर उनसे मेरा अधिक काम न रहता था । जव उनकी तवियत ठीक होती तो वह चुप वैठ नही सकती थी और हर दम घर के किसी-न-किसी काम मे लगी रहती थी, यद्यपि उनका छोटे-से-छोटा हुक्म मानने के लिए नौकरो की पूरी फौज घर मे मौजूद थी । मै उन्हे वहुत प्यार करती थी और उनकी सुन्दरता को तो मै पूजती थी, पर अक्सर यह भी होता कि मेरा वाल-हृदय इस विचार से दुखी होता कि वह मेरा उतना खयाल नही रखती, जितना मै चाहती थी कि वह रखे ।

मेरे भाई जवाहर उनकी आख के तारे थे और वह इस वात को छिपाती भी न थी कि उन्हे जवाहर से ज्यादा लगाव है । पिताजी को भी जवाहर से कुछ कम प्रेम, या उनपर कुछ कम गर्व न था; वल्कि शायद माताजी से भी वह इस वारे मे दो कदम आगे ही थे, पर इस वात को कम जाहिर होने देते थे, क्योकि उन्हे न्याय और इन्साफ का वहुत खयाल रहता था और वह नही चाहते थे कि हममे से किसी का यह विचार हो कि कोई दूसरा उनका ज्यादा लाडला है । पिताजी इस वात मे कामयाव भी होते थे । फिर भी हमेशा जवाहर की तारीफ सुनते-सुनते मुझे उनसे कुछ ईर्ष्या-सी होने लगी और मुझे इसका कोई अफसोस न था कि वह घर से दूर है ।

मेरी वहन स्वरूप वडी ही सुदर थी और हर किसीने उन्हे विगाड रखा था । फिर भी मुझे उनसे कभी भी ईर्ष्या नही हुई । मैने इस वात को मान लिया था कि कोई भी, जो इतना सुदर हो, जितनी कि वह है, स्वभावत उसे सभीको लाड-चाव करना चाहिए । और मै खुद भी उनको वहुत ज्यादा चाहती थी ।

मेरे वचपन मे हर काम का समय घडी की तरह वधा हुआ था । सुवह घोडे

की सवारी को जाती थी, जिसमे मुझे बहुत लुत्फ आता था और अब भी आता है। पिताजी बडे अच्छे घुडसवार थे और उनका अस्तबल भी बहुत अच्छा था। हम तीनो ने, यानी जवाहर, स्वरूप और मैंने, बचपन ही से, अर्थात् जब हमने चलना सीखा, उसीके साथ घुडसवारी सीखी और हम सबको इसका बडा शौक था, हालाकि अब हमे इस सवारी का मौका कम ही मिलता है। घुडसवारी के बाद अपने बडे बाग के कोने मे मै अपनी उस्तानी से सबक लेती थी। खाने के वक्त तक का सुबह का सारा समय इस तरह गुजर जाता था। भोजन के बाद मुझे कुछ देर आराम करना पडता था और यह बडी ही चिढानेवाली चीज थी। फिर पियानो बजाना सीखती थी। इसके बाद कुछ और पढ लेने के बाद पढाई खत्म होती थी। शाम को हम गाडी पर सैर करने जाया करते थे। इस गाडी मे दो बर्मी टट्टू जोते जाते थे, जो मेरे पिताजी को बडे ही पसद थे। इसके अलावा शाम का वक्त अक्सर बेलुत्फी से कटता था। उस जमाने मे सिनेमा का उतना रिवाज न था, जितना अब है, और मुझे बहुत कम सिनेमा देखने की इजाजत मिलती थी। कभी-कभी कोई सर्कस देख लेना या किसी मेले मे चले जाना बहुत काफी समझा जाता था। अब मेरे दोनों लडके, जिनमें से एक की उम्र सात साल और दूसरे की आठ साल की है, हिन्दुस्तानी और अमरीकन फिल्मो के बारे मे उससे बहुत ज्यादा जानते हैं, जितना मैं बारह साल की उम्र मे इस बारे में जानती थी। कभी-कभी मुझे साथ खेलने के लिए कुछ दोस्त मिल जाते थे, पर हमेशा ऐसा नही होता था। इसलिए मै अपने घर के बडे अहाते मे घूम-फिरकर अपना दिल बहलाती थी। जिदगी पर मुझे बडी हैरत भी होती थी, पर मै अपने विचार बस अपने ही तक रखती थी, क्योंकि मुझे बचपन ही में सिखाया गया था कि 'बच्चे इसलिए है कि लोग उन्हे देखे, इसलिए नही कि ज्यादा बाते करे और हर बात की खोज मे रहना और बहुत ज्यादा सवाल करना बुरी आदतो की निशानी है।' ऐसी हालत मे मुझे अपने विचार प्रकट करने का कभी मौका ही नही मिला और मेरे दिमाग मे सैकडो ऐसे सवालात थे, जिन्हे पूछने के लिए मै बेकरार थी—फिर भी मुझे इसका मौका ही नही मिलता था।

स्वरूप जब हमारे माता-पिता के साथ विलायत गई, तो वह पाच साल की थी और वही पिताजी ने हमारी उस्तानी मिस हूपर को इस काम पर रखा। वह बडी भली थी। उनकी तालीम भी अच्छी हुई थी और वह बडे अच्छे खानदान की थी। उनके खयालात पुराने थे और अनुशासन और पूरी तरह आज्ञापालन—इन बातो

पर वहुत जोर देती थी। स्वरूप से इस तरह से काम लेना ग्रासान था, पर मै, जिसने न सिर्फ ग्रपने पिताजी का, वल्कि ग्रौर भी कई पूर्वजो का हठ विरासत मे पाया था, उनके लिए एक वड़ी भारी समस्या थी। वडी-से-वडी सजा देकर भी मुझे दवाया नही जा सकता था, पर मामूली-सी झिडकी भी इस वात के लिए काफी होती थी कि मै पानी-पानी हो जाऊ ग्रौर जो काम कहा गया हो, वह शौक से करू। वदनसीवी से झिडकिया कम मिलती ग्रौर सजा ग्रक्सर मिला करती थी। इस तरह मै एकाकी वच्ची से एक ग्रजीव किस्म की लडकी वन गई, जो चाहती थी कि लोग उससे प्यार करे, उसका दिल वढाए, जो ज्ञान की भूखी थी, जिसे यह पुराने तरीके के सिवा किसी ग्रौर तरीके से नही मिलती थी। मेरे माता-पिता मेरे लिए कुछ ग्रपरिचित ही से थे ग्रौर ग्रपने भाई को तो मै जानती ही न थी। मेरी वहन ही एक ऐसी थी, जिनसे मै रोज मिलती थी। उनके ग्रलावा मेरी उस्तानी थी, जिन्हे मै कभी वहुत चाहने लगती थी ग्रौर जिनसे कभी-कभी मुझे वडी नफरत भी हो जाती थी।

मेरे जीवन मे सवसे पहली ग्रौर वडी घटना सन् १६१२ मे मेरे भाई का विलायत से वापस ग्राना था। मै उनसे विलकुल ग्रपरिचित थी ग्रौर यद्यपि उनके घर ग्राने की खवर से मुझे कुछ खास खुशी नही हुई थी, फिर भी मै उन्हे देखने के लिए वडी उत्सुक थी। उनके ग्राने से हफ्तो पहले मेरे माता-पिता ग्रपने वेटे ग्रौर वारिस के स्वागत की तैयारियो मे लगे हुए थे। माताजी ग्रपनी खुशी छिपा नही सकती थी ग्रौर काम मे वेहद मगन थी। वह दिन भर इधर-से-उधर फिरती थी ग्रौर इस इन्त-जाम मे लगी रहती थी कि जव उनका प्यारा वेटा घर लौटे, तो हर चीज दुरुस्त हो। मुझे याद है कि उन दिनो वह कितनी सुखी दिखाई देती थी ग्रौर उनके चेहरे पर वह रौनक ग्रौर तेज दिखाई देता, जो इससे पहले मैने कभी न देखा था। मेरे मन मे कभी-कभी इस विचार से खासी उलझन होती थी कि मेरी मा ग्रपने वेटे के लिए इतनी प्रेम-विह्वल है। ग्राज मै यह ग्रच्छी तरह समझ सकती हू कि उस वक्त उनके मन की क्या हालत रही होगी। मेरी वहन भी घर भर मे फुदकती फिरती थी ग्रौर ऐसा मालूम देता था कि उन्हे भी भाई का वडा इन्तजार है। यह चीज मेरे लिए ग्रौर भी परेशान करनेवाली थी। मैने निश्चय किया कि मै जवाहर को जरा भी न चाहूगी।

ग्राखिर वह शुभ दिन ग्रा ही गया ग्रौर घर भर मे दवी हुई उत्तेजना का जो वायुमण्डल था, उसने मुझ पर भी ग्रसर डाला। पर मुझ पर जो ग्रसर हुग्रा, वह

सिर्फ यह था कि मेरी उत्सुकता और बढी। वह गर्मियो का मौसम था और हम सब मसूरी मे थे। गाडी के आने का जो वक्त मुकर्रर था, उस वक्त हमने सडक पर घोडे की टापो की आवाज सुनी और सभी दौडकर जवाहर से मिलने आगे बढे। जब मैंने देखा कि एक सुदर नौजवान, जिसकी शक्ल् माताजी से बहुत-कुछ मिलती-जुलती है, घोडे पर बैठकर हमारी तरफ आ रहा है, तो मेरा दिल कुछ बैठ-सा गया। वह घोडे से कूद पडे और सबसे पहले मा के गले लगे, फिर एक के बाद एक सब लोगो से मिले। मै कुछ दूर खडी थी और मन मे सोच रही थी कि अपने इस नये भाई को, जो अचानक हममे आ गया था, चाहू या न चाहू। इधर मेरे मन मे बहुत-से विचार आ रहे थे—उधर जवाहर ने मुझे अपनी गोद मे उठा लिया और उनके ये शब्द मेरे कानो मे पडे, "अच्छा, तो यह है छोटी बहन ! अब तो यह काफी बडी हो गई है।" उन्होने मुझे प्यार किया और जिस तरह मुझे अचानक गोद मे उठा लिया था, उसी तरह नीचे उतार दिया, और दूसरे ही क्षण मेरे बारे मे सब कुछ भूल गये।

हमारी जान-पहचान के शुरू के कुछ महीने् कतई खुशी के नही थे। जवाहर बडे ही शरीर थे और दूसरो को छेडने मे उन्हे मजा आता था। जब उन्हे कोई और काम न होता, तो वह अपना वक्त मुझे छेडने में और तग करने मे खर्च करते थे। वह मुझसे ऐसे-ऐसे काम करवाते, जो मुझे या तो पसद न थे या जिनसे मै डरती थी। जब मुझे जरा भी उम्मीद न होती, वह मुझ पर तोहफो की बारिश कर देते और इतने प्यार से पेश आते थे कि उनसे ज्यादा देर तक चिढे रहना भी सभव न रहता। फिर भी मै उनसे कुछ दूर-दूर ही रही और उनसे मेरा सम्पर्क ज्यादा बढने न पाया।

प्रथम महायुद्ध ने मेरी शात और नीरस जिदगी पर कोई खास असर नही डाला। अपने घर मे मैंने जो कुछ फर्क देखा, वह सिर्फ यह था कि माताजी क्लबो मे ज्यादा जाने लगी और वहा बहुत-सी हिन्दुस्तानी और विदेशी औरतो के साथ बैठकर फौजियो के लिए चीजे बुनने लगी। मैंने यह भी देखा कि अक्सर पिताजी और जवाहर लडाई की खबरो से बडे परेशान हो जाया करते थे।

१६१६ में जवाहर की शादी हुई। महीनो पहले से इस शादी की तैयारिया हो रही थी, क्योकि शादी बडी घूमधाम से होनेवाली थी। हमारे घर मे दिन भर जौहरियो, व्यापारियो और दर्जियो का ताता बधा रहता था, और बहुत-से गुमाश्ते इन्तजाम की तफसील तय करने और उनकी व्यवस्था करने मे लगे रहते थे।

शादी दिल्ली मे होनेवाली थी, जहा दुलहन का मैका था। शादी के दिन से

एक हफ्ते पहले शुभ मुहूर्त्त देखकर बरात इलाहाबाद से रवाना हुई। पिताजी ने कोई सौ-एक मेहमान अपने साथ लिये और हम सब एक स्पेशल ट्रेन से, जो खूब सजाई गई थी रवाना हुए। दिल्ली मे सैकडो और मेहमान वरात के साथ हो गये। हमारे सब मेहमान कई घरो मे भी नही समा सकते थे, इसलिए पिताजी ने बहुत-से खेमे लगवा लिये थे और हफ्ते भर मे एक अच्छी-खासी बस्ती उस जगह बस गई थी। इस जगह को 'नेहरू-विवाह-नगर' कहा जाता था।

उन दिनो दिल्ली मे बडी सख्त सर्दी थी, पर मुझे यह मौसम बहुत पसद था और बडा लुत्फ आता था। मेरे रिश्ते के बहुत-से भाई-बहन, जिन्हे मैंने पहले कभी न देखा था, हिन्दुस्तान के अनेक हिस्सो से वहा आये थे और उनके साथ खेलने मे मुझे बडा अच्छा लगता था। हर रोज कही-न-कही दावत होती थी। दस दिन बाद बरात इलाहाबाद वापस लौटी और वहा भी दावतो का यह सिलसिला जारी रहा।

जवाहर बडे सुदर और बाके दूल्हा थे और कमला इतनी सुदर दुलहन कि मैंने ऐसी दुलहने कम ही देखी है। नवबर १९१७ मे उनकी इकलौती बेटी इदिरा पैदा हुई।

१९१७ तक हमारे जीवन मे कोई खास बात न थी। उस साल मेरी उस्तानी की उनके एक अग्रेज दोस्त के साथ मगनी हो गई और उनकी इच्छा थी कि शादी भी जल्दी हो जाय। उनके तमाम रिश्तेदार विलायत मे थे। इसलिए स्वभावत. गिर्जाघर मे उन्हे वर को सौपने का काम पिताजी ने किया। विवाह मे शामिल होने और दुलहन की सखी बनने की बात सोच-सोचकर मै उत्साह से भर उठती थी। पर उसीके साथ मुझे यह दुख भी था कि मेरी उस्तानी मुझसे अलग होनेवाली थी। उनकी जो भी बाते मुझे पसद न थी, वे सब मै भूल गई। मुझे सिर्फ वह प्रेम और निगरानी याद रही, जो वह इतने साल तक करती रही। उन्होने पूरे बारह बरस हमारे साथ गुजारे थे और वह हमारे खानदान की एक सदस्य ही समझी जाती थी। हम सबको वह बहुत ही पसद थी और वह भी हमे बहुत चाहती थी।

उनकी शादी का दिन आ गया। मै बहुत दुखी हुई। हर चीज की सुदर व्यवस्था थी और पिताजी ने उनके लिए जो कुछ किया था, उससे वह बहुत खुश थी। शादी के बाद वह अपनी सुहागरात मनाने चली गई और मै कई दिनो तक शोकमग्न रही। मेरे छोटे जीवन मे पहली बार मुझे इतना भारी सदमा हुआ, जिससे मेरा दिल टूट गया था। पर बच्चे दुख भी जल्द ही भूल जाते है और मै भी उनकी गैर-

हाजिरी की आदी हो गई। बहुत जल्द मुझे उस आजादी मे आनद आने लगा, जो मुझे अब मिली थी, क्योकि अब मै वह सब कुछ कर सकती थी, जो करने को मेरा मन कहता था और अब अपने सारे काम मुझे अपनी मर्जी से करने की छूट मिल गई थी।

मेरी हमेशा से यह इच्छा रही थी कि मै मदरसे जाऊ और दूसरे बच्चो के साथ पढू, पर मेरे पिताजी को यह विचार कभी पसद न आया। वह समझते थे कि ठीक तरीका यही है कि अकेले मे बडी शान के साथ उस्तानी से घर पर ही पढा जाय। उस जमाने मे नौजवान लडकियो के लिए जरूरी तालीम यह थी कि वे पियानो या कोई और बाजा बजाना सीखे और लोगो के साथ अच्छी तरह मिलना-जुलना और बात करना जानती हो। मेरी बहन कभी मदरसे नही गई थी और उनकी सारी तालीम घर पर ही हुई थी। मेरा खयाल है कि मदरसे जाने की उनकी इच्छा कभी हुई भी नही। जब हमारी उस्तानी की शादी हो गई, तो मैने इस बात की बडी कोशिश की कि पिताजी मुझे मदरसे जाने की इजाजत दे दे। पहले तो वह अपनी बात पर अडे रहे और कहते रहे कि मेरे लिए दूसरी उस्तानी रख दी जाय। कई उस्तानिया आई, पर खुशनसीबी से उनमे से एक भी टिकी नही। आखिर जैसे-तैसे अनिच्छापूर्वक पिताजी ने इजाजत दे दी और मै मदरसे जाने लगी। मेरे लिए जो मदरसा पसद किया गया, वह सबसे अच्छा समझा जाता था—एक ऐसी जगह, जिसमें छोटी लडकिया और लडके पढते थे। इस स्कूल मे मेरे जाने से पहले वहा ज्यादातर अग्रेज बच्चे पढा करते थे, मगर बाद मे बहुत-से हिंदुस्तानी बच्चे भी शामिल हो गये।

मेरे लिए यह एक नये जीवन की शुरुआत थी और मुझे उसके एक-एक क्षण मे मजा आता था। खेलने और पढाई मे मेरा सारा समय कट जाता था और मुझे कभी यह विचार भी नही आता था कि मै अकेली हू। जीवन बडा ही भला मालूम होता था। मेरे बचपन के सबसे ज्यादा सुखी दिन वही थे, जो मैने स्कूल मे गुजारे। कुछ साल के बाद वह जमाना अचानक खत्म हो गया।

और इस तरह मै सुख और शाति के वातावरण मे ऐसे घर मे बडी होती रही जो मुझे बहुत पसद था।

: २ :

ओह ! तब और अब में इतना फर्क !

—कोलरिज

मेरी उस्तानी के चले जाने के बाद स्वरूप मेरी देख-भाल करती रही, क्योकि माताजी बहुत कमजोर थी और यह काम उनसे हो नही सकता था। स्वरूप शायद ही कभी मुझसे सख्ती बरतती थी और अक्सर यही होता था कि मेरा जो जी चाहता था, मैं करती थी। इसमे उन्हे भी कम तकलीफ होती थी और मेरे लिए भी यही ठीक था। मुझे कविता बहुत पसद थी और स्वरूप को भी। हम अक्सर शाम का सुहाना वक्त बाग मे इस तरह गुजारती कि वह कोई कविता जोर से पढती और मैं ध्यान-मग्न होकर सुनती रहती। हम दोनो मे ऐसा दोस्ती का सुन्दर रिश्ता था, जो बहुत कम दिखाई देता है। मेरे बचपन के उन दिनो मे स्वरूप पथ-प्रदर्शक, मेरी गुरु और मेरी मित्र—सभी कुछ थी।

सन् १९२१ मे मेरी बहन की शादी हो गई। उनका विवाह बडी धूम-धाम से पूरे काश्मीरी तरीके से रचाया गया। हमारे यहा सैकडो मेहमान, दोस्त और रिश्तेदार ठहरे थे और काग्रेस की पूरी वर्किंग कमेटी भी थी, जिसकी बैठक उन्ही दिनो इलाहाबाद मे हो रही थी। वे दिन मेरे लिए बडी शान के थे, क्योकि कोई मुझे पूछनेवाला ही न था और न यह कहनेवाला कि यह करो या यह न करो। बहन की जुदाई के खयाल से मुझे दुख होता था, पर साथ मे शादी के उत्सव से खुशी भी थी।

स्थानीय काग्रेस कार्यकर्ता इस मौके पर एकत्र हुए बडे-बडे काग्रेसी नेताओ की उपस्थिति से लाभ उठाना चाहते थे, इसलिए उन्होने एक जिला सम्मेलन का आयोजन किया था। आस-पास के गावो के किसान बडी सख्या मे इसमे शामिल होने और इलाहाबाद देखने के लिए आये थे। हालाकि आमतौर पर शहर मे कोई हलचल नहीं रहती, पर इस मौके पर चारो तरफ बडी रौनक और चहल-पहल दिखाई देती थी। शहर मे रहनेवाले अग्रेजो पर इसका बडा अजीब असर पडा। वे देश की राजनैतिक जाग्रति से बडे परेशान थे और उन्हे किसी हिंसात्मक विद्रोह की आशका

थी। उस वक्त हम उनकी आशकाओ और उनके इस अनोखे रुख का मतलव नही समझ सकते थे। परन्तु वाद मे हमे पता चला कि १० मई, जिस दिन मेरी वहन की शादी होनी थी, उसी दिन इत्तिफाक से १८५७ के स्वातत्र्य-युद्ध की सालगिरह भी थी।

इन्ही दिनो मैंने निश्चय किया कि मास खाना छोड दू। मुझे गोश्त वहुत पसद था और एक रोज गाधीजी के सेक्रेटरी महादेवभाई देसाई ने मुझे खाना खाते देखा। उन्हे यह देखकर वडी परेशानी हुई कि मेरे सामने कई किस्म का पका हुआ गोश्त रखा था। उन्होने वही मुझे शाकाहारी वनने का उपदेश दिया। मै आसानी से माननेवाली न थी, पर उसके वाद भी कई दिन तक, महादेवभाई से जहा कही मिलती, वह यही उपदेश देते रहते। शादी की उन खुशियो मे मैंने गोश्त छोड दिया, जिससे मेरी माताजी के सिवा घर के और सव लोगो और रिश्तेदारो को वडा दुख हुआ। माताजी को मेरे निश्चय से वडी खुशी हुई। उन्हे गोश्त नापसद था और वह अपनी खुशी से कभी भी उसे छूती न थी। उनकी वीमारी के दिनो मे उन्हे मजबूरी मे गोश्त का शोरवा या और किसी शक्ल मे गोश्त खिलाया जाता था। पूरे तीन साल मैंने गोश्त को हाथ नही लगाया, यद्यपि मेरा मन अक्सर खाने को चाहता था। फिर मैं वडे दिनो के त्यौहार का एक हफ्ता अपने कुछ भाई-वहनो के साथ गुजारने गई। उन सवको गोश्त खाते देखकर भी न खाना वहुत मुश्किल था और आखिर मेरा निश्चय टूट ही गया।

स्वरूप के घर से चले जाने के वाद मैं अकेली रह गई और मेरा जी घवराने लगा। मेरी भाभी कमला, जिनकी उम्र स्वरूप के वरावर थी, अव हमारे घर मे थी और उन्होने कुछ हद तक स्वरूप की जगह ले ली थी। यही वह जमाना था, जव मैं पिताजी से ज्यादा मिलने लगी और उन्हे अच्छी तरह पहचान सकी। उन्होने भी, यह देखकर कि स्वरूप की जुदाई मुझे अखर रही है, अपना ज्यादा समय मुझे देना शुरू किया। मैं उन्हे समझने और उनकी भक्ति करने लगी ही थी कि वह पहली वार गिरफ्तार हुए और हमारी दोस्ती का यह छोटा-सा जमाना अचानक खत्म हो गया।

मैं गाधीजी से पहली वार सन् १९१९ के शुरू मे मिली। वह पिताजी के वुलाने पर कुछ सलाह-मशविरा करने इलाहावाद आये थे। मैंने गाधीजी के वारे मे, जिन्हे सव प्यार से 'वापू' कहते थे, वहुत-कुछ सुना था, पर मुझे वह कुछ ऐसे दिखाई दिये, जैसे वे लोग, जिनके किस्से हम पुराणो मे पढते हे। मै उस वक्त वहुत छोटी

थी और वे सब बाते नही समझ सकती थी, जो गाधीजी कहते और करते थे। उनके विचार कुछ खयाली मालूम होते थे। जब मै उनसे पहली बार मिली, तो मुझे वह दिलचस्प नही मालूम दिये। मेरा खयाल था कि मै किसी लबे कद के और मजबूत शरीरवाले आदमी से मिलूगी, जिसकी आखो मे चमक होगी और जिसके कदम मजबूती से पडते होगे। पर जब मै उनसे मिली, तो मैने देखा कि वह एक दुबले-पतले और भूख से कमजोर आदमी जैसे नजर आये। उन्होने एक लगोटी लगा रखी थी, उनका शरीर कुछ झुका हुआ था, और एक लकडी का सहारा लिये हुए थे। वह बडे ही दीन और सीधे-सादे दिखाई देते थे। उन्हे देखकर मुझे बडी ही मायूसी हुई। मै सोचने लगी कि कैसा छोटा-सा आदमी है यह, जिससे बडे-बडे कामो की आशा रखी जाती है और जो हमारे देश को विदेशियो की गुलामी से आजाद करानेवाला है!

जलियावाला बाग के अत्याचारो के बारे मे मैने बहुत-कुछ सुना और पढा भी था और यद्यपि उम्र मे मै छोटी थी, फिर भी मै उन अत्याचारो का बदला लेना चाहती थी; पर मेरी बदला लेने की कल्पना यह थी कि उसी तरह अत्याचार करके खून का बदला खून से लिया जाय। जब मैने बापू के अहिसा के विचार सुने, तो मुझे वे सब खपती बाते मालूम हुई और मै सोचने लगी कि इन बातो पर तो कोई एक आदमी भी अमल नही कर सकता, फिर पूरे देश का तो कहना ही क्या! इसके अलावा मेरा स्वभाव भी कुछ विपरीत-सा है। जब मैने यह देखा कि घर भर मे करीब-करीब सभी बापू की पूजा करते है और उनकी छोटी-से-छोटी आज्ञा के पालन के लिए तैयार रहते है, तो मैने उनकी तरफ कुछ लापरवाही बरतनी शुरु की, जिससे मेरी माताजी को बहुत दुख हुआ! दिल से मै बापू को पसद करती थी, परन्तु औरो की तरह मैने उनको साधु पुरुष या महात्मा मानने से इन्कार कर दिया।

मै उनको जितने करीब से देखती गई, उनकी ओर उतनी ही ज्यादा झुकने लगी। कभी-कभी तो मुझे ऐसा मालूम देता था कि उनका किसी दूसरी ही दुनिया से सबध है। फिर भी सत्य तो यह था कि वह इसी लोक के थे और ऐसी चीजो को समझ सकते थे और पसद कर सकते थे, जो इसी धरती की है। उन्होने अपनी मीठी नजर और अपनी मन मोह लेनेवाली मुस्कराहट से मुझे भी इसी तरह जीत लिया, जिस तरह वह लाखो-करोडो इन्सानो को जीत चुके थे—केवल थोडे समय ही के लिए नही, बल्कि जिदगी भर के लिए, क्योकि बापू को जब कोई अपनी भक्ति एक बार सच्चे दिल से अर्पण करता है, तो फिर उसे वापस ले ही नही सकता।

१९२० मे गाधीजी ने सत्याग्रह का आदोलन शुरु किया और उसके शुरू होते ही न सिर्फ मेरा जीवन, बल्कि हमारे पूरे खानदान का जीवन और सैकडो और लोगो का जीवन पूरी तरह बदल गया। इस आदोलन का एक अग अग्रेजी स्कूलो का बहिष्कार था। मै अपनी पढाई और अपनी छोटी-सी दुनिया मे इतनी डूबी हुई थी कि मुझे उस तूफान का पता भी न था, जो बहुत जल्द आनेवाला था और मै उस परिवर्तन से भी बेखबर थी, जो खुद मेरे ही घर मे हो रहा था। इसलिए जब एक दिन पिताजी ने मुझे बुला भेजा और तमाम बाते समझाकर मुझसे कहा कि अब मुझे स्कूल छोड देना चाहिए, तो मुझे बडी हैरत हुई और मेरे दिल पर चोट-सी लगी। स्कूल मे मेरा दिल लगा हुआ था और बहुत-से साथियो से मेरी दोस्ती भी हो गई थी। इस कारण यह जानते हुए भी कि अब स्कूल छोड देना ही ठीक होगा, स्कूल छोडने के विचार ने कुछ समय के लिए मुझे दुखी बना दिया। उसी वक्त किसी दूसरे स्कूल मे दाखिल होना भी ठीक न था। इसलिए पिताजी ने ऐसे शिक्षको का प्रबध कर दिया, जो घर पर आकर मुझे पढाये। कई हफ्ते मेरी तबीयत उचाट-सी रही, क्योकि मेरे पास काफी काम न था, पर उन दिनो समय जल्दी बीत जाता था और बहुत जल्द मै भी उन घटनाओ के चक्कर मे फस गई, जो हमारे देश का पूरा नक्शा बदलनेवाली थी।

रोजाना कोई-न-कोई नई बात होती थी, जिससे मेरा नीरस और निश्चित कार्यक्रम से पूर्ण एकागी जीवन नये रूप और नई जिंदगी मे बदल जाता था—ऐसी नई जिंदगी मे, जिसमे इस बात का पता ही न होता था कि अब आगे क्या होनेवाला है। जवाहर एकदम गाधीजी के साथ हो जाना चाहते थे, पर पिताजी चाहते थे कि वह इस मैदान मे कूदने से पहले उनके तमाम पहलुओ पर अच्छी तरह सोच ले। जवाहर अपनी बाबत फैसला कर चुके थे और उन्होने सत्याग्रह-आदोलन मे शामिल होने का निश्चय कर लिया था। जवाहर ने यह फैसला काफी सोच-विचार और मानसिक द्वद्व के बिना नही किया था। जवाहर समझते थे कि गाधीजी के नेतृत्व मे सत्याग्रह ही आजादी हासिल करने का एक रास्ता है। पर बापू (गाधीजी) के साथ शामिल होने के लिए पिताजी की पूरी रजामदी प्राप्त करना आसान न था। पिताजी को गाधीजी के विचार जल्द पसद नही आते थे, और जिस आदोलन की बात हो रही थी, उस पर उन्होने काफी सोचा था। फिर भी सच तो यह है कि वह चीज उन्हे कुछ बहुत पसद न थी। उस समय उनकी समझ मे यह बात न आती थी कि

जेल जाने से क्या मतलब हासिल होगा और न यह पसद करते थे कि जवाहर अपने-आपको गिरफ्तारी के लिए पेश करे। अभी जेल-यात्रा शुरू नही हुई थी। पिताजी जवाहर को बहुत ज्यादा चाहते थे और केवल यह विचार ही कि उनका बेटा जेल जाय और तकलीफे सहे—उनके लिए काफी परेशान करनेवाला था।

बहुत दिनो तक पिताजी और जवाहर दोनो के दिलो मे कश-मकश चलती रही। दोनो मे बडी लबी बहसे होती थी और कभी-कभी वे एक दूसरे से गरम बाते भी कर जाते थे। दोनो ने ये दिन और राते काफी तकलीफ और मानसिक परेशानी मे गुजारी और हर एक अपने-अपने तरीके से दूसरे को समझाने और कायल करने की कोशिश करता रहा। जवाहर का बापू का साथ देने का निश्चय देखकर पिताजी व्याकुल होते थे। बाद मे हमे पता चला कि वह जमीन पर सोने की कोशिश करते थे, ताकि यह मालूम कर सके कि इसमे क्या तकलीफ होती है; क्योकि वह समझते थे कि जेल जाने पर जवाहर को जमीन पर सोना पडेगा। हम सबके लिए ये दिन बडे ही दुख और कष्ट के थे, खासकर माताजी और कमला के लिए, जो इस बात को बरदाश्त नही कर सकती थी कि राजनीति और अतहीन बहसो से पिता और पुत्र मे रजिश पैदा हो। घर का वातावरण बडा ही गभीर बन गया था और हममे से किसीको एक शब्द भी कहने की हिम्मत न होती थी, क्योकि हरदम पिताजी के खफ़ा होने या जवाहर के चिढ जाने का डर लगा रहता था।

पजाब की घटनाओ और जलियावाला बाग के दर्द भरे किस्से ने पिताजी को बडी हद तक जवाहर के विचारों से सहमत बना दिया। पुत्र की सत्याग्रह पर अटूट श्रद्धा और इकलौते बेटे पर उनका असाधारण प्रेम, इन दोनो चीजो ने मिलकर पिताजी के निश्चय को मजबूत बना दिया। उन्होने जवाहर का साथ और गाधीजी के पीछे चलने का फैसला कर लिया। पर ऐसा करने से पहले उन्होने अपनी भरी-पूरी वकालत छोड दी। इस चीज ने हमारे जीवन को, जो उस वक्त बडे ही ऐशो-आराम का था, बदलकर सादगी और कुछ कष्ट का जीवन बना दिया।

पिताजी ने लाखो रुपये पैदा किये थे और खुले हाथो खर्च भी करते रहे थे। उन्होने वक्त पडने पर खर्च के लिए कुछ भी नही रख छोडा था। जब उन्होने वकालत बन्द कर दी, तो हमे फौरन ही घर मे कुछ तब्दीलिया करनी पडी, क्योकि नई आमदनी के बिना उस शान से रहना मुमकिन ही न था, जिस शान से हम अबे-

तक रहते आये थे। पहला काम जो पिताजी ने किया, वह अपने घोडे और गाडिया वेच देना था। उनके लिए यह काम आसान न था, क्योकि वह अपने घोडो को वहुत चाहते थे और उन्हे उन पर गर्व था। पर उन्हे यह काम करना ही पडा। फिर हमे अपने नौकरो की उस फौज मे से, जो घर मे थी, वहुत-सो को अलहदा करना पडा और हर तरीके से खर्च घटाना पडा। अव शानदार दावते वद हो गई। दो-तीन वावरचियो की जगह एक वावरची रह गया और वेरे और खानसामे सव निकाल दिये गये। हमारे चीनी के कीमती वर्तन और दूसरा वेश-कीमती और सुदर सामान वेच दिया गया और सिर्फ कुछ नौकरो और रोज के जीवन मे ऐश-आराम के पहले से वहुत कम सामान मे काम चलाना हमने सीख लिया। मै उस समय इतनी छोटी थी कि मुझपर इन वातो का ज्यादा असर न पडा, पर घर के और इतने लोगो, खासकर मेरे माता-पिता, को इससे जरूर कष्ट हुआ होगा।

हमारे जीवन मे जव ये सव वाते हुई, उसके कुछ ही दिन पहले एक अजीव घटना हुई। हमारे मकान के पीछे और कई छोटी कोठरिया थी, जिनमे कोयला, ईंधन और दूसरी चीजे भरकर रखी जाती थी। इनमे से एक कोठरी मे, जहा लकडी भरी रहती थी, एक वडा भारी काला नाग रहता था। मुझे जवसे वचपन की वाते याद है, यह नाग उसी जगह था। वह किसीको छेडता नही था और हमारे नौकर वडी रात को भी वे-खटके वहा चले जाते थे। अक्सर यह भी देखा जाता था कि यह नाग वाग मे या पीछे की कोठरियो के आस-पास फिर रहा है। उससे न तो कोई डरता था, न किसीको उसकी पर्वाह थी। लोगो का विश्वास था कि जवतक यह नाग मौजूद है और हमारे खानदान के हित की रक्षा कर रहा है, उस वक्त तक हमारे घर पर कोई आफत नही आयगी और हम लोग धन-दौलत और ऐश-आराम से खेलते रहेगे।

सन् १६२० मे एक वार, पिताजी के वकालत वद करने से कुछ पहले, एक नये नौकर ने, जिसे यह पता नही था कि इस घर मे नाग रहता है, एक दिन शाम के वक्त इस नाग को देखा। वह वहुत घवराया और कुछ और लोगो की मदद से उसने इस नाग को मार डाला। हमारे तमाम पुराने नौकर इस वात से डर गये और हमारी माताजी भी डरी, पर जो होना था वह हो चुका था। उसके वाद ही अनेक परिवर्तन हुए। हमारा शानदार घर एक छोटे और सीधे-सादे घर के रूप मे वदल गया और जवाहर और पिताजी जेल चले गये। हमारे नौकर-चाकर कहने

लगे कि हमपर ये सब मुसीबते (जिसे वे सब वडा दुर्भाग्य समझते थे) नाग की मौत से ही आई है।

पिताजी के लिए असहयोग का मतलब यह था कि अपने रहन-सहन का पुराना तरीका बिलकुल खत्म कर दे और साठ साल की उम्र मे एक नया तरीका अख्तियार करे। इसका मतलब सिर्फ पेशे के और राजनैतिक साथियो से ही सबध तोडना नही था, बल्कि जिन्दगी-भर के ऐसे दोस्तो से भी सबध तोडना था, जो उनसे या बापू से सहमत नही हो सकते थे। इसका अर्थ था बहुत-से सुखों को तज देना, क्योकि वह तो हमेशा ऐश-आराम ही मे रहे थे। पिताजी को इस बात का विश्वास हो गया कि यही सीधा और सच्चा रास्ता है, तो वह पूरी तरह और मन से इस नये रास्ते पर चल पडे और बीते हुए समय का विचार कभी मन मे न रहने दिया।

दिन-पर-दिन पिताजी और जवाहर दोनो राजनीति मे और गहरे पडते जा रहे थे। हमारा घर, जहा जीवन पहले बहुत ही आसान था, अब उसमे बराबर गडबड रहने लगी। देश के सब भागो से काग्रेस-कार्यकर्ता हमारे यहा आने लगे, जो कुछ रोज ठहरकर काम की बातो पर बहस करते थे। करीब-करीब रोज ही सभाए होती और आने-जानेवालो का एक ताता बधा रहता था। मै इस बात की आदी थी कि मेरे माता-पिता से मिलने के लिए बहुत-से लोग आये, पर वे लोग दूसरी तरह के हुआ करते थे। वे बडी शानदार मोटरो या घोडागाडियो पर आते थे और उनमे से हर एक इस कोशिश मे रहता था कि दूसरो के मुकाबले मे अपनी शान जतायें। जब सत्याग्रह का आन्दोलन शुरू हुआ, तो हमारे बहुत-से अमीर दोस्तो ने हमारे घर आना बद कर दिया, और जहा पहले मालदार और रईस लोग दिखाई देते थे, वहा अब खादीधारी और सीधे-सादे गरीब स्त्री-पुरुष नजर आने लगे। इन आनेवालो मे से हर एक के दिल मे इस बात का निश्चय होता था कि वह अपने देश की सेवा करे, उसे गुलामी से छुडाये और यदि जरूरत हो, तो इस कार्य मे अपनी जान तक दे दे।

सन् १९२१ मे बात और आगे बढी और ब्रिटिश सरकार ने आम गिरफ्तारिया शुरू कर दी। हमारे देशवासी इसके लिए तैयार ही थे और वे हजारो की सख्या मे इकट्ठे होने लगे। उस वक्ततक जेलखाना एक अच्छी तरह समझ न आनेवाली और अपरिचित जगह थी, हालाकि बहुत जल्द उनमे से बहुतो के लिए जेलखाना उनका दूसरा घर ही बननेवाला था। इन्ही दिनो प्रिंस आफ वेल्स, जो हिन्दुस्तान

आये थे, इलाहाबाद आनेवाले थे। उनके आने से कुछ रोज पहले पिताजी के नाम इलाहाबाद के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट का एक खत आया, जिसमे उनमे कहा गया था कि अपनी जगह के इस्तेमाल की इजाजत दे दे, अर्थात् दरवाजे निश्चित समय पर वन्द कर देने दिया करे। जो लोग वहा आये उनके दाखले वगैरह के वारे मे भी कुछ शर्तें थी। पिताजी ने इस पत्र का जवाब दिया कि मजिस्ट्रट को इसका कोई हक नही है कि इस वात मे दखलदाजी करें कि मै अपनी जायदाद किस तरह इस्तेमाल करता हू। मै उसका जो इस्तेमाल कानून से ठीक समझूगा, करूगा। पिताजी ने मजिस्ट्रेट को इस वात का विश्वास दिलाया कि ऐक असहयोगी की हैसियत से मै कोशिश करूगा कि प्रिंस आफ वेल्स को, जव वह इलाहावाद मे हो, किसी तरह का नुकसान न पहुचे। इस विश्वास दिलाने का इनाम पिताजी को यह मिला कि उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया। एक शाम हमने सुना कि आज गिरफ्तारिया होनेवाली है और तमाम नेताओ को और वडे-वडे काम करनेवालो को पकड लिया जायगा। वह ६ दिसम्वर, १९२१ का दिन था। उसी दिन शाम को पिताजी और जवाहर की गिरफ्तारी के वारट लेकर पुलिस पहली वार आनन्द-भवन आई। उसके वाद तो वह वरावर हमारे घर आती रही है, कभी हमारे घर के किसी आदमी को गिरफ्तार करने या कल्पित गैर-कानूनी साहित्य की खोज मे तालाशी लेने के लिए। अक्सर वह इसलिए भी आती थी कि हमपर जो जुर्माने किये जाते थे, उनकी वसूली मे हमारी मोटरे व हमारा वहुत-सा फर्नीचर जब्त कर ले।

उस शाम पुलिस के आने से हमारे घर मे अच्छी-खासी हलचल मच गई। हमारे कुछ पुराने नौकर पुलिस के आने से वहुत खफा थे और कहते थे कि उन्हे पीटकर घर के अहाते के वाहर कर देना चाहिए। पर माताजी ने उन्हे ताकीद कर दी कि ऐसी बेवकूफी न करे। हम सव, पिताजी और जवाहर के सिवा वाकी सव, इन अचानक गिरफ्तारियो से वडे दुखी हुए। यह विचार ही हमे परेशान कर रहा था कि जिनसे हमे प्रेम है, उन्हे जेलखाने के सीकचो के पीछे डाला जा रहा है। हम नही जानते थे कि उन्हे वहा क्या-क्या तकलीफे उठानी होगी। माताजी को सवमे ज्यादा दुख था, क्योंकि पिछले कुछ महीनो मे वरावर जो तकलीफे हो रही थी, वह उनके लिए एक डरावने सपने की तरह थी, जिनको वह ठीक से समझ भी न सकी थी। पर वह एक वहादुर पत्नी और उससे भी ज्यादा एक वहादुर मा थी। वह किसी तरह भी हमारे पर यह जाहिर नही होने देती थी कि उनके [illegible]

है। पिताजी और जवाहर ने तैयार होकर हम सबसे विदा ली। उन्हे पुलिस की गाडी मे डिस्ट्रिक्ट जेल पहुचाया गया। माताजी और कमला जब अपने पतियो से जुदा हुई, तो बहादुरी मे मुस्कराई। यद्यपि उनकी मुस्कराहट बहादुरी की थी, तथापि उनके दिलो मे रज और अकेलापन था। जब पुलिस की गाडी नजरो से ओझल हो गई, तो हम लोग घर मे वापस लौटे। वही घर, जो कुछ समय पहले जीवन और आनन्द से ओत-प्रोत था, अब अचानक इतना सूना हो गया कि उसमे से सारी खुशी गायब होगई।

पिताजी, जवाहर और दूसरे साथियो पर ७ दिसबर, १९२१ को डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के सामने मुकदमा चलाया गया। सरकारी वकील, जिन्होने मुकदमे की कार्रवाई शुरू की, हिन्दुस्तानी थे और पिताजी के पुराने दोस्त और साथी थे। उन्हे इतनी हिम्मत नही हुई कि पिताजी के मुकदमे की पैरवी करने से इन्कार करते या अपनी नौकरी से इस्तीफा देते। पर मैने कभी किसी आदमी को शर्म से इतना पानी-पानी होते हुए और परेशान नही देखा, जितना इस मुकदमे के वक्त सरकारी वकील दिखाई दे रहे थे। पूरी कर्रवाई मे उन्होने अपनी नजर दूसरी तरफ ही रखी और एक बार भी आख उठाकर पिताजी की तरफ नही देखा। उन्होने मुकदमे का सारा काम धीमी आवाज से किया और कभी-कभी तो उनकी आवाज ठीक-से सुनाई भी नही देती थी। इससे पहले करीब-करीब हर रोज वह पिताजी से मिला करते थे, उनकी मेहमान-नवाजी मे शरीक होते थे और उन सब बातो से फायदा उठाते थे, जिनसे एक मित्र फायदा उठाता है। पर जब पिताजी पकडे गये, तो ये सब बाते भुला दी गई। पिताजी और जवाहर दोनो को छ-छ महीने की सादी कैद की सजा सुनाई गई। पिताजी ने सजा का हुक्म सुनकर अपने साथियो के नाम यह सदेश भेजा

"जबतक मै आप लोगो के बीच मे रहा, मैने अपनी योग्यता के अनुसार आपकी सेवा की। अब मुझे यह सौभाग्य और गौरव प्राप्त हुआ है कि अपने इकलौते बेटे के साथ जेल जाकर अपनी मातृभूमि की सेवा करू। मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि बहुत जल्द हम आजाद इन्सानो की तरह फिर एक-दूसरे से मिलेगे। मुझे आपसे जुदा होते वक्त केवल एक ही बात कहनी है—जबतक स्वराज्य प्राप्त न हो, अहिंसात्मक असहयोग का आदोलन जारी रखिये। सैकडो और हजारो की सख्या मे स्वय-सेवक बनिये। हिंदुस्तान मे इस समय आजादी के सिर्फ एक ही

मदिर, यानी जेलखाने की यात्रा के लिए बराबर बिना किसी रोक-टोक के आगे बढते रहिये। प्रतिदिन जेल-यात्रियो की यह लहर बढती ही रहे—अलविदा!"

यह एक नये जीवन की शुरुआत थी—अनिश्चितता, कुर्बानी, दिली दर्द और दुख का जीवन। हम जिस मकसद के लिए लड रहे थे, वह इतना बडा और बुलद था कि उसकी खातिर सब कुछ कुर्बान करना भी मुनासिब मालूम होता था। हममे से हर एक को पिताजी और जवाहर की जुदाई नापसद थी, फिर भी हमे गौरव था कि उन्होने देश की जरूरत के मौके पर उसका साथ किया और अपने कर्तव्य का पालन किया।

उनकी गिरफ्तारी के बाद पुलिस अक्सर हमारे घर आती रही। पुलिस की कुछ आदत-सी हो गई थी कि कुछ दिन बाद हमारे घर आये और पूरे घर की तलाशी ले। जब कभी वह आती, किसी-न-किसी जुर्माने के बदले मे घर की कोई चीज जब्त कर लेती थी। उसे इस बात की पर्वाह न थी कि वह कौन-सी चीज ले जा रही है। सिर्फ पाच सौ रुपये जुर्माने के बदले मे वह एक कीमती कालीन उठाकर ले गई और इसकी उसके दिल पर ज़रा भी चोट नही लगी। शुरू-शुरू मे मै गुस्से और नफरत से खौलती थी। फिर मुझे इन बातो को बर्दाश्त करने की आदत हो गई।

पिताजी और जवाहर जेल ही मे थे कि अहमदाबाद मे काग्रेस हुई। गाधीजी उस वक्ततक जेल से बाहर थे और उन्होने माताजी और कमला से कहा कि वे काग्रेस के जलसे मे शरीक हो। इस पर हमने, यानी माताजी, कमला, उनकी छोटी बच्ची इदिरा और मै, सबने अहमदाबाद जाने का फैसला किया। हमारी कुछ रिश्ते की बहने भी, जिनके पति जेलो मे थे, हमारे साथ हो गई। हमने पहली बार तीसरे दर्जे मे सफर किया। यह एक अजीब तजुर्बा था, हालांकि आगे चलकर हमे इसकी भी आदत हो गई। यह सफर आरामदेह नही था और बहुत लबा भी था। फिर भी था दिलचस्प। कम-से-कम मुझे तो इसमे बडा मजा आया। इस सफर मे मैने बहुत-कुछ सीखा और पहली बार मुझे अदाजा हुआ कि आम जनता के दिल मे गाधीजी और काग्रेस के दूसरे नेताओ के लिए कितनी श्रद्धा और प्रेम है। हर स्टेशन पर, चाहे गाडी वहा रात को बडी देर बाद पहुची हो, चाहे सुबह बहुत जल्दी, लोगो के बडे-बडे जत्थे हमारे डिब्बे को घेर लेते थे। वे हमारे डिब्बे को फूलो और खाने-पीने की चीजो से भर देते थे और बीसियो छोटे-मोटे और सीधे-सादे तरीको से इस बात को जाहिर करने की कोशिश करते कि आम जनता

के लिए स्वराज्य हासिल करने के लिए उनके नेता जो कुर्बानिया कर रहे है उन्हे लोग कितना ज्यादा पसद करते है। इन लोगो की श्रद्धा और अपने प्रति प्रेम को देखकर मुझे हैरत होती थी, क्योकि उन्हे इस बात का निश्चय था कि हम उन्हे विदेशियो की गुलामी मे छुडाने मे सहायता दे रहे है। अपनी किस्मत का फैसला वे बे-खटके और बडी खुशी से एक छोटे-से व्यक्ति के हाथ मे छोडने के लिए तैयार थे। और यह व्यक्ति थे गाधीजी। आखिर एक ऐसे सफर के बाद, जिसे हम कभी न भूलेगे, हम साबरमती आश्रम पहुचे, जिसके बारे मे हमने बहुत-कुछ सुना था, पर जिसका प्रत्यक्ष परिचय हमे जरा भी न था। गाधीजी ने बडे ही प्रेम से हमारा स्वागत किया और पिताजी और जवाहर के स्वास्थ्य के बारे मे पूछ-ताछ करने के बाद उन्होने किसीसे कहकर हमे अपने कमरो मे भिजवा दिया। हम विद्यार्थियो के होस्टल-जैसी जगह मे ठहरे थे, जो बहुत ही सीधी-सादी, फर्नीचर से बिलकुल खाली और कुछ आराम देनेवाली न थी। हम सबको एक साथ एक बडे कमरे मे सोना पडता था। सिर्फ माताजी के लिए एक अलग कमरा था। दिसबर का महीना, कडाके की सर्दी, फिर भी हमे सवेरे ४ बजे प्रार्थना के लिए उठना पड़ता था। उसके बाद हम नहाते, खुद अपने कपडे धोते। कुछ समय बापू के साथ गुजारते और फिर दिन-भर जो भी चाहते, करते। शुरू के कुछ दिनो तक इतने सबेरे उठने मे बडी तकलीफ-सी मालूम होती थी, पर यह तकलीफ उठाने लायक थी, क्योकि प्रार्थना साबरमती नदी के किनारे होती थी, जहा का दृश्य बडा ही प्यारा होता था। मुझे एक दिन भी प्रार्थना से नागा करना अच्छा न मालूम होता था।

आश्रम मे कई छोटी-छोटी झोपडिया चारो ओर फैली हुई थी। बीच की झोपडी बापू की थी। दूसरी झोपडियो मे महादेव देसाई, बापू के भतीजे और दूसरे काम करने-वाले रहते थे। एक ही झोपडी मे कई-कई कुटुब रहते थे। आमतौर पर हरएक जमीन पर सोता था। मुझे यह बात कुछ ज्यादा पसद न थी, पर बहुत जल्द ही मुझे इसकी आदत ही हो गई। जो खाना हमे मिलता था, वह बहुत सादा होता था—जरूरत से ज्यादा सादा। उसमे न तो मसाला होता था, न कोई और चीज, जो खाने को स्वादिष्ट बनाती। बस उबला हुआ खाना। शुरू-शुरू मे हम सबको यह खाना खाने मे बडी दिक्कत हुई। कम-से-कम मै तो हमेशा ही भूखी रहती थी और इस इतजार मे थी कि कब घर जाकर पेट-भर खाना खा सकू।

आश्रम मे हमे अपने कपडे अपने ही हाथ से धोने पडते थे। मोटी खादी धोना कोई मजाक न था। उन दिनो हम जो साडिया पहना करती थी, वे बहुत ही मोटी होती थी। माताजी को और मेरी एक रिश्ते की वडी उम्र की वहन को उनके कपडे धोने के लिए एक लडका दे दिया गया था, पर वाकी सब लोगो को यह काम खुद ही करना पडता था। शुरू मे हमारी कोशिशे कुछ अधिक कामयाव नही रही, पर हमारे घर लौटने तक हमारी पार्टी के कुछ लोगो ने यह कपडे धोने का काम खूब सीख लिया। हा, मै उन लोगो मे नही थी।

हम अहमदावाद मे पन्द्रह दिन रहकर फिर घर लौटे। वापसी के सफर मे भी हमे करीब-करीव वही तजुर्वा हुआ, जो अहमदावाद जाते वक्त हुआ था। आश्रम मे रहना और वापू को करीव से देखना एक महान् अनुभव था और यह ऐसा तजुर्वा था, जिसकी याद मेरे मन मे हमेशा ताजा रहेगी। वहुत-से लोग वापू के पास आकर अपनी व्यक्तिगत समस्याए वताते और उनसे उनका समाधान पूछते। उनके लिए ऐसा करना उचित न था, और मेरी समझ मे यह किसी तरह न आता था कि किसीके निजी मामलो मे मशविरा देने की जिम्मेदारी वापू अपने सिर पर क्यो लेते थे। और फिर उनके काम उनके अदाजे के मुताविक होते नही थे, तो वेचारे वापू को दोष दिया जाता था।

पिताजी और जवाहर को पहली वार छ महीने की सजा हुई थी। हमारे अहमदावाद से वापस आने के वाद ही जवाहर को अपनी सजा के तीन महीने काटने पर ही छोड दिया गया। पर वह ज्यादा दिनो तक आजाद न रह सके, क्योकि छ हफ्ते के जरा-से अर्से के वाद उन्हे फिर वापस जेल जाना पडा। उस वक्त से जेल जाना और जेल से वाहर निकलना हमारे खानदान के अधिकाश लोगो की आदत-सी हो गई है।

दिन-प्रति दिन, मास-प्रति-मास जीवन की यही गति रही। इस तरह जिदगी के दिन और महीने वीतते रहे। मै घर ही पर पढती रही और जेलखानो मे मुलाकात के सिलसिले मे जाने के सिवा हमने कही का सफर नही किया। सन् १९२६ मे सव राजनैतिक कैदी छोड दिये गये। हमे खुशी थी कि पिताजी और जवाहर फिर घर आ गये और हमारा घर, जो इतने दिनो से सुनसान पडा हुआ था, फिर पिताजी की सवको हँसानेवाली हँसी से गूजने लगा। फिर एक वार आनद-भवन मे शात स्वाभाविक जीवन दिखाई देने लगा।

: ३ :

"बालको की इच्छानुरूप उनका जगत् होता है। अपनी बालशाला में आग तापते हुए वह अपने ही चित्रो से खेलता है। दिये के प्रकाश में यह जगत् कितना बडा दीखता है! पर जब याददाश्त की आख से देखते है, तो यह ससार कितना छोटा है!"

—चार्ल्स बॉडलेयर

जवाहर को सन् १९२३ के आखिर मे नाभा रियासत मे गिरफ्तार किया गया। वहा से छूटकर जब वह घर आये, तो उसके कुछ ही दिनो बाद उन्हे टायफाइड हो गया और वह एक महीने से ज्यादा बहुत सख्त बीमार रहे। जब वह ठीक हो गये, तो हम लोगो की जान-मे-जान आई।

अब जेल-निवास मे कुछ कमी हुई थी और हम एक-दूसरे को कुछ ज्यादा अच्छी तरह देख और समझ सके। गया मे काग्रेस का जलसा खत्म होने पर पिताजी ने देशबधु चित्तरजन दास के साथ मिलकर स्वराज्य-पार्टी कायम करने का विचार किया। पार्टी की पहली सभा आनद-भवन मे हुई। चित्तरजन दास इसके सदर हुए और पिताजी जनरल सेक्रेटरी।

जून, १९२५ मे चित्तरजन दास का देहान्त हुआ और पिताजी स्वराज्य-पार्टी के सदर चुने गये, देशबन्धु दास पिताजी के केवल एक विश्वासी साथी ही नही थे, बल्कि बडे ही गम्भीर मित्र भी थे और उनकी मृत्यु से पिताजी को बहुत धक्का पहुचा। पिताजी असेम्बली के काम मे लगे हुए थे, जहा असेम्बली के विरोधी पक्ष के नेता और स्वराज्य-पार्टी के सदर की हैसियत से उनके पास बहुत काम था। मार्च १९२६ मे असेम्बली की दिल्ली की बैठक मे स्वराज्य-पार्टी ने पिताजी के नेतृत्व मे असेम्बली का बहिष्कार किया। यह बहिष्कार कुछ सुधारो के बारे मे सरकार के रवैये के खिलाफ आवाज उठाने के लिए किया गया था। पिताजी ने इस मौके पर जो तकरीर की, वह बडे गजब की थी। उन दिनो मै अक्सर पिताजी से मिलने दिल्ली जाया करती थी और आठ-सात रोज उनके साथ रहती थी। उस वक्त मै असेम्बली के जलसे भी देखने जाया करती थी। सफेद झक खादी पहने हुए पिताजी बडे शानदार और रईस-से नजर आते थे, और मुझे उन पर बहुत नाज़

था। वह बडे-बडे मुश्किल सवाल जिस तरह हल करते थे और असेम्वली मे जिस तरह सवाल-जवाव किया करते थे, वह मुझे बहुत पसद आता था। उनकी पार्टी जव एक वार किसी वात का फैसला करती थी, तो फिर उस सवाल पर झुकना वह जानते ही न थे। कभी-कभी वह अपने साथियो की किसी गलती पर या किसी जगह कमजोरी दिखाने पर वडी वे-रहमी से खवर लेते थे। इस स्वेच्छाचारी वर्ताव के वावजूद जो लोग उन्हे जानते थे और उनके स्वभाव से परिचित थे, वे उनकी वडी इज्जत और कद्र किया करते थे। उनके दुश्मन उनसे डरते थे और उनसे दूर रहना ही पसद करते थे।

जब कभी असेम्वली मे कोई गर्मा-गर्म वहस होती थी, तो मुझे उसकी वैठक देखने मे अच्छा लगता था। कभी-कभी जव पिताजी दावते देते और माताजी न होती, तो पिताजी की तरफ से मेहमानो की आवभगत मैं ही किया करती थी। उनके साथ खडे होकर मेहमानो का स्वागत करना मुझे कितना अच्छा लगता था।

मेरे पति के चाचा कस्तूरभाई लालभाई, जो एक मशहूर मिल-मालिक है, उन दिनो असेम्वली के मेम्वर थे और मेरे पति राजा कभी-कभी अपने चाचा के साथ आकर ठहरते थे। राजा का कहना है कि वही एक वार वह मुझसे मिले और उन्होने निश्चय कर लिया कि वह मुझसे शादी करेगे। दुर्भाग्य से मुझे इस मुलाकात की याद नही है और यह ऐसी वात है, जिससे राजा अव भी चिढते हैं। मुझे इसका अफसोस नही है कि राजा ने हमारी शादी से करीव आठ साल पहले ही यह निश्चय कर लिया था कि वह मुझसे शादी करेगे।

सन् १९२५ के आखिर मे कमला भाभी वहुत वीमार हो गई। वह कुछ साल से वीमार रह रही थी और इस कारण जवाहर और मेरे माता-पिता को वडी चिंता रहती थी। डाक्टरो ने मशविरा दिया कि उन्हे इलाज के लिए स्विट्जरलैंड ले जाया जाय। मार्च १९२६ मे जवाहर कमला भाभी और अपनी वेटी इदिरा के साथ यूरोप के लिए रवाना हो गये। उन्हीके साथ वहन स्वरूप और उनके पति रणजीत भी गये। वे छुट्टी मनाने जा रहे थे, जिसका इरादा उन्होंने वहुत पहले से कर रखा था।

पिताजी ने भी उसी साल जून के महीने मे यूरोप जाने का इरादा किया था और मैं उनके साथ जानेवाली थी। उन्होंने कई साल से छुट्टी नही ली थी और

उन दिनो वह इतना काम करते रहे थे कि उन्होने महसूस किया कि उन्हे आराम और तफरीह की जरूरत है'।

बदकिस्मती से बिलकुल आखिरी वक्त पर उन्हे अपना सफर रोक देना पडा, क्योकि एक बडा भारी मुकदमा, जिसमे वह काम कर रहे थे, मुलतवी न हो सका। उन्होने यह मुकदमा उस वक्त ले रखा था, जब वह वकालत कियाँ करते थे और हालाकि उन्हे अदालत मे हाजिर होना बहुत नापसद था, फिर भी उन्हे अपने पुराने मुवक्किलो का काम करना ही पडता था।

पिताजी ने वकालत बद कर दी उसके बाद भी उनके पुराने मुवक्किल उनके पास आया करते थे और उनसे विनती करते कि वह और काम करे या न करे, मगर उनका मुकदमा जरूर चलाये, पर पिताजी ऐसा करने से हमेशा इन्कार करते थे। लोग फीस की बडी-बडी रकमे पेश करते, लेकिन पिताजी कभी विचलित नही हुए। एक बार एक मुवक्किल ने उन्हे एक मुकदमा चलाने के लिए एक लाख रुपया फीस पेश की। पिताजी ने उस रुपये की तरफ तिरस्कार भरी निगाह से देखा और फिर मेरी तरफ देखकर कहा, "कहो बेटी, तुम क्या समझती हो ? मेरे लिए मुनासिब होगा कि मै यह मुकदमा ले लू ?" मेरी समझ मे न आया कि क्या जवाब दू और मे कुछ क्षण पशोपेश मे रही। मै जानती थी कि उस वक्त पिताजी के पास बहुत कम रुपया था और यह रकम बडी काम आती, पर मुझे यह बात ठीक न मालूम दी। मैंने कहा, "नही पिताजी, मै समझती हू, आप यह रुपया न ले।" उन्होने मेरा हाथ दबाया, गोया उन्हे मेरे फैसले पर बडा नाज था। उन्होने मुवक्किल की तरफ मुड-कर कहा, "मुझे अफसोस है। देखो तो, मेरी बेटी को भी यह बात पसद नही।" बाद मे मुझे ऐसा मालूम हुआ कि पिताजी ने यह बात मुझसे सिर्फ इसलिए पूछी थी कि वह यह देखना चाहते थे कि मै उनकी वैसी ही बेटी बनूगी, जैसा वह मुझे देखना चाहते थे या यह कि मै रुपये के लालच मे आकर उनके लिए नालायक साबित हूगी।

मै अपने खानदान के लोगो से अलग होकर कभी घर से बाहर नही रही थी और न मैंने कभी अकेले सफर किया था। इसलिए पिताजी की समझ मे नही आता था कि क्या किया जाय, मुझे अकेले यूरोप जाने दिया जाय या मेरा टिकट मनसूख कराया जाय। उन्होने मुझसे इस बारे मे बाते की और कहा कि मै खुद जैसा चाहू तय कर लू। अब मै बडी दुविधा मे पडी और दो तरह के विचार मुझे दोनो ओर खीचने

लगे। मुझे अकेले जाने का विचार पसद न था, इसलिए कि मै बहुत दिनो से यह सोच रही थी कि मै सफर पिताजी के साथ ही करूगी। पर साथ ही मुझे कुछ ऐसा खयाल हुआ कि अगर मै इस मौके से फायदा न उठाऊगी, तो मुझे शायद जल्द कोई और मौका ऐसा नही मिलेगा। इसीलिए मैने जाने का फैसला किया और मै समझती हू कि वह अक्लमदी का फैसला था।

माताजी को इस बात से बडी तकलीफ हुई और वह पिताजी से नाराज हुई कि ऐसी बात का फैसला उन्होने केवल मेरी मर्जी पर छोड दिया। उनका खयाल था कि एक नौजवान औरत के लिए इस तरह परदेस का सफर अकेले करना मुनासिब नही। उन्होने कोशिश की कि मै इस सफर का खयाल छोड दू। मै उन्हे नाराज करना नही चाहती थी, पर मेरी जाने की इच्छा बहुत थी। बहुत काफी बहस के बाद मै यूरोप के सफर पर अकेली रवाना हुई। अपने जीवन मे पहली बार मै अकेली जा रही थी। मै किसी कदर परेशान थी और किसी कदर खुश भी कि एक नई दुनिया देखने जा रही हू। शुरू के कुछ दिनो मैने अकेलापन महसूस किया और दुखी रही, पर बहुत जल्द मैने कुछ दोस्त बना लिये और जहाज पर वक्त बडे मजे से कटने लगा। जहाज पर कुछ मित्र ऐसे थे, जिन्होने मेरी निगरानी अपने जिम्मे ले ली, इसलिए कि मै अकेली थी और मुझे देखनेवाला कोई न था। हमारे जहाज पर कई नौजवान मुसाफिर भी थे और जब कभी मुझे उनमे से किसीसे मिलते या बात करते देख पाते, तो मेरे बुजुर्ग महज निगरान न होकर मुझे लेकचर सुनाते थे कि देखो अजनबी लोगो के साथ दोस्ती करना बहुत खतरनाक है। वहा रात के दस बजे मुझे सोजाना पडता था। कुछ रोज तो मैने इस नियम का पालन किया, मगर बाद मे उससे बगावत की। नतीजा यह हुआ कि मुझे और अधिक प्रवचन सुनने पडे और क्रोधित निगाहो का सामना करना पडा, पर इन सब बातो के बावजूद मै साफ बच निकली।

उस वक्त जवाहर जेनेवा मे रहते थे और मुझसे ब्रिंडिसी मे मिलनेवाले थे। गाडी निकल जाने की वजह से वह वहा वक्त पर न आ सके। अब मुझे अकेलापन बहुत सताने लगा और अगर मेरे कुछ नये मित्र, जो मेरे साथ ही जहाज से उतरे थे, वहा न होते, तो मुझे बडी ही तकलीफ होती।

जवाहर मुझसे नेपल्स मे मिले। हम लोग सीधे जेनेवा न जाकर रास्ते मे रोम, फ्लारेन्स और दूसरे शहर देखते हुए पहुचे। मैने जो कुछ देखा, उसमे से बहुत

कुछ मुझे पसद आया। मैने रोम, फ्लारेन्स और दूसरे शहरो के वारे मे वहुत-कुछ पढ रखा। प्राचीन रोम का वैभव मुझमे सनसनाहट पैदा किये विना न रहा था। इसी सफर मे मैने जवाहर को ज्यादा करीब से, अच्छी तरह, देखा और मुझे पता चला कि वह वडे ही वढिया साथी और पथ-प्रदर्शक है। अव वह मेरे लिए केवल वडे भाई न रहे, जिनसे मै हरदम दुखी थी। वह एक प्रिय साथी थे और हमने जो थोडे दिन सैर-सपाटे मे एक साथ गुजारे, वे वडे ही सुख के दिन थे।

जेनेवा मे हम लोग एक फ्लैट मे रहते थे। मै इससे पहले कभी इतनी छोटी जगह मे नही रही थी और इस नये तजुर्बे मे मुझे वडा आनन्द आया। मगर कुछ दिनो मे इस मकान से मेरी तवीयत उकताने लगी और आनन्द-भवन के वडे कमरे और खुले वाग मुझे याद आने लगे। मेरे आने के एक हफ्ते वाद ही जवाहर ने मुझे जेनेवा का एक नक्शा, एक इग्लिश-फ्रेंच शब्द-कोष और टिकटो की कापी दी। मुझसे कहा गया कि अपने आप घूमने-फिरने के लिए मुझे वस इन्ही चीजो की जरूरत पड सकती है और मै जितनी जल्द अपना काम आप ही करना शुरू करू, उतना ही अच्छा होगा। मुझसे यह भी कहा गया कि कमला बीमार है, इस वजह से घर का इन्तजाम मुझी को करना होगा। हालाकि शुरू मे यह काम मेरे लिए आसान न था, फिर भी उससे मुझे अच्छी शिक्षा मिली और बहुत जल्द मुझे उसकी आदत भी पड गई। उन दिनो मै फ्रेन्च वहुत कम जानती थी और जो फ्रेन्च मैने स्कूल मे सिखी थी, वह न सीखने के वरावर थी। मै अपने भाई की चेतावनी से कुछ घवरा जरूर गई, पर मै जानती थी कि उनसे दलील करना ठीक न था। इसलिए मैने चुपचाप उनका हुक्म मान लिया और जिस तरह भी वन पडे, यह काम करने लगी। मैने सबसे पहला जो काम किया, वह एक भली स्विस लडकी से फ्रेंच भाषा सीखना था। वाद मे यह लडकी मेरी बडी अच्छी सहेली वन गई। हमारे घर की नौकरानी मार्गरी ने मुझे घर का काम-काज सिखाना शुरू किया और हम दोनो की खूब गुजरने लगी। कभी-कभी कोई छोटी-मोटी वात हो जरूर जाती थी, पर जिदगी उतनी मुश्किल न थी, जितनी मैने पहले समझी थी।

जेनेवा मे एक इटरनेशनल समर स्कूल था और दुनिया के हर हिस्से के लोग वहा जमा होते थे, खासकर वे विद्यार्थी, जो अपनी गर्मी की छुट्टिया गुजारने जेनेवा आते थे। इनमे हिन्दुस्तनी, चीनी, सिलोनी, अमरीकी, फ्रेन्च, जर्मन और दूसरे अनेक देशो के लोग आते थे। जवाहर इस स्कूल मे दाखिल हो गये और कुछ दिनो

के बाद मैं भी भरती हो गई। मेरी वहा बहुत से लोगो से दोस्ती हो गई। उस समय जेनेवा मे लीग ऑफ नेशन्स के जलसे के लिए जो बडे-बडे मशहूर राजनीतिज्ञ वहा आये थे, वे इस स्कूल मे लेक्चर देते थे। इनमे ऑक्सफोर्ड, केम्ब्रिज और यूरोप के दूसरे विश्वविद्यालयो के प्रोफेसर और मशहूर लेखक भी होते थे। ये लेक्चर बडे दिलचस्प हुआ करते थे, और इनका बडा फायदा यह था कि उनके कारण हमे दुनिया के सभी हिस्सो के हर प्रकार के लोगो से मिलने का मौका मिलता था।

शनिवार-इतवार को स्कूल की तरफ से किसी जगह सैर के लिए जाने का प्रबध होता था और जब कभी कमला की तबीयत ठीक रहती, तो जवाहर और मैं इस सैर मे शामिल हो जाते थे। ऐसे ही एक सफर मे हमने कोल डि बोजा नामक पहाड पर जाने का निश्चय किया। हमारी एक छोटी सी पार्टी थी, जिसमे अमरीकन और स्विस ज्यादा थे। इस पार्टी मे सिर्फ तीन हिन्दुस्तानी थे—जवाहर, एक सिंधी विद्यार्थी और मैं। हमारे सिन्धी दोस्त जरा बाके थे। हमेशा खूब भडकदार कपडे पहनते थे और उन्हे अपनी पोशाक की खूबी का खुद भी खयाल रहता था। इस सफर मे और सब लोग तो ब्रिचेस और ऊनी पुलओवर और मजबूत कीलो-वाले बूट पहनकर गये, पर हमारे सिन्धी दोस्त (जो अब हिन्दुस्तान मे किसी जगह ऊचे आई० सी० एस० अफसर है) भडकीला सूट और शानदार जूता पहनकर आये। हम लोग पहले रेल मे गये। फिर रस्से से चलनेवाली गाडी से और इसमे आगे जाकर हमने उस जगह जाने के लिए, जहा हमे पहुचना था, पहाड पर चढना शुरू किया। दो घटे की थका देनेवाली चढाई के बाद हमे बारिश, पाला और बर्फ का सामना करना पडा और हम खूब अच्छी तरह भीग गये। हमारे सिंधी दोस्त को बडी ही परेशानी हुई, क्योकि उनके जूते पहाड की चढाई के लिए ठीक न थे और बार-बार फिसलते थे। जवाहर की आदत है कि जब कभी ऐसे सफर पर जाते है, पट्टिया, आयोडिन तथा दूसरा जरूरी सामान अपने साथ रख लेते है। हमारे दोस्त की यह हालत देखकर जवाहर ने झट से रस्सी के तलोवाले जूते निकालकर उनको दिये, जिससे हमारे मित्र की मुश्किल किसी कदर कम हुई।

सिर से पैर तक भीगते-भीगते एक घटे तक और चलने के बाद हम सूर्य की किरणो मे चमकते हुए पहाड के एक टुकडे के पास पहुचे, जो ताजा बरफ से ढका हुआ था। हालाकि हम लोग थककर चूर हो गये थे, फिर भी ताजा बर्फ का नज्जारा हममे से कुछ लोगो का जी लुभाये बिना न रहा। जवाहर भी इन्ही लोगो मे से थे। दो-

दो और तीन-तीन की टोलिया बनाकर एक-दूसरे के पीछे बैठकर उन्होने इस बर्फ पर से फिसलना शुरू किया। मै बहुत ज्यादा थक गई थी। इसलिए मै एक तरफ बैठकर यह तमाशा देखती रही। जवाहर फिर एक बार फिसलने की तैयारी कर ही रहे थे कि एक विद्यार्थी ने, जो उनके पीछे बैठना चाहता था, उन्हे हल्का-सा धक्का दिया और जवाहर फिसलने के लिए तैयार होने से पहले ही अकेले नीचे की तरफ फिसलने लगे। उस ढलाव के सिरे पर एक बडा भारी खड्ड था और जवाहर अपने-आपको सभाले कि उससे पहले ही उस खड्ड की तरफ लुढकने लगे। इस दशा मे हम सास रोके रहे और इस बीच मै तो लाखो मौत मर चुकी थी। जवाहर जानते थे कि वह उस किनारे के पास पहुचते जा रहे है, पर उन्होने अपने होश दुरुस्त रखने की कोशिश की। बडी भारी कोशिश से उन्होने पलटा खाने का प्रयत्न किया और उसमे कामयाब भी हो गये। बर्फ के बाहर निकले हुए पहाड के पथरीले हिस्से पर जाकर वह रुके। इसीसे उनकी जान बची। फिर भी उनके चेहरे और हाथो पर खूब खराश आई। यह सब कुछ ही मिनटो मे हुआ, पर उसके कई घटे बाद भी मेरा हाल यह था कि मेरे घुटनो मे कमजोरी मालूम होती थी।

इस घटना के बाद हम चुपचाप करीब की झोपडी मे गये, जहा आग जल रही थी, और आग के चारो ओर बैठ गये। हमारे सिंधी दोस्त ने और लोगो के साथ-साथ अपने शानदार जूते भी आग के किनारे सूखने के लिए रख दिये। थोडी देर बाद जब वह अपने जूते लेने गये, तो उन्होने देखा कि जूता सूखकर ऐसा सिकुड गया है कि पहना नही जा सकता। उनको अपने जूतो का यह हाल देखकर बडा ही दुख हुआ, खासकर इस वजह से भी कि हम लोगो के मोटे बूट आग से सूखकर ठीक हो गये थे। यह जगह एक बुड्ढे पति-पत्नी की थी। उन्होने हमे खूब अच्छा खाना खिलाया और चूकि हम उस रात वापस नही जा सकते थे, इसलिए करीब की उनकी झोपडी मे रात भर ठहरे। मर्द नीचे जमीन पर सोये और दो लडकिया एक बिस्तरे मे सोई, क्योकि सबके लिए काफी बिस्तरे नही थे। सर्दी बहुत तेज थी। इसलिए मेरे साथ सोनेवाली मॉली नाम की लडकी ने मुझसे कहा कि अगर मै बिस्तरे के कपडे ठीक से पकड रखू तो वह अदर की तरफ जलती हुई बत्ती घुमाकर बिस्तर को अदर से गर्म कर लेगी। मै इसपर राजी हो गई और कबल पकडे रही, मॉली अदर से बत्ती आगे-पीछे घुमाने लगी, ताकि बिस्तर गर्म हो जाय। थोडी देर बाद हमे किसी चीज के जलने की बू आई, तो पता चला कि हमारी

चादर जल रही है। हमने बत्ती गुल कर दी और विस्तरे मे लेट गये। खैरियत हुई कि हमारी इस हरकत से पूरी झोपडी मे आग न लग गई। दूसरे दिन हम अपने घर रवाना हुए। हम थके-मादे थे, पर खुश भी थे कि घर वापस जा रहे है।

कभी-कभी मै भाई के साथ रोमा रोला से मिलने जाती। रोमा रोला जेनेवा के करीव ही विलेन्यूवे मे रहते थे। मै और भी बहुत से प्रसिद्ध लेखको, सगीतज्ञो और वैज्ञानिको से मिली। इनमे से जिनकी याद मेरे मनमे विशेषकर आती, वे है वह आइन्स्टाइन और अर्नेस्ट टोलर। आइन्स्टाइन से मेरी प्रत्यक्ष भेट नही हुई, पर वह एक जगह, जहा सर जगदीशचन्द्र वसु का भाषण हो रहा था, मौजूद थे। इस भाषण को सुनने मै भी गई थी। मच पर और लोगो के पीछे वह छुपकर वैठे थे और किसीको पता भी न था कि वह इस सभा मे मौजूद है। एक अमरीकन विद्यार्थी ने उन्हे पहचान लिया और उसने सबके पास यह खवर पहुचा दी। अव लोगो ने शोर मचाना शुरू किया। सभी लोग उन्हे अच्छी तरह देखना चाहते थे। वहुत समझाने-बुझाने के वाद वह इस बात पर राजी हुए कि मच पर सामने आकर सबको दर्शन दें। वह आगे आये और शरमाते हुए उन्होने सबका अभिवादन किया। ऐसा मालूम होता था कि अपने प्रति लोगो का यह प्रेम देखकर वह कुछ घवरा गये है। वह सिर्फ थोडी देर ही मच पर खडे रहे और फिर वही पीछे जा वैठे।

टोलर से मै ब्रसेल्स मे मिली। देखने मे वह ज्यादा आकर्षक नही थे, पर उनकी आखे वडी अजीव थी और ऐसा मालूम होता था कि उनकी आखे आपके दिल के अदरूनी विचार पढ रही हो। उनसे वातचीत करना वडा अच्छा लगता था। अक्सर उनके चेहरे पर वेहद उदासी छा जाती थी और उनकी आखो से ऐसा मालूम होता था, जैसे वह किसी खोई हुई चीज की तलाश मे है।

नात्सी राज के शिकार टोलर को अपना देश त्याग देना पडा और दूसरे देशो मे शरण लेनी पडी। वह महान् कवि थे। सत्य और स्वतत्रता के लिए मर-मिटना, यही उनकी लालसा थी। मै जिन लोगो से मिली हू, उनमे सवसे ज्यादा निडर लोगो मे टोलर भी एक थे। अगर किसी वात पर उनको विश्वास होता और उनकी आत्मा उनसे कहती कि यही काम ठीक है, तो उस काम को करने से उन्हे कोई चीज नही रोक सकती थी। उनके सपने टूट गये थे और वह अपनी जन्म-भूमि से निकाले जा चुके थे। ऐसी हालत मे उन्होने आत्म-हत्या करली और इस तरह एक दीप्तिमान

जीवन का अत हो गया। उनकी मृत्यु से दुनिया का वडा भारी नुकसान हुआ है, पर न तो उनका कार्य मर सकता है, न खुद टोलर मर सकते है। वे दोनो अनादि काल तक अमर रहेगे।

जेनेवा मे कुछ महीने रहने के वाद हम मोटाना नाम की पहाडी पर गये। यह जगह छोटी थी, करीव-करीव देहात की-सी, पर वडी ही सुदर। मैंने वर्फ पर चलना और खास किस्म के जूते पहनकर वर्फ पर दौडना भी यही सीखा। पहले खेल मे मुझे वडा मजा आता था और मै उसमे घटो खुशी से निकाल देती थी। हम यहा कई महीने ठहरे और मैंने यहा पहली बार सर्दी के खेलो मे हिस्सा लिया।

जव हम लोग मोटाना मे थे, तो जवाहर और मै अक्सर पेरिस, वेल्जियम, जर्मनी और कभी-कभी इग्लैण्ड भी जाया करते थे। मुझे इग्लैड कभी पसद नही आया। पर फ्रास और खासकर पेरिस मुझे बहुत ही पसद था। हम या तो किसी सम्मेलन के लिए या महज सैर-सपाटे के लिए जाते थे। पहले जवाहर अकेले जाया करते थे। बाद मे उन्होने मुझसे कहा कि अगर मै उनके कुछ काम आ सकू और उनके सेक्रेटरी का काम कर सकू, तो मुझे भी वह अपने साथ ले चलेगे। मुझे जवाहर के साथ जाने के खयाल से वडी खुशी हुई, पर सेक्रेटरी के काम की वात सुनकर मै जरा झिझकी, क्योकि मै जानती थी कि जवाहर वहुत काम लेनेवाले आदमी है और ठीक काम न करनेवाला उन्हे पसद नही है। फिर भी जवाहर ने जो वात कही थी, वह बडी ही लुभानेवाली थी। इसलिए मैंने फौरन उनका टाइपरायटर ले लिया और अपने-आपको भविष्य के लिए तैयार करने लगी। उसके बाद करीव-करीब हर सफर मे मै जवाहर के साथ होती थी। इस तरह मुझे वहुत कुछ सीखने का मौका मिलता था, पर इस काम मे मै समझती थी उतना मजा न था, क्योकि जवाहर कभी मुझे कम काम नही देते थे। वह समझते थे कि वहुत ज्यादा काम करने से हमेशा आदमी का भला ही होता है और मेरे वारे मे उनका यह खयाल था कि मैंने इससे पहले कुछ भी काम न किया था। वह कहते कि मै वहुत ही आराम से दिन गुजारती रही हू। इसलिए जरा कडी मेहनत करने से मै वहुत सुधर जाऊगी। मेरा विश्वास है कि ऐसा ही हुआ भी।

जव कभी जवाहर को वहुत ज्यादा काम न होता, तो वह मुझे अजायव घर, चित्रशालाए आदि दिखाने ले जाते थे। कभी-कभी हम दिन भर पैदल घूमते रहते। अगर कभी मै थक जाती और कहती कि अव वाकी जगहे आराम से टैक्सी पर

चलकर देखेंगे, तो जवाहर इस शर्त पर राजी होते कि हम रात को थिएटर देखने न जाए। उनके विचार मे एक साथ बहुत ज्यादा ऐश-आराम आदमी के लिए बहुत खराब है। नतीजा यह होता था कि शाम को थिएटर न जाने की बात मुझे पसद न आती और उदास होकर मै उनके साथ पैदल ही घिसटती-रगडती रहती थी। मुझे मानना पडेगा कि यह मेरे लिए बडी अच्छी शिक्षा थी और ऐसा अनुभव मै हिंदुस्तान मे कभी भी हासिल न कर सकती थी। कभी-कभी इस विचार मे कि मेरे भाई फिजूल ही मुझपर इतनी मुसीबते डालते है, मै उनसे नफरत-सी करने लग जाती।

मै जहा-कही जाती, नये-नये लोगो से मेरी दोस्ती हो जाती। इनमे सब जातियो के लोग होते, जिनमे अधिकतर विद्यार्थी और कलाकार पाये जाते थे। मै पूरी आजादी के वातावरण मे पली थी और मुझे यह सिखाया गया था कि लडको और लडकियो मे कुछ फर्क न करू। सच तो यह है कि मै खुद भी बहुत-कुछ लडको की तरह रहती थी और इस पर मेरी माताजी को मुझे अक्सर रोकना पडता था। यूरोप मे लडके और लडकिया जिस आजादी से आपस मे मिलते थे, इसमे मेरे लिए कोई नई या अनोखी बात न थी और जिन लोगो से मै मिलती थी, उनमे मिलने मे मुझे किसी तरह की शरम या झिझक नही होती थी। इस सफर मे कुछ लोगो से मेरी बहुत अच्छी दोस्ती हो गई, और बाद के बरसो मे हममे बराबर पत्र-व्यवहार होता रहा और यह सिलसिला हाल की लडाई शुरू होने के साल पहले तक जारी रहा इसके बाद एक-एक करके मेरा अपने इन मित्रो के साथ सबध टूटता गया, क्योकि नात्सी सेना उनके देशो को रोदती चली गई। मै अक्सर यह सोचती रहती हू कि अब मेरे वे मित्र कहा होगे! आया नजरबद होगे या बेबस और बेघरबार लोगो की तरह जगह-जगह भटकते फिर रहे होगे। मेरे इन मित्रो मे कितनी जिन्दगी थी, कितना जोश था, वे भविष्य का सामना कितनी निडरता से करते थे और उनमे इस बात की कितनी बडी आशा थी कि वे दुनिया को ऐसी दुनिया बनायेगे, जिसमे बहादुर लोग सुख और शान्ति से जीवन बिता सके! पर यह सब कुछ न हो सका। उनके ये सपने बुरी तरह तोड दिये गये, और कौन जानता है कि वे फिर ये सपने देख भी सकेंगे या नही।

मैने सबसे ज्यादा खुशी मे जो समय गुजारा, वह स्विटजरलैंड और पेरिस मे। अक्सर मेरे मन मे यह इच्छा पैदा होती है फिर एक बार वही दिन लौट आये, जब

जीवन बेफिक्री और आनद से गुजरता था और फिर एक बार उन्ही पुराने मित्रो से मुलाकात हो सके। हालांकि बार-बार इसकी तैयारी की गई, पर वह कभी भी पूरी नही हुई और मै फिर कभी यूरोप न जा सकी।

१९२७ के शुरू मे साम्राज्यवाद विरोधी सघ का जलसा ब्रसेल्स मे हुआ और जवाहर को इडियन नेशनल काग्रेस के प्रतिनिधि की हैसियत से उसमे शरीक होने का निमत्रण मिला। मै भी उनके साथ हमेशा की तरह गई। इस जलसे मे दुनिया के हर हिस्से से लोग आये थे। चीन, जावा, सीरिया, फिलस्तीन और अमरीका जैसे दूर-दूर के देशो से और दुनिया के दूसरे मुल्को से भी लोग आये थे। अमरीका और अफ्रीका के हवशी प्रतिनिधियो ने वडी जोश-भरी तकरीरे की।

इस सभा मे मै पहली बार सरोजिनी नायडू के भाई वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय से मिली। आमतौर पर लोग उन्हे 'चचा चट्टो' कहकर पुकारा करते थे। कई साल से वह अपनी मातृभूमि से जुदा हो चुके थे। उनका न तो कही घर था, न उनके पास पैसा था और ऐसी हालत मे वडी मुसीवत से जिदगी के दिन गुजारते हुए अनेक देशो की खाक छानते फिरते थे। पर ऐसी हालत मे भी उनके मन मे कटुता पैदा नही हुई थी, जैसी कि इस प्रकार की मुसीवत उठानेवाले और लोगो मे पैदा होगई थी। इसके खिलाफ उनके चेहरे पर हमेशा एक प्रकार की मुस्कराहट रहती थी और वह हर किसीसे ऐसी वाते करते थे, जिनसे उसका दिल वढे। वह वहुत ही बुद्धिमान और आकर्षक थे और मै जिन लोगो से मिल चुकी हू, उनमे से वह ऐसे लोगो मे थे, जिनको आदमी दिल से चाहने लगता है। मुझे उनसे बड़ी मुहब्वत हो गई और वह भी मुझसे काफी हिल-मिल गये। मैने उन्हे जितना अधिक देखा, उतनी ही मेरे मन मे श्रद्धा और भक्ति वढती गई। ऐसे वक्त पर भी, जब उनपर फाको की नौवत गुजरती थी, वह कभी हिम्मत नही हारते थे। वहुत-से मौको पर उनके पास दोपहर के खाने के लिए केवल दो सेव से अधिक कुछ न होता था, तो भी वह इस वात पर जोर देते थे कि कोई दूसरा गरीव हिंदुस्तानी विद्यार्थी उनके इस खाने मे शरीक हो। जव हम अक्तूबर, १९२७ मे बर्लिन गये, तो हम चट्टो चाचा से फिर मिले और अबकी हमने उन्हे और ज्यादा करीव से देखा। सवको उनसे वडा प्रेम हो गया था और वह भी हम सवको वहुत चाहने लगे थे। शायद इसका कारण यह रहा हो कि वरसो के वाद वह ऐसे लोगो से मिले थे, जो उनको यह विश्वास दिला सके कि वे उन्हीके खानदान के है और गैर या पराये नही है।

जिस शाम को हम वर्लिन से रवाना हुए, वह हमसे मिलने आये। अकेले रहने और जगह-जगह भटकते रहने की उन्हे वरसो से आदत पड गई थी। फिर भी हम लोगो से जुदा होते हुए उन्हे वडी तकलीफ हुई। जब वह रेलवे प्लेटफार्म पर खडे होकर मुझे विदा कर रहे थे, तो उनकी आखो मे आसू भर आये। कहने लगे, "कृष्णा, न मालूम यह हमारी आखिरी मुलाकात है या हम फिर भी कभी मिलेंगे! मुझे आशा है कि मै तुमसे फिर मिलूगा! कौन जाने मै हिंदुस्तान ही आ जाऊ और वही तुम लोगो की एक झलक देख लू।" मुझ पर इन शब्दो का वडा असर हुआ और मै रो पडने ही वाली थी। कारण कि मेरे मन मे यह विचार पैदा हो रहा था कि मै उनसे फिर कभी न मिल सकूगी। जव ट्रेन चलने लगी, तो मै हाथ हिलाकर उस वक्त तक उनकी ओर देखती रही, जवतक कि वह मेरी नजरो से ओझल नही होगये। उनके ओठो की आखिरी कापती हुई मुस्कराहट मुझे खूब याद है। उन्होने उसे छुपाने की वहुत कोशिश की, पर छुपा न सके, और इस तरह हम एक-दूसरे से जुदा हुए। उन्हे उस प्लेटफार्म पर अकेला छोडकर हम अपने घर जा रहे थे, सुख-चैन और आराम की जिदगी गुजारने के लिए और उनके लिए अव भी वही तकलीफ, अकेलेपन और मुसीवत की जिंदगी थी। उसके वाद कभी-कभी जवाहर को और मुझे 'चचा चट्टो' की खवर मिलती रही और फिर खवरे आना वद हो गई। उनके वारे मे अजीव-अजीव तरह की अफवाहे भी सुनी गई। एक खवर यह थी कि वह जिदा है, पर वडी मुसीवत और तकलीफ से दिन गुजार रहे है। दूसरी खवर यह थी कि उन्हे रूस मे गिरफ्तार करके गोली मार दी गई। कोई नही जानता कि सच्ची बात क्या है। वह जिदा है या मर गये, यह अभीतक एक राज है।

वर्लिन और दूसरे शहरो मे हम और भी वहुत-से क्रातिकारियो से मिले। उनके साथ वैठकर उनके किस्से सुनने मे मुझे वडा मजा आता था और उनकी हिम्मत और वहादुरी का हाल सुनकर मेरे मन मे उनके लिए अटूट श्रद्धा हो गई। उन्होंने वहुत कुछ कुर्वानिया की थी और वडी तकलीफे उठाई थी। इस पर रुपये पैसे की निरतर तकलीफ उनके लिए वडा भारी सवाल था। मगर इस पर भी वह जितने खुश रह सकते थे, रहने की कोशिश करते और उन मुसीवतो की पर्वाह नही करते थे, जो उनके रास्ते मे थी। ये वे-वतन लोग दुनिया भर मे जगह-जगह फैले हुए है। वडे ही अच्छे और वहादुर लोग है, इतने वहादुर कि हमे उनकी वहादुरी का ठीक अदाजा भी नही और फिर भी हमारे देश मे कितने लोग है, जो उनके विषय मे

कुछ जानते हो या जानने पर जिन्हे उनका खयाल आता हो ?

एक और ऐसे ही अच्छे और दिलचस्प व्यक्ति, जिनकी याद मेरे मन में बस गई है, धनगोपाल मुकर्जी है। वह एक नौजवान बगाली लेखक थे, जो अपने वतन हिंदुस्तान से भाग गये थे और काफी दिलचस्प और रोमाचकारी जीवन गुजारने के बाद अमरीका पहुचे और वही बस गये। उन्होने कालेज मे तालीम इस तरह हासिल की थी कि अपने फुर्सत के समय मे काम करते थे और इससे जो आमदनी होती थी, उसीसे कालेज की फीस अदा करते थे। कालेज से निकलने के बाद उन्होने किताबे लिखना शुरू किया। दुर्भाग्य से हिंदुस्तान मे उनकी रचनाओ के बारे मे लोगो को बहुत कम मालूम है। उनकी किताबे 'दी फेस ऑफ साइलेस', 'कास्ट एड आउटकास्ट', और 'माई ब्रदर्स फेस' उन बेहतरीन किताबो मे से है, जो मैने पढी है। उन्होने बच्चो के लिए भी चद बडी अच्छी किताबे लिखी है, जैसे 'गे नैक', 'कारी दी ऐलीफेंट' वगैरा।

हम लोग जब जेनेवा मे थे, तो हमारे पास धनगोपाल का एक खत पहुचा। यह खत भाई के नाम था, पर वह उस समय इग्लैंड मे थे, इसलिए यह खत कमला ने खोला। धनगोपाल हमसे मिलना चाहते थे। कमला ने उन्हे जवाब दिया कि जवाहर बाहर गये है, पर वह जब चाहे हमसे आकर मिल सकते है। दो दिन बाद शाम के पाच बजे हमारे घर की घटी बजी। उस दिन हमारी नौकरानी की छुट्टी थी। इसलिए मैने दरवाजा खोला, तो देखा कि एक नौजवान बाहर खडा है। मैने उनसे दर्याफ्त किया कि आप क्या चाहते है ? उन्होने जवाब दिया कि मै मिसेस नेहरू और मिस नेहरू से मिलने आया हू। मैने कुछ शक भरी नजर से उनकी तरफ देखा और पूछा, "आप कौन है ?" उन्होंने जवाब दिया, "मै धनगोपाल मुकर्जी हू।" मै यह जवाब सुनकर करीब-करीब गिर पडी, क्योकि न मालूम क्यो, कमला ने और मैने भी यह खयाल कर रखा था कि धनगोपाल मुकर्जी कोई बूढे आदमी होगे, जिनके दाढी होगी और ढीले-ढाले कपडे पहने हुए होगे। पर उसकी जगह मेरे सामने एक खूबसूरत नौजवान खडा था, जिसका लहजा अमरीकी था और जिसकी आंखो में मित्रता की झलक थी। अपने आश्चर्य को छुपाने की कोशिश मे मैने उन्हे घर मे अदर आने को कहा और कमला को उनके आने की खबर देने गई। कुछ मिनट बाद जब हम उस कमरे मे आये, जहा मैने उन्हे बिठाया था, तो हमने देखा कि वह अपने घुटनो के बल बैठे है और अगीठी

की आग, को जो बुझ गई थी, फिर जलाने की कोशिश कर रहे है। ज्यो ही हम दोनो उस कमरे मे आई, धनगोपाल उठ खडे हुए और कहने लगे, "मुझे आशा है कि अगर मै कमरे को जरा गरमाऊ, तो आपको ऐतराज न होगा।" यह कहते हुए वह हँस पडे और अपनी उस हँसी से उन्होने मेरा और कमला का दिल उसी तरह मोह लिया, जिस तरह वह अकसर लोगो का दिल अपनी हँसी से मोह लिया करते थे। उसके बाद से जहातक धनगोपाल का सबध था, जिदगी हमारे लिए एक आश्चर्य बन गई। कभी तो वह फूल और फल ले आते और कभी सब्जिया लाते और फिर इस बात पर अड जाते कि खुद ही बगाली तरीके से भाजी पकायेगे, पर जब वह पक जाती तो बगाली तरीके की न होती थी। वह मुझे अक्सर अपने साथ घूमने ले जाया करते और जब उन्हे गर्मी मालूम होती, वह अपना कोट और वास्कट उतार कर उसे बगल मे दबा लेते और फिर चलने लगते। वह कही भी हो, यही करते और मै उनकी यह हरकत देखकर हैरान रह जाती। वह हमेशा मुझसे कहते थे कि मुझमे इतनी बेकरारी है, जो किसी हिदुस्तानी के लिए ठीक नही और मुझे हर रोज सुबह आध घटा एक जगह बैठकर ध्यान करना चाहिए, ताकि मुझमे शान्ति पैदा हो। उनमे अजीब खब्तीपन था। फिर भी मैं जितने लोगो से मिली हू, उन सब मे वह ज्यादा प्रिय और खुशदिल थे। हममे कई साल पत्र-व्यवहार जारी रहा। १९३२ मे धनगोपाल कुछ दिन के लिए हिंदुस्तान आये। उनकी नौजवानी का चुलबुलापन और खुशमिजाजी कुछ कम हो गई थी। उनके लिए जीवन निराशा पैदा करनेवाला साबित हुआ था। लेखक की हैसियत से वह कामयाब नही थे और इसीने उन्हे नाउम्मीद कर दिया था। धनगोपाल ने एक अमरीकन औरत से शादी की थी और उनके गोपाल नाम का एक छोटा लडका था, जिसकी उम्र अब कोई पच्चीस साल की होगी। उनकी पत्नी उम्र मे उनसे बहुत बडी थी और न्यूयार्क मे लडकियो के एक बडे कालेज की प्रिंसिपल थी। वह बडी ही अच्छी, होशियार और अपने काम मे माहिर थी। इस खानदान मे वही नियमित तौर से पैसा कमाती थी और मैं समझती हू कि धनगोपाल को इस विचार से बडी तकलीफ होती थी कि वह अपनी पत्नी की आमदनी पर गुजारा कर रहे है। १९३२ के बाद से धनगोपाल के पत्रो मे पहले से भी ज्यादा निराशा झलकने लगी। फिर खत बद हो गये और १९३५ मे हमने सुना कि उन्होने फांसी लगाकर आत्म हत्या कर ली।

धनगोपाल हमारे बडे प्रिय मित्र थे। उनकी मृत्यु की खबर मे जवाहर, कमला

और मुझको वडा दुख हुआ। हमने एक सच्चा मित्र खोया और हिन्दुस्तान ने अपना एक यशस्वी लेकिन अज्ञात पुत्र।

सन् १९२७ की गर्मियो मे पिताजी यूरोप आये। मुझे इससे वडी खुशी हुई और जवाहर को भी, इसलिए कि हम जानते थे कि पिताजी को केवल पूरे आराम ही की नही, वल्कि पूरी तरह वातावरण की तवदीली की भी जरूरत थी। हमे डर था कि कही आखरी वक्त पर फिर कोई ऐसी वात होगी, जिससे उन्हे अपना विचार मुलतवी करना होगा और वह यूरोप न आ सकेगे। खुशकिस्मती से कोई ऐसी वात नही हुई और उन्होने हमे लिखा कि उन्होने अपनी जगह रिजर्व करा ली है। सफर पर रवाना होने से पहले उन्होने मेरे नाम अपने खत मे लिखा था "तुम और भाई (जवाहर) वरावर जोर दे रहे हो कि मै छुट्टी लेकर यूरोप आऊ, इधर स्वरूप और रणजीत भी यही कह रहे है और आखिर मेरे लिए यह मुमकिन हुआ है कि वहुत जल्द वहा चला आऊ। पिछले सात सालो से मै जो सार्वजनिक काम कर रहा हू, उसकी वजह से मै कुछ थक-सा गया हू, और इस लम्वी मुद्दत के अन्त मे इस विचार से परेशानी होती है कि देश को आजादी की ओर आगे वढाने मे मै नाकामयाव रहा। इसीलिए मैने अव यह फैसला किया है कि छुट्टी ले लू और अव ज्यादा दिन तुम सवसे दूर न रहू।" मैने उनके नाम अपने खत मे ब्रसेल्स की कार्फेस के वारे मे कुछ लिखा था। उसीका हवाला देकर अपने इसी खत मे पिताजी ने लिखा: "ब्रसेल्स कार्फेस का जो हाल तुमने लिखा था, वह मुझे मिला और मैने उसपर तुम्हारी अपनी राय वडी खुशी से पढी। तुम तो अच्छी-खासी राजनीति जाननेवाली मालूम देती हो। पर यह न समझो कि लडकी होना तुम्हारे रास्ते मे कोई रुकावट पैदा करेगा। वहुत-सी स्त्रियो ने अपने देश के उद्धार मे उतना ही वडा काम किया है, जितना उन देशो के पुरुषो ने, वल्कि कुछ औरतें तो इस काम मे मर्दो से भी वाजी ले गई है। सारा सवाल यह होता है कि अपने देश के प्रति हमारे अदर कैसी भावना है और उसकी उन्नति के लिए हम कितनी मेहनत करने के लिए तैयार होते है। पुरुष या स्त्री का इसमे कोई सवाल नही है, वल्कि सच तो यह है कि स्त्री अगर दृढ हो, तो वह मर्द से भी ज्यादा असर डाल सकती है। गर्जेकि तुम्हारे लिए काम का पूरा मौका है। तुम्हे याद रखना चाहिए कि सच्ची देश-भक्ति और वतनपरस्ती तुम्हारे खून मे मौजूद है और अगर तुम जान-बूझकर उसे दवाने की कोशिश न करो, तो जल्द या देर से उसका उभरना निश्चित है।"

पिताजी सितम्बर १९२७ मे यूरोप पहुचे। उन्हे अपने साथ पाकर हमे वडा आनद हुआ और उन्हे भी साल भर की जुदाई के वाद अपने वच्चो से मिलकर वडी खुशी हुई। अवतक जवाहर के साथ मै अपना समय पढने-लिखने, उनके सेक्रेटरी का काम करने और आमतौर पर हर तरह से उनकी मदद करने और उनके लिए सहायक वनने मे विताती रही थी। अव इसके वाद के महीने मैने पिताजी के साथ आराम और ऐश से गुजारे। मै मानती हू कि मैने खूव मजे किये और मुझे इस जीवन मे वडा लुत्फ आया। फिर भी मै खुश हू कि यह भी मेरे लिए जरूरत से ज्यादा न हुआ।

हम सव साथ ही लदन गये और एक होटल मे ठहरे, जहा वहुत वरसो पहले पिताजी उस वक्त ठहरे थे, जव वह जवाहर को हैरो के स्कूल मे दाखिल कराने ले गये थे। वहा पहुचने के वाद मै दर्वान के पास गई और उससे पूछा, "क्या हमारे लिए कोई खत है ?" "आपका नाम ?"—दर्वान ने सवाल किया और जव मैने जवाव मे 'नेहरू' कहा तो वह 'नेहरू' 'नेहरू' गुनगुनाता हुआ खतो की अलमारी मे खत तलाश करता रहा। फिर अचानक मेरी तरफ मुडा और कहने लगा, "श्रीमतीजी, कई साल पहले मै एक नेहरू को जानता था। वह वडे मालदार और वडे शरीफ आदमी थे। उनकी वीवी भी वडी अच्छी थी। उनका वेटा हैरो के स्कूल मे जाया करता था। आपका उन नेहरू से कुछ रिश्ता तो नही है ?" मै उसकी वाते सुनकर चौक पडी और उसकी तरफ देखकर हँसते हुए मैने कहा कि जिस नेहरु का वह जिक्र कर रहा था, वह मेरे पिताजी थे, जो इस होटल मे वहुत वरसो पहले रह चुके थे और अव जरा गजे-से सिरवाले जो साहव मेरे साथ थे, वह वही साहवजादे थे, जो हैरो के स्कूल मे जाया करते थे। वूढा दर्वान यह सुनकर वहुत खुश हुआ और इसके वाद से वह हमारी वहुत ज्यादा खवरगीरी करने लगा। यह कमाल की वात है कि इतने वरसो के वाद भी उसे हमारा नाम याद रहा। और मुझे यह जानकर आश्चर्य और आनद भी हुआ।

पिताजी के साथ हम जहा-कही भी रहे, वहुत ठाट से रहे। ज्योही हम किसी होटल मे पहुचते, मैनेजर अपने सलाम के साथ हमारे लिए फूल भेजता। इसके वाद वह खुद यह दर्याफ्त करने आता कि हमे हर तरह का आराम हासिल है या नही। हर कोई हमारे इर्द-गिर्द रहता और कुछ देर के लिए यह सव मुझे पसद आता।

एक वार ऐसा हुआ कि पिताजी अकेले लदन जा रहे थे और हम सव लोग

पेरिस ही मे रहनेवाले थे। पिताजी ने मुझसे पूछा कि लदन से तुम्हारे लिए क्या लाऊ ? मैने कहा कि मुझे बहुत दिनो से चमडे के एक कोट की जरूरत है। जवाहर इसकी जरूरत नही समझते थे। इसलिए मुझे अबतक यह चीज नही मिली थी। पिताजी ने मुझसे वायदा किया कि कोट ले आयेगे, लेकिन वह मेरा नाप लेना भूल गये। जब वह लदन पहुचे, तो सेल्फ्रीजेस की दुकान पर जाकर उन्होने मैनेजर से मिलना चाहा। मैनेजर जब आया, तो पिताजी ने उससे कहा कि मै अपनी बेटी के लिए एक चमडे का कोट खरीदना चाहता हू, पर मेरे पास उसका ठीक नाप नही है, इसलिए क्या आप यह कर सकते है कि अपनी दूकान मे काम करनेवाली लडकियो मे कुछ ऐसी लडकियो को, जिनकी ऊचाई ५ फुट २ इच के करीब हो, एक कतार मे खडा करा दे, ताकि उनको कोट पहनाकर देखा जाये कि वह मेरी लडकी के जिस्म पर ठीक आयेगा या नही। इस गैर-मामूली दरख्वास्त से मैनेजर पहले तो कुछ झिझका, पर जब पिताजी ने ज्यादा जोर दिया, तो उसने उनकी इच्छा पूरी की। पिताजी मेरे लिए ठीक नाप का एक नफीस कोट ले आये और जिस तरह से उन्होने कोट पसद किया, उसमे उन्हे कुछ भी बहस न थी। वह उसे गलत या असाधारण चीज भी नही समझते थे। जब उन्होने यह किस्सा हमे सुनाया, तो कमला को और मुझे वह बडा दिलचस्प मालूम हुआ, पर जवाहर इसे सुनकर बिगड गये। उनका खयाल था कि पिताजी का केवल इसलिए कि वह ऐसा कर सकते थे और कोई उनसे पूछनेवाला न था, इस तरह की हरकत करना बडा ही गलत था।

नवबर, १९२७ मे हम कुछ दिनो के लिए बर्लिन आये थे। जवाहर चाहते थे कि रूसी इन्किलाब की दसवी सालगिरह के मौके पर मास्को जायें। उनके और पिताजी के नाम इसका निमत्रण भी आया था। मुझे भी वहा जाने का बडा शौक था और कमला को भी। पहले पिताजी का यह खयाल था कि यह सफर बिलकुल गैर-जरूरी है, क्योकि हमारे पास रूस मे बिताने के लिए सिर्फ एक हफ्ते का वक्त था और हमे अपना जहाज पकडने के लिए जल्द ही मर्साई आना था। जवाहर की बडी इच्छा थी और इसीलिए पिताजी भी राजी हो गये। हम सब-के-सब मास्को गये। यह एक थका देनेवाला सफर था, जिसमे बहुत कम आराम मिला और कभी-कभी तो पिताजी इस सफर मे बहुत बिगड भी जाते थे।

मास्को मे उदासी और खामोशी नजर आई। फिर भी वहा हम जिन मोटे

और सादा कपडे पहने हुए मर्दो और औरतो से मिले, उनमे कोई वात जरूर थी, अदर से निकलनेवाली कोई रोशनी, जो उन्हे दिलचस्प और खुश बनाती थी। उन्होने इस वात का पक्का इरादा कर लिया था कि अपने देश को दुनिया का सवसे अच्छा और सवसे वडा देश वनाने के लिए हर किस्म की तकलीफें वर्दाश्त करेंगे और कुर्बानिया देंगे।

हम लोग ग्राड होटल मे ठहरे। यह एक वडी इमारत थी, जिसमे वडे-वडे कमरे थे। जार के जमाने का तमाम फर्नीचर मोटे कपडे से ढक दिया गया था। इसलिए वहा के वातावरण मे किसी प्रकार का अमीरी ठाट न था। मास्को मे वडी सख्त सर्दी थी। जव मैंने सुवह घटी वजाकर नौकरानी से नहाने के लिए गरम पानी लाने के लिए कहा, तो वह अजव तरह से मेरी तरफ देखने लगी। वहुत-से इशारो से उसने मुझे यह समझाया कि मुझे नहाने के लिए इतना पानी नही मिल सकता और आखिर मै अपने-आपको क्या समझती हू, जो नहाना चाहती हू! मुझे आधा जग पानी मिल सकता है, जिससे मै अपने हाथ-मुह धो सकती हू। मुझे और मेरे साथियो को इसी आधा-आधा जग पानी से काम चलाना पडा, पर पिताजी इसके लिए तैयार न थे। सर्दी हो या गर्मी, वह विना नहाये नही रह सकते थे और चाहे वह रूस मे हो चाहे कही और, वह अपनी रोजाना गुसल की आदत वदलना नही चाहते थे। इससे होटल के कर्मचारियो को वडी परेशानी हुई, फिर भी वह गुसल करने पर अडे रहे।

मास्को मे कुछ और लोगो के अलावा पिताजी चिचेरिन से भी मिलनेवाले थे, जो रूस का विदेश-मत्री था। चिचेरिन वहुत ही होशियार आदमी था और कई भाषाए जानता था। उसके साथ मुलाकात तय हुई और एक नौजवान रूसी पिताजी को यह खवर देने आया कि वह चिचेरिन से कल सुवह चार वजे मिल सकते है, क्योकि उन्हे रात भर और वहुत-से काम है। पिताजी को इस वात का विश्वास न आया और उन्होने पैगाम लानेवाले रूसी की तरफ आश्चर्य से देखकर उसकी वात को दोहराया। रूसी ने सिर हिलाकर कहा कि आपने ठीक समझा है। आपकी मुलाकात सुवह चार वजे ही रखी गई है। पिताजी को वडा गुस्सा आया और उन्होने जानना चाहा कि सुवह चार वजे तक वह क्या करेंगे? वह उस वक्त मुलाकात के लिए जाने को तैयार न थे। इसलिए रात के एक वजे के करीव का वक्त ठहराया गया।

उत्सव बडा भारी और खूब नुमाइशी था। हमे बताया गया कि लाल फौज की परेड देखने के काबिल होती है। पर हम यह परेड न देख सके, क्योकि हम एक दिन देर से मास्को पहुचे थे। लाल चौक मे लेनिन की समाधि थी, जहा लेनिन का शरीर मसाला भरकर शीशे की अलमारी मे रखा गया था। दिन के कुछ नियत घटो मे लोगो को इसकी इजाजत थी कि वे आकर लेनिन को श्रद्धाजलि अर्पित करे। लोग सैकडो की सख्या मे लबी कतारो मे नगे सिर और चुपचाप खडे होकर लेनिन को श्रद्धाजलि अर्पित करते थे। बाहर की तरफ दो हथियारबद सिपाही खडे पहरा देते थे और अदर भी कुछ सिपाही होते थे। हमने भी वहा जाकर यह समाधि देखी। लेनिन बिलकुल जिदा मालूम देते थे और ऐसा खयाल होता था कि अभी बाते करने लगेगे।

एक रोज रूसी सरकार के तमाम मेहमानो की बडी सरकारी दावत थी। मै इस दावत मे दो रूसी अफसरो के बीच मे बैठी थी। इन दोनो की बडी शानदार दाढिया थी और वे काफी रोबदार दिखाई देते थे। वे दोनो खूब अच्छी अग्रजी और फ्रेच बोलते थे। खाना बहुत देर तक चलता रहा। मुझे प्यास लगी थी, पर आस-पास पीने की कोई चीज दिखाई नही देती थी। मै उन अफसरो से पूछना नही चाहती थी। इसलिए मै खामोश रही और इधर-उधर देखती रही कि पीने की कोई चीज मिल जाय। मैने देखा कि हर प्लेट के पास एक छोटा-सा गिलास रखा हुआ है और मेज पर बीच-बीच मे छोटी-छोटी सुराहिया रखी है। इन सुराहियो मे सादा पानी दिखाई देता था। मैने यह पानी लेने के लिए अपना हाथ बढाया, मगर मुझसे पहले एक रूसी अफसर ने सुराही उठाकर मेरा छोटा गिलास और अपना गिलास भी भर दिया। मैने देखा कि वह रूसी अफसर पूरा गिलास पी गया। मै बहुत प्यासी थी। इसलिए मैने भी यही किया, पर मैने दो-तीन घूट मे मुश्किल से आधा गिलास पिया होगा कि मेरा हलक जलने लगा। मेरी आखो मे आसू आ गये। मैने चुपके से गिलास नीचे रख दिया और अपने सामने के खाने मे से कई निवाले जल्दी-जल्दी खा लिये। काफी देर के बाद मुझे जरा अच्छा मालूम हुआ और फिर मुझे पता चला कि मैने जो चीज पी थी, वह सादा पानी नही था, बल्कि मशहूर रूसी वोद्का शराब थी।

हमने मास्को मे बहुत सी चीजे देखी। रूस मे हमने सिर्फ मास्को का ही शहर देखा। ज्यादातर गिरजाघर अजायबघर बना दिये गये थे। फिर भी कभी-कभी

यह दृश्य दिखाई देता था कि किसी गिरजाघर के पास से गुजरते हुए बूढे मर्द और औरते रास्तो मे खडी होकर अपने सीने पर क्रास का निशान बनाकर प्रार्थना करते थे। रास्तो मे हर जगह बडे-बडे पोस्टर लगे हुए थे, जिन पर लिखा था—"मजहब लोगो के लिए अफ्यून है।" फिर भी ईश्वर का खयाल लोगो के दिल और दिमाग से पूरी तरह दूर नही था।

मुझ पर जिस चीज का सबसे ज्यादा असर हुआ, वह एक रूसी जेलखाना था, जो हमने देखा। मैने सन् १९२० मे बहुत-से जेलखाने देखे थे और मुझे यह मालूम करने का शौक था कि सोवियत रूस मे राजनैतिक और दूसरे कैदियो के साथ कैसा सलूक किया जाता है। हिंदुस्तान मे जेलखानो के बाहर के बडे दरवाजो पर हथियारबद पहरेदार खडे होते है। जेलखाने के अदर भी वार्डरो के पास डडे और कभी-कभी और भी हथियार होते है। जब हम सोवियत जेलखाने मे पहुचे, तो हमने देखा कि बाहर के दरवाजे पर एक आदमी बदूक लिये पहरा दे रहा है। अदर जो पहरेदार थे, उनके पास कोई हथियार न था। उनके पास न तो बदूक थी, न डडे। हम सीधे अदर चले गये। जेलखाने के गवर्नर ने हमसे कहा कि हम जो भी कोठरी देखना चाहे, देख सकते है। मुझे नही मालूम कि यह बात खास तौर पर उस वक्त दर्शको को खुश करने के लिए की गई थी या हमेशा यही किया जाता है। हमने कुछ कोठरिया देखनी चाही और वे हमे दिखाई गई। ज्यादातर कैदियो की अपनी अलग कोठरिया थी। हर कोठरी के दरवाजे खुले पडे थे और कैदी जब चाहते थे, उनमे आ-जा सकते थे। बाहर के बरामदो मे पहरा था मगर पहरेदार किसी तरह से कैदियो के काम मे दखल नही देते थे। कुछ कैदी अपने रेडियो सुन रहे थे, जो खुद उन्होने लगाये थे। कुछ गानेवाले थे, जो अपने बाजो पर गाने-बजाने की मश्क कर रहे थे। कैदियो की अपनी सगीत मडली थी और हफ्ते मे एक बार उनका गाने-बजाने का प्रोग्राम हुआ करता था। कुछ लोग अपने कमरो मे बैठे हुए सगीत-रचना कर रहे थे और कुछ लोग बाहर आगन मे या कारखाने मे काम कर रहे थे। इन लोगो मे हिंदुस्तान के जेलखानो के कैदियो से ज्यादा इत्मी-नियत नजर आती थी। हिंदुस्तान के जो कैदी मैने देखे है, उनके चेहरो पर एक किस्म का खौफ हर वक्त छाया रहता है और उन्हे जगली जानवरो की तरह रखा जाता है। हालाकि यह रूसी जेल, जो हमने देखी, बहुत अच्छी थी, फिर भी रूसी जेलखानो के बारे मे हमने जो कुछ पढा और सुना है, उनकी बुनियाद पर यह नही

कहा जा सकता कि हर सोवियत जेल ऐसी ही अच्छी होगी।

मास्को मे मेरे साथ एक और भी दिलचस्प वात हुई। एक रोज मै एक जलसे मे वैठी थी। मै ढाका-साडी पहने हुए थी और मेरे शरीर पर किसी तरह का गहना नही था। उन दिनो जेवर और गहने नापसद किये जाते थे। एक कम्युनिस्ट लडकी, जो कुछ देर से मेरे पास वैठी थी, मेरी तरफ झुकी और मेरे माथे पर जो लाल कुकुम लगा था, उसे छूकर कहने लगी, "तुमने यह क्यो लगा रखा है? मुझे आशा है कि यह कोई मजहवी चिह्न न होगा, क्योकि रूस मे हम लोग मजहव पसद नही करते।" मै यह सुनकर चकरा-सी गई। मैने इस वात पर पहले कभी सोचा भी न था। मै कुकुम हमेशा की आदत के अनुसार लगाती थी। जव मुझसे यह सवाल किया गया, तो मैने सच वात वता दी, पर उस लडकी को विश्वास न हुआ। वह कहने लगी, "अगर यह कोई धार्मिक रस्म नही है, तो फिर यह श्रृङ्गार के तौर पर तुमने लगाया होगा। क्या यह सचमुच श्रृङ्गार के लिए है? हम कम्युनिस्ट इसे पसद नही करते कि अमीरी की तरह श्रृङ्गार की चीजे इस्तेमाल करके अपनी खूवसूरती को वढाने की कोशिश की जाय।" मैने उससे कहा कि मै अभी कम्युनिस्ट नही हू, पर हो सकता है कि कभी हो भी जाऊ। फिर भी मुझे रूसी लोग पसद आये। उस लडकी को कुछ तो तसल्ली हुई। फिर भी वह मेरी तरफ कुछ शक भरी नजरो से देखती रही कि गोया मेरा उद्धार मुमकिन नही। यह वात सचमुच वडी ही अजीव थी कि उन दिनो रूस मे अच्छे कपडे पहनने से आदमी कितना अनोखा मालूम होता था और कैसी शर्म आती थी! मामूली-से-मामूली साडी भी वहा वडी भारी और वढिया मालूम होती थी। फिर भी मुझे इस वात पर आश्चर्य होता था कि क्या आम लोगो की हालत वेहतर वनाने का निश्चय करने के साथ यह भी जरूरी है कि कला और खूवसूरती के तमाम विचार छोड दिये जाये! हो सकता है कि मै किसी ऐसी औरत से मिली होऊ, जो इन वातो को समझ ही नही सकती हो!

एक हफ्ते वाद हम वर्लिन वापस लौटे। मास्को मे हम वहुत कम रहे, पर हमारा अनुभव वहुत कीमती था। वहुत से काम वहा अभी शुरुआत की अवस्था मे थे। मुझ पर जिस चीज का असर हुआ, वह यह थी कि हम जिस किसीसे भी मिले, उसमे एक नया जोश, नया निश्चय और नई उम्मीद पाई। ऐसा जोश और निश्चय मुसीवतो के पहाड पर भी विजय पा सकता है। मेरी हार्दिक आशा थी

कि ये लोग आखिर एक ऐसा सुखी समाज पैदा करने मे कामयाब होगे, जो सारी दुनिया मे मानव-जाति की हालत बेहतर बनाने मे मदद दे सकेगा।

पिताजी के लिए नये रूस को और रूस के सामुदायिक काम के खयाल को समझना मुश्किल हुआ। उनकी तबीयत और उनका मिजाज भिन्न था और उनके लिए यह आसान न था कि ऐसे इन्किलाबी विचारो को आसानी मे समझकर उनसे सहमत हो जाये। फिर भी उन्हे खुशी हुई कि वह रूस गये। जो कुछ थोडा-बहुत उन्होने वहा देखा, वह सचमुच देखने लायक था। वह एक नया देश था, जो अभी बन रहा था और हम सब पर उसका बडा गहरा असर पडा। हम वहा सिर्फ गिनती के कुछ दिन रहे, पर हमने जो कुछ देखा, उसे हम कभी न भूलेंगे।

: ४ :

"क्या हम उन बीते सुखमय दिनो की याद में आँसू बहायेंगे? उन दिनो की याद करके लाज से सर झुकायेंगे? या शर्मायेंगे? हमारे पूर्वजो ने अपना खून बहाया था। धरती माता! अपनी छाती से उन मृत स्पार्टन वीरो मे से कुछ हमें वापस दे दे, तीनसौ में से तीन ही कि हम एक नई थर्मोपली बना सकें।"

—बायरन

मास्को से हम बर्लिन और वहा से पेरिस आये। कुछ हफ्ते बाद हम मर्साई रवाना हुए और वहा से वापस घर।

हालाकि मै घर लौटने और माताजी से, जिनसे मै कभी इतने दिन अलग नही रही थी, मिलने के लिए बहुत बेचैन थी, फिर भी जिस दिन हम पेरिस छोड रहे थे, मुझे बडा रज हुआ और मेरी तबीयत परेशान रही। मैने वहा बडे अच्छे दिन गुजारे थे, और उस खूबसूरत और खुशनुमा शहर से मुझे कुछ प्रेम-सा हो गया था। हमारे वहा से चलने का समय बिलकुल करीब आने तक मै यह महसूस न कर सकी थी कि पेरिस का आकर्षण कितना गहरा और लुभावना है। हमारी गाडी जब धीरे-धीरे स्टेशन से बाहर निकलने लगी, तो मै अपने मन मे सोचती थी कि न मालूम फिर पेरिस कब आऊगी। बहरहाल मेरे मन मे यह बात न मालूम क्यो आ गई थी कि या तो मै पेरिस फिर कभी देख ही न सकूगी, या देखूगी, तो वह बहुत-कुछ बदला हुआ होगा। उस समय मेरे मन मे इस बात की शका भी पैदा नही हुई कि वही पेरिस, जिससे मुझे मुहब्बत है, कुछ बरसो बाद नात्सियो के हाथो मे होगा और वह उल्लास, सगीत और कला, जिसके लिए पेरिस दुनिया-भर मे मशहूर है, उससे रुखसत हो चुके होगे।

पिताजी ने फैसला किया था कि वह कुछ महीने यूरोप मे रहेगे। जवाहर, कमला, इदिरा और मै दिसबर, १९२७ मे कोलबो होते हुए हिदुस्तान लौटे। उस साल सर्दियो मे काग्रेस मद्रास मे हो रही थी। उसमे उपस्थित होने के लिए हम मद्रास उतर पडे। दस दिन मद्रास मे रहकर हम इलाहाबाद लौट आये।

घरपर फिर एक वार उसी वायुमडल मे आकर, जो मुझे दिल से भाता था, मुझे कुछ अजीब बेचैनी-सी होमे लगी। यूरोप से वापसी के वाद शुरू के कुछ महीने मैं सुख और इतमीनान से महरूम रही। यूरोप मे जीवन वडा ही व्यस्त सा रहा था। घर पर मै कुछ वेकारी-सी महसूस करती थी और मेरी समझ मे न आता था कि वहुत-कुछ पढने के आलावा अपना समय किस तरह विताऊ। मेरा जी घवराने लगता था और मै अपने पुराने तरीके के जीवन को फिर किसी तरह शुरू नही कर पाती थी। इन्ही दिनो मैंने सुना कि इलाहावाद मे माण्टेसरी पद्धति का एक स्कूल खुलनेवाला है। मुझे छोटे वच्चो से हमेशा वडी दिलचस्पी रही थी और माण्टेसरी पद्धति से भी, जिसका मुझे अच्छा खासा ज्ञान था। इसलिए मैंने फैसला किया कि इस स्कूल मे अपने लिए जगह हासिल करू। जगह मिलना तो आसान था, पर मै यह भूल गई थी कि इस बारे मे मुझे अपने पिताजी का सामना करना होगा। इन्ही दिनो बहन स्वरूप अपने पतिके साथ फिर यूरोप गईं और अपनी छोटी लडकियो चद्रलेखा और नयनतारा को माताजी के पास छोड गईं। उस जमाने मे माताजी वहुत बीमार थी। इसलिए उन बच्चियो की देख-भाल मुझी को करनी पडती थी। मुझे उनसे वडी मुहब्बत थी, फिर भी उनकी देख-रेख का काम कुछ आसान न था।

पिताजी अभी-अभी यूरोप से लौटे थे और एक दिन जव वह जरा खुशी मे थे, तो मैंने धीरे से उस स्कूल मे काम करने की वात छेडी। मैंने उनसे कहा कि मेरी तवीयत अकुलाती है और मै कोई ऐसा काम चाहती हू, जिसमे रोजाना मेरे पाच घटे खर्च हो और काम ऐसा हो, जो मुझे पसद भी हो। पिताजी इस विचार से सहमत हुए और पूछने लगे कि क्या तुम्हारे खयाल मे कोई ऐसा काम है? उन्होने कहा कि मै उनकी या जवाहर की सेक्रेटरी का काम करू। यह वात अगर होती, तो वडी ही अच्छी होती, पर मै जानती थी कि यह हो नही सकेगा। इस काम का वक्त मुकर्रर नही होगा और काम का ठीक से कोई ढग भी न होगा। मैंने उनसे कहा कि मेरे मन मे यह वात न थी। मैंने उनसे स्कूल का जिक्र किया और कहा कि मै उसमे पढाने का काम करना चाहती हू। पहले तो पिताजी को मेरी वात का विश्वास ही न आया, पर जव उन्होंने देखा कि मै सचमुच यही चाहती हू, तो उन्होने उसपर सोचने से भी साफ इन्कार कर दिया। उन्होने कहा कि मैं छोटे वच्चो के साथ रोजाना इतना वक्त गुजारकर खुश न रह सकूगी। अगर मुझे तजुर्बा ही करना हो, तो रोज एक-दो घटे वहा जाकर वक्त गुजार सकती हू। मैंने

उनसे कहा कि आप मेरा मतलव नही समझे और फिर वडी हिम्मत से काम लेकर (और अव मै जो कुछ कहनेवाली थी, उसे पिताजी से कहने के लिए सचमुच हिम्मत की ही जरूरत थी) मैने चुपके से उनसे कहा कि मैने इस काम के लिए दरख्वास्त दे दी है और मेरी दरख्वास्त मजूर भी हो गई है। मै अव सिर्फ उनकी इजाजत चाहती हू। मैने उनसे यह भी कहा कि मै मुफ्त काम नही करूगी। मै अपनी वात पूरी तरह खत्म भी नही कर पाई थी कि पिताजी मुझ पर वरस पडे। मै जानती थी कि यही होगा। पिताजी को इस पर एतराज नही था कि मै काम करू, पर वह चाहते थे कि मैं काम मुफ्त करू। हमने इस वारे मे वडी लम्बी वहस की, पर मै अपनी वात पर अडी रही और पिताजी भी नही झुके। गर्जेकि मेरे श्रमजीवी लडकी वनने के सपने पर पानी फिर गया। मुझे पिताजी से इतना अधिक प्रेम था कि मै उनकी मर्जी के खिलाफ कोई काम कर ही नही सकती थी। पर सच यह है कि जिदगी मे पहली वार उनकी सत्ता मुझे वहुत वुरी मालूम हुई। मैने सब्र किया और ऐसे प्रयत्नो मे लगी रही कि कोई ऐसा रास्ता निकाला जाय, जिससे पिताजी के इस वारे मे विचार वदले। पर यह कोई आसान काम न था। मैने माताजी की मदद लेने की कोशिश की। उन्होने भी इससे इन्कार किया। उन्होने इसके जो कारण वताये, वे और थे। वह चाहती थी कि मै शादी करके घर वसाऊ। मैने अगर नौकरी कर ली, तो मेरी शादी करना मुश्किल हो जायगा। मै जवाहर के पास गई और मुझे यह देखकर वडी खुशी हुई कि वह सिर्फ इससे सहमत ही नही हुए कि मै यह काम करू, वल्कि इससे भी सहमत हुए कि उसका महनताना भी जरूर लू। उन्होने वायदा किया कि वह पिताजी को इस वातपर राजी कर लेगे कि वह मुझे इजाजत दे दे। जवाहर के इस फैसले से मुझे वडी खुशी हुई। इससे मेरे दिल का वोझ वहुत कुछ कम हुआ और मैने इस मामले को जवाहर पर छोड दिया। पिताजी मे और जवाहर मे इस सवाल पर वडी वहसे रही, पर अत मे पिताजी ने इजाजत दे दी और मै उस स्कूल मे पढाने लगी। मैने यह काम कोई एक-डेढ साल किया और इससे मुझे वडा सतोप हुआ। वाद मे मैने इस्तीफा दे दिया, क्योकि मै राजनैतिक आदोलन मे भाग लेना चाहती थी और दोनो काम एक साथ नही हो सकते थे। राजनैतिक काम पूरे वक्त का काम था। सत्याग्रह आदोलन शुरू हो गया था और मै अपना पूरा वक्त उसीमें देना चाहती थी।

१९२८ मे काग्रेस का अधिवेशन कलकत्ते मे हुआ और उसके सदर पिताजी

वने। इलाहाबाद से हम लोग एक वडे दल के साथ रेल मे लगे हुए खास तौर पर अलहदा डिब्बो मे बैठकर कलकत्ता पहुचे। कलकत्ते मे हम काग्रेस के मेहमान की हैसियत से एक शानदार मकान मे ठहराये गये, जिसमे पताकाए, राष्ट्रीय झडे और फूल-पत्तो की सजावट राष्ट्रपति के सम्मान मे की गई थी। दरवाजे के वाहर छोटे लडके वर्दी पहनकर घोडे पर चढे हुए पहरा दिया करते थे। वे वडे चुस्त और मेहरवान थे। जब कभी पिताजी घर के वाहर मोटर मे निकलते, तव सबसे पहले ये सधे और तने हुए घुडसवार उन्हे वडी शानोशौकत के साथ ले जाते और ऐसा नजर आता था कि ये घुडसवार अपनी अहमियत को अच्छी तरह समझ रहे है। इसके बाद स्वयसेवको की वर्दी मे सुभाष बोस रास्ता दिखानेवाली गाडी मे सवके साथ रहते और इन सबके बाद पिताजी की मोटर होती। यह नजारा देखने लायक होता। कुछ दिनो वाद इस ठाठ-बाट से पिताजी कुछ ऊब-से गये और उन्होने प्रवधको से कहा कि वह नही समझते कि उनकी जिदगी खतरे मे है, इसलिए वे उन्हे बिना किसी पहरे के आने जाने दिया करे।

इसी अधिवेशन मे पिताजी और जवाहर के बीच का मतभेद सामने आया। अक्सर आपस मे उन लोगो मे वहस-मुवाहसा हुआ करता था और कभी भी वे एकमत न हो पाते थे। पर मतभेद इस हद तक कभी नही पहुचा था। पिताजी इस वात के लिए वहुत उत्सुक थे कि औपनिवेशिक स्वराज्य का समर्थन सर्वदल सम्मेलन करे, क्योकि यह सम्मेलन पूर्ण स्वाधीनता की माग का समर्थन नही करना चाहता था। जवाहर इस समझौते के लिए राजी नही थे। पिता और पुत्र का यह मानसिक सघर्ष चलता रहा और घर और वाहर के वातावरण मे दिन-प्रति-दिन तनाव वढता ही गया। खुले अधिवेशन मे औपनिवेशिक स्वराज्य के पक्ष मे प्रस्ताव पास हो गया, मगर जवाहर ने उसका विरोध किया था।

अगले साल हिंदुस्तान के कोने-कोने मे वहुत जागृति नजर आई। जनता मे राजनैतिक चेतना दिन-पर-दिन वढती गई और ऐसा लगता था कि लोग एक नये उत्साह, साहस और निश्चय के साथ आगे वढ रहे है। चारो ओर एक हरकत दिखाई देने लगी, जो धीरे-धीरे वढती जा रही थी। ऐसा मालूम होता था कि कोई वहुत वडी वात होनेवाली है—कोई ऐसी वात, जिसे दुनिया की कोई ताकत रोक न सकेगी और यह वात खासकर सयुक्त प्रात के किसानो मे ज्यादा नजर आती थी, जिनमे उन दिनो वडी भारी वेचैनी फैली हुई थी। नौजवानो का आदोलन भी

तेजी से बढ रहा था और बहुत थोडी मुद्दत मे हिंदुस्तान भर मे नौजवानो की सभाए कायम हो गई थी। नौजवान सभाए करते और प्रतिज्ञा करते कि हिंदुस्तान की आजादी के लिए काम करेंगे। इन सभाओ मे काम करनेवाले जवान लडके और लडकिया देहातो मे जाते और कुछ मुद्दत तक वहा के लोगो मे रहकर काम करते। एक नौजवान बगाली विद्यार्थी के साथ मे इलाहाबाद की यूथ लीग की जॉइंट सेक्रेटरी थी और जवाहर हमारे साथ थे। मेरे बगाली साथी एक अच्छे बहादुर नौजवान थे, जिनमे बडा जोश और उत्साह था। पर दो साल के बाद वह काग्रेस के प्रति वफादारी की अपनी प्रतिज्ञा भूल गये और अपने विचार बदलकर उन्होने अपने कार्य का क्षेत्र भी बदल डाला। फिर पता भी न चला कि वह कहा है। उन दिनो के मेरे बहुत-से साथी अलग-अलग दलो मे चले गये है। उनमे से कई एक कम्युनिस्ट बन गये है। अब अगर कभी उनसे मेरी मुलाकात होती है, तो ऐसा मालूम होता है कि अपने उन पुराने साथियो से नही मिल रही हू, जिनके साथ इतने दिनो काम किया था, एक साथ लाठिया खाई थी और दूसरी तकलीफे उठाई थी, बल्कि ऐसे लोगो से मिल रही हू, जिनसे गोया कभी जान-पहचान भी न थी।

दूसरे साल जवाहर काग्रेस के सदर चुने गये, जिसका अधिवेशन लाहौर मे हुआ। काग्रेस के पूरे इतिहास मे इससे पहले कभी यह बात नही हुई थी कि बाप के बाद बेटे को सदारत मिली हो और शायद दुनिया भर मे, काग्रेस जैसी बडी सस्थाओ के इतिहास मे भी, ऐसी बात शायद ही हुई हो। पिताजी के लिए यह मौका बडा ही भारी और शानदार था। बडी खुशी और गर्व से उन्होने काग्रेस की सदारत जवाहर को सौपी, जो न सिर्फ उनकी धन-दौलत के उत्तराधिकारी थे, बल्कि राजनैतिक दुनिया मे काग्रेस की गद्दी पर उनकी जगह ले रहे थे और यह सबमे बडा आदर था, जो हमारा देश अपने किसी पुत्र को दे सकता था।

कांग्रेस का यह अधिवेशन कई कारणो से स्मरणीय रहा। दिसबर की एक सुबह को, जब कडाके की सर्दी पड रही थी, हजारो बल्कि लाखो आदमी रावी नदी के किनारे जमा हुए और उन्होने पूर्ण स्वतत्रता की प्रतिज्ञा की। उस प्रस्ताव के साथ हमारे देश के इतिहास मे एक नया जमाना शुरू हुआ। उस मौके पर मर्द, औरते और बच्चे वहा इकट्ठे हुए थे। उन्हे सर्दी की जरा भी पर्वाह न थी। साफ नीले आकाश के नीचे खडे होकर उन्होने बडे भक्ति-भाव से अपने देश की पूर्ण स्वतत्रता प्राप्त करने का निश्चय किया। जवाहर ने यह प्रस्ताव पढा और उस पूरे जन-समूह

ने उसको उनके साथ-साथ दोहराया।

इस तरह हमारे देश ने आजादी हासिल करने का निश्चय कर लिया और १९२९ की उन सर्दियो से अबतक उसके कुछ बच्चो ने भले उसे छोड दिया हो, पर हजारो, बल्कि लाखो, हिंदुस्तानी अपने उस फैसले पर मजबूती से जमे हुए है, और हर तरह की मुसीबतें उठाकर स्वराज्य हासिल करने का प्रयत्न कर रहे है जिसके बिना हिंदुस्तान को चैन नही मिल सकता। काग्रेस का अधिवेशन खत्म होते ही हम लोग इलाहाबाद लौटे, पर भविष्य कुछ रोशन दिखाई नही देता था। यह तो साफ जाहिर था कि मुसीबतें परेशानिया और तकलीफे हमारे सामने है। पर फिर भी इन बातो से हमारे दिल बैठते नही थे, बल्कि हम अपने अदर एक प्रकार का जोश और उत्साह पाते थे, जो हमे इस बात के लिए तैयार करता था कि बिना झिझक के आगे बढे और जो कुछ हमारी किस्मत मे हो, उसे बहादुरी से सहे।

काग्रेस के अधिवेशन से कुछ महीने पहले पिताजी ने हमारा पुराना मकान देश को दान दे दिया। एक मुद्दत से उनका यह विचार था और उसे पूरा करते समय उन्हे बडी खुशी हुई। इसके बाद हम उस नये घर मे रहने गये, जो उन्होने जवाहर और उनके परिवार के लिए बनवाया था। यह नया मकान बडा ही सुदर था और पिताजी को उस पर बडा गर्व था। जब हम लोग यूरोप मे थे, तो इस नये मकान के लिए बिजली की और दूसरी चीजें खरीदने मे मैंने पिताजी के साथ घटो सफर किया था। पिताजी ऐसे काम से कभी थकते नही थे और वह इस काम मे जो रस लेते थे, उसे देखने मे भी बडा मजा आता था।

इस नये मकान का नाम भी आनद भवन रखा गया, क्योकि पिताजी आनद भवन के सिवा कही रह ही नही सकते थे। पुराने मकान का नाम बदलकर स्वराज्य भवन कर दिया और अब भी उसके एक हिस्से मे काग्रेस का अस्पताल और दूसरे हिस्से मे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी का दफ्तर है। कभी-कभी जब पुलिस इस पर कब्जा करके मोहरें लगा देती है, तब अलबत्ता वह बद हो जाता है और खाली पडा रहता है और अक्सर ऐसा हुआ ही करता है।

१२ मार्च, १९३० को गाधीजी अपने चुने हुए साथियो को साथ लेकर नमक का कानून तोडने के लिए दाडी की तरफ रवाना हुए। लोगो का एक बडा भारी मजमा उनके पीछे-पीछे जा रहा था और पूरे हिंदुस्तान की नजरे इस छोटे-से आदमी पर लगी थी, जो अहिंसा के हथियार से एक अजीब लडाई इसलिए शुरू कर रहा था

कि उसे वह आजादी और इन्साफ दिलाये,जिससे वह इतनी लंबी मुद्दतसे महरूम रखा गया था। सरकार को नमक का जो एकाधिपत्य हासिल था, उसके खिलाफ आवाज उठाने के लिए नमक-कानून तोडने मे हिंदुस्तान का हर शहर और गाव गाधीजी के साथ हो गया। इलाहाबाद मे हमने बडा भारी जुलूस निकाला, जिसके अत मे एक सभा हुई, जहा जवाहर ने सबसे पहले कानून के खिलाफ नमक तैयार किया।

आमतौर पर जो आशा थी,उसके खिलाफ, गाधीजी को दाडी मे गिरफ्तार नही किया गया। उन्हे आगे के गाव मे जाने दिया गया, जहा आधी रात को वह गिर-फ्तार कर लिये गये। यह एक अजीब बात है कि इतनी ताकत रखनेवाली सरकार भी चोरो की तरह रात के अधेरे मे यह काम करने पर मजबूर हुई, क्योंकि वह डरती थी कि जिन लोगो को वह दमन से दबा सकती है, उनका गुस्सा इस बात से फट न पडे।

इसके कुछ ही दिनो बाद जवाहर भी पकडे गये और अब हर शहर और गाव मे आजादी के लिए काम करने की लहर-सी दौड गई। अहिसा को माननेवाले, पर आजादी हासिल करने का निश्चय किए हुए लोगो के खिलाफ गिरफ्तारियो, गोलियो, लाठी के हमले और दूसरे भीषण दमन के तरीके शुरू हो गये। लोग अपनी इज्जत और अपने कीमती हको की हिफाजत के लिए सीना तानकर खडे हो गये और उन्होने सरकारी अधिकारियो और पुलिस के हमलो का बहादुरी से मुकाबला किया। माटेसरी स्कूल मे अपनी जगह से इस्तीफा देकर मै काग्रेस के स्वयसेवक-दल मे शामिल हो गई और विदेशी कपडे की दूकानो पर धरना देने, स्वयसेवको की कवायद, जलूस निकालने और ऐसे ही और कामो मे, जो काग्रेस के नेता मुझे सौपते थे, मै अपना वक्त बिताने लगी। पिताजी को यह बात पसद न थी कि कमला, मेरी बहन स्वरूप और मै दिन भर झुलसा देनेवाली गर्मी मे मारे-मारे फिरें, पर उन्होने इस बारे मे कभी हमसे सख्ती से बहस नही की और न हमे इस बात पर मजबूर किया कि हम जो काम कर रहे थे, उसे छोड दे। उनकी सेहत ठीक नही थी और वह चाहते थे कि उनके बच्चे उनके पास रहे। जवाहर जेल मे थे और पिताजी नही चाहते थे कि हममे से कोई जेल जाये। सेहत की खराबी के बावजूद वह आदोलन चलाने के काम को रोक नही सकते थे, पर आराम के बिना सुबह से लेकर शाम तक काम करते रहने का बोझ ऐसा नही था, जो वह उठा सकते। डाक्टरो ने उन्हे सलाह दी कि वह आराम करे। पर हुकूमत ने डाक्टरो से भी पहले ३० जून १९३० को उन्हे गिरफ्तार कर लिया। नतीजा यह हुआ कि वह पहाड पर जाने

की वजाय जमना के उस पार जाकर नैनी जेल मे दाखिल हो गये।

पिताजी ने जेल मे जो दस हफ्ते गुजारे, उनमे उनकी तवीयत खराव ही होती गई। जव उनकी हालत इतनी खराव हो गई कि वह अस्थिपजर रह गये, तब जाकर ब्रिटिश हुकूमत को उन्हे छोडने का खयाल आया। उनके वाहर आते ही हम सव मसूरी गये, जहा पहाडी हवा और घर के आराम से उनकी हालत कुछ सभली और उनके कमजोर और थके हुए जिस्म मे कुछ ताकत आई। जवाहर भी इन्ही दिनो छोड दिये गये थे। वह इलाहावाद ही रहते और कभी-कभी हमसे मिलने मसूरी आते थे। उनके आने से पिताजी को वडी मदद और राहत मिलती थी।

पर जवाहर ज्यादा दिन आजाद नही रह सकते थे और वहुत जल्द उनके फिर एक वार पकडे जाने की अफवाहे फैलने लगी। पिताजी ने फैसला किया कि जिस कदर जल्द मुमकिन हो, इलाहावाद वापस जाये। उन्होने डाक्टरो का मशविरा भी नही माना। १८ अक्तूवर को हम सव मसूरी से रवाना हुए। जवाहर और कमला हमसे मिलने स्टेशन आये, पर गाडी देर मे आ रही थी, इसलिए जवाहर ज्यादा ठहर नही सके। उन्हे एक जलसे मे जाना था। हजारो किसान आस-पास के देहातो से इस सभा के लिए आये थे। सभा के वाद जवाहर और कमला घर आ रहे थे, तो उनकी गाडी हमारे घर के करीव ही रोक दी गई और जवाहर को गिरफ्तार करके फिर एक वार नैनी जेल भेज दिया गया। जवाहर अपने उस वीमार वाप से, जो उनकी वापसी की राह देख रहे थे, मिल भी न सके।

जवाहर की गिरफ्तारी अचानक नही थी, फिर भी पिताजी को इससे वडा धक्का पहुचा। उन्हे आशा थी कि वह जवाहर से मिलकर राजनैतिक और कुटुव के वारे मे भी कुछ वाते कर सकेंगे। पर ऐसा न हो सका। पिताजी कुछ देर तो रज के मारे अपना सिर झुकाकर वैठे रहे, पर उनका शेरो जैसा वहादुर दिल ज्यादा देर किसी कमजोरी को वर्दाश्त नही कर सकता था। उन्होने अपना सिर उठाकर ऐलान किया कि मै अव काम शुरू करूगा और डाक्टर मुझे वीमार समझकर काम से न रोके। यह वात वडी ही अजीव थी कि केवल अपनी आत्म-शक्ति से काम लेकर उन्होने उस खौफनाक वीमारी को कैसे दवा दिया, जो उन पर कब्जा कर चुकी थी। यह सव थोडे समय के लिए ही था। विना किसी झिझक के पिताजी ने काम शुरू कर दिया और कानून-भग के आदोलन मे फिर एक वार नई जान डाल दी। धीरे-धीरे उनकी हालत और खराव होती गई। जवाहर ने उन्हे

इस वात पर राजी किया कि वह आराम करे और समुद्र-यात्रा पर जाये। मै उनके साथ जानेवाली थी, पर जव हम कलकत्ते पहुचे, तो उनकी हालत खराव हो गई और सफर का इरादा छोड देना पडा। मै कुछ हफ्ते पिताजी के साथ कलकत्ते मे रही। ये कुछ हफ्ते वडे ही दिल तोडनेवाले थे। पिताजी को यह पता चल चुका था कि अव वह ठीक न होगे और अव कोई इलाज काम नही दे सकता। फिर भी वह मायूस नही थे, वल्कि अपनी वीमारी का मजाक उडाते थे, पर अपने दिल मे वह जानते थे कि अव मामला कुछ ही महीनो का है। उनका साहस आखिर वक्त तक कमाल का था।

एक रोज यह खवर आई कि कमला गिरफ्तार हो गईं। इससे पिताजी को वडी तकलीफ हुई; क्योकि कमला की सेहत ठीक न थी। अव पिताजी चाहते थे कि उसी वक्त इलाहावाद चले जाये। पर डाक्टरो ने उन्हे कुछ दिन और वही रहने पर राजी किया। उन्होने मुझे फौरन इलाहावाद भेजा और कुछ दिनो वाद परिवार के और लोगो के साथ खुद भी चले आये। मेरी कलकत्ते से वापसी के वाद एक अजीव घटना हुई। मेरे वहुत-से दोस्त और साथी रोज गिरफ्तार हो रहे थे और उनके मुकदमे जेल ही मे चलते थे। इसमे से जो लोग इस मौके पर हाजिर रहना चाहते थे, उन्हे डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट से इजाजत लेनी पडती थी। यह डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट वडे ही तग करनेवाले और धाधलेवाज आदमी थे। एक रोज मै उनके पास इजाजत लेने गई, क्योकि उस दिन यूथ लीग की एक पूरी टोली पर मुकदमा चलनेवाला था। शायद मुझे देखते ही उन्हे गुस्सा आ गया। कहने लगे, "यह क्या! तुम फिर आ गई? तुम लोग अपना काम क्यो नही करते और मुझे अपना काम क्यो नही करने देते?" मैने खामोशी से जवाब दिया कि मै यूथ लीग की सेक्रेटरी हू, इसलिए इन लोगो के मुकदमे के वक्त हाजिर रहना मेरा काम है। पहले उन्होने इजाजत देने से इन्कार किया। मैने उनसे कहा कि जवतक आप इजाजत न देगे, मैं ठहरी रहूगी, चाहे मुझे दिन भर ही क्यो न ठहरना पडे। इस जवाव ने उन्हे लाजवाव कर दिया। उन्होने एक पर्चे पर इजाजत लिख दी और वह पर्चा मेरी तरफ वढाते हुए कहा, "अव खुदा के लिए यहा न आना। तुम लोग मुझे पागल वना दोगे।"

मै मुकदमा सुनने गई। मुझे जरा भी खयाल न था कि हमारे दोस्त डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटसाहव मुझे धोखा देगे, पर उन्होने धोखा दिया। जव मै अपने दोस्तो से रुखसत होने लगी और अपनी एक वहन के साथ वाहर जाने लगीं, तो हम दोनो

को एक हफ्ता पहले किसी गैर-कानूनी जमात मे शामिल होने के इलजाम मे गिरफ्तारी का वारट बताकर पकड लिया गया। हम पहले तो कुछ झिझके, पर इसका कुछ भी इलाज न था। मेरी चचेरी बहन श्यामकुमारी नेहरू सियासी कामो मे सक्रिय भाग नही लेती थी। वह वकील थी और केवल एक वकील की हैसियत से मुकदमा देखने आई थी। पर उन दिनो किसीका नेहरू खानदान से होना ही उसकी गिरफ्तारी के लिए काफी था। हमे एक महीने की जेल या सौ रुपया जुर्माने की सजा दी गई।

मुझे सिर्फ एक बात की वजह से दुख था। पिताजी बहुत बीमार थे और उन्होने बार-बार मुझसे कहा था कि मै उस वक्त जेल न जाऊ। मै नही चाहती थी कि वह यह समझे कि मैने जान-बूझकर उनकी मर्जी के खिलाफ ऐसा किया है, पर मै उन्हे समझा भी किस तरह सकती थी? जाडे का मौसम था। जेल मे हमारी कोठरी बडी ही ठडी और गदी थी और उसमे कीडे-मकोडे चारो तरफ फिर रहे थे। श्यामकुमारी ने और मैने थोडी देर एक-दूसरे का दिल बहलाने की कोशिश की और फिर हम खामोश हो रहे। मुझे पिताजी के खयाल से बडा दुख हो रहा था और मै यही आशा करती थी कि सही बात वह समझेगे। आखिर मै सो गई और कई घटो के बाद जजीरो की झकार और दरवाजे खुलने की आवाज से मेरी आख खुली। वे आवाजे और रोशनी करीब आती गई और हमने देखा कि वे हमारी तरफ आ रही है। हमारी कोठरी का दरवाजा खुला और जेल की मेट्रन, जेलर और दो वार्डर अदर दाखिल हुए। मेट्रन ने हमसे कहा कि हम छोड दिये गये है, क्योकि हमारा जुर्माना अदा कर दिया गया है। मै इसपर मुश्किल से विश्वास कर सकी, क्योकि मै जानती थी कि पिताजी किसी हालत मे भी जुर्माना न देगे। बहरहाल हमे छोड दिया गया था। इसलिए हमने अपने बिस्तर बाधे और बाहर निकले। दफ्तर मे हमने देखा कि हमारे एक वकील दोस्त हमे घर ले जाने के लिए बैठे हुए है। हमने उनसे पूछा कि हमारा जुर्माना किसने अदा किया, पर उन्होने जवाब दिया कि मै बता नही सकता। जुर्माना मेरे पिताजी ने या श्यामकुमारी के पिताजी ने नही दिया था, बल्कि एक दोस्त ने दिया था, जो अपना नाम जाहिर नही करना चाहते थे। उस वक्त आधी रात गुजर चुकी थी और हमने कुल मिलाकर कोई बारह घटे जेल मे गुजारे थे।

मै घर पहुची, तो देखा कि हर तरफ अधेरा है, क्योकि किसीको भी मेरे

छूटने की खबर न थी। सिर्फ मेरी माताजी जाग रही थी और बैठी रामायण पढ रही थी। दूसरे दिन सुबह मै पिताजी के कमरे मे गई। मुझे देखकर उन्हे माताजी से भी ज्यादा आश्चर्य हुआ। खुशी भी हुई, पर साथ ही इस बात से तकलीफ भी कि मेरा जुर्माना अदा किया गया था। दूसरे दिन सुबह मैने अखबारो मे उनका वह बयान पढा, जो उन्होने पहले दिन मेरी गिरफ्तारी के बाद दिया था। उनके दोस्तो ने आकर उनसे कहा कि अगर आप जुर्माना अदा नही करना चाहते, तो हम जुर्माना दे दे। पिताजी इस पर बहुत बिगडे और उन्होने कहा कि यह मामला उसूल का है और अगर किसीने यह जुर्माना अदा किया, तो मुझे बडी तकलीफ होगी और मै उसे अपने साथ दोस्ती नही, बल्कि दुश्मनी समझूगा। फिर भी पिताजी उस समय बहुत बीमार थे, इसलिए हमारे एक दोस्त ने यह फैसला किया कि वह इस बदनामी को अपने सिर लेगे और कई साल गुजर जाने के बाद हमे पता चला कि यह जुर्माना किसने दिया था। जेल से बाहर आने के बाद मै यूथ लीग की तरफ से करीब देहातो के सक्षिप्त दौरे पर गई और जब वापस लौटी, तो मुझे जवाहर का एक छोटा-सा खत मिला, जो पिताजी के नाम खत के साथ आया था। उसमे जवाहर ने लिखा था, "मै सुनता हू कि तुम्हे जगह-जगह मानपत्र मिल रहे है। आखिर यह किन बडे कामो के लिए दिये जा रहे है ? जेल मे कुछ घटे गुजारने पर तो मान-पत्र नही होने चाहिए! बहरहाल इससे कही तुम्हारा दिमाग न चढ जाय! लेकिन शायद हिम्मत न होने से तो चढा हुआ दिमाग ही अच्छा है।"

पिताजी की सेहत दिन-पर-दिन खराब होती गई, हालाकि वह यह समझते रहे कि वह अच्छे हो रहे है। उनका विचार मन मे आते ही अच्छी सेहत का खयाल हमारे दिलो मे आता था और उन्हे झुका हुआ, कमजोर, बीमार और उनके चेहरे की सूजन देखकर हमे ऐसी तकलीफ होती थी, जो बर्दाश्त नही की जा सकती थी। आखिर वह बिस्तर पर ही लेट गये। फिर भी मै यह न समझी कि वह मृत्यु के इतने करीब पहुच चुके है। यह बात किसी तरह मेरी समझ ही मे नही आती थी कि मृत्यु उन्हे हमसे जुदा कर सकती है। उन्होने हमेशा मुसीबतो का मुकाबला किया था और उनपर फतह पाई थी और मुझे पूरा विश्वास था कि वह फिर एक बार फतह पायेगे, भले ही उन्हे मौत ही से क्यो न मुकाबला करना पडे। पर यह बात होनेवाली न थी।

: ५ :

महापुरुष ऊचे शैल शिखरो के समान होते है। हवा उन पर जोर से प्रहार करती है, मेघ उनको ढक देता है, परतु वही हम अधिक खुले तौर से व जोर से सांस ले सकते है।

—रोमा रोला

२६ जनवरी, १९३१ को स्वतत्रता दिवस के मौके पर जवाहर और मेरे बहनोई रणजीत को बिना शर्त छोड दिया गया, क्योकि पिताजी की हालत बहुत नाजुक हो गई थी। इस बात को पूरे बारह साल बीत गये, फिर भी उस दिन की याद मेरे मन मे ताजा है और मुझे दुख दे रही है। जवाहर आनद-भवन मे आये और सीधे पिताजी के कमरे मे चले गये। कमरे की दहलीज पर वह एक पल भर के लिए ठिठके, इसलिए कि पिताजी का बिलकुल बदला हुआ रूप और सूजा हुआ चेहरा देखकर उन्हे सख्त चोट पहुची। पिताजी से गले मिलने आगे बढे और पिता-पुत्र बिना बात किये एक-दूसरे से लिपट गये। जवाहर जब पिताजी की बाहो से अलग हुए और बिस्तर पर बैठ गये, तो उनकी आखो मे आँसू छलक रहे थे, जिन्हे दबाने की वह नाकाम कोशिश कर रहे थे। जो चमक जवाहर से मिलने पर पिताजी की आखो मे आगई थी या जो खुशी उनके चेहरे पर दिखाई दे रही थी, उसे मै कभी भी न भूल सकूगी। और न मै कभी उस दर्द और तकलीफ को भी भूलूगी, जो अपने स्नेह-भाजन पिता के करीब जाते हुए जवाहर की आखो मे दिखाई दे रही थी। उस पिता के करीब जाते हुए, जो हममे से हर एक के लिए केवल पिता ही नही, बल्कि सबसे अच्छे दोस्त भी थे।

पिताजी की बीमारी के वे महीने केवल तकलीफ और चिता के दिन ही न थे, बल्कि मेरे लिए जिदगी मे पहली बार दुख का तजुर्बा भी वही था। पिताजी की हालत दिन-पर-दिन खराब होती जाती थी, फिर भी मुझे किसी तरह इस बात का विश्वास ही नही आता था कि उनकी मौत इतनी करीब है। उस वक्त तक मौत हमारे छोटे से खानदान से दूर रही थी और मुझे तो उसका जरा भी अनुभव न था।

जिस दिन जवाहर रिहा हुए, उसी दिन हिंदुस्तान भर मे और भी बहुत से लोग

छूटे । गाधीजी सबसे पहले छूटनेवाले लोगो मे थे और पिताजी की बीमारी का हाल सुनकर वह पूना की जेल से सीधे इलाहाबाद आ गये। पिताजी उन्हे देखकर बहुत खुश हुए और ऐसा मालूम हुआ कि गाधीजी की मौजूदगी से पिताजी के मन को शाति मिल रही है। बहुत से और दोस्त भी, जो उन्ही दिनो छूटे थे, आनद-भवन पिताजी को देखने पहुचे हुए थे, और शायद इसलिए भी कि उन्हे आखरी बार श्रद्धाजलि अर्पित करे। हमारा घर मेहमानो से भरा हुआ था, लेकिन हर तरफ जहा पहले हसी-खुशी का दौर रहता था, अब खामोशी और गम की छाया छाई हुई थी। लोग घर मे चुपके-चुपके फिरते रहते थे। कुछ लोग तो काम मे लगे रहते और कुछ बिना मतलब इधर उधर घूमते रहते थे। सारे वातावरण मे तनाव और दुख था।

हम सब, यानी माताजी, जवाहर, कमला, स्वरूप और मै, हर वक्त पिताजी के आस-पास रहते थे। रात को हम बारी-बारी उनके पास सोते थे, ताकि उन्हे जरूरत हो, तो हम पास ही मौजूद रहे। बहुत से मौको पर जब मै उनके पास होती थी और वह पानी चाहते थे, तो वह इस तरह नर्मी से पानी मागते थे, जिससे पता-चलता था कि वह मुझे इसकी भी तकलीफ देना नही चाहते। मुझे इस बात से बडा दुख होता था, क्योकि वह औरो का इतना खयाल रखते थे कि मौत के मुह मे होते हुए भी उन्हे अपने आराम का नही बल्कि दूसरो का खयाल रहता था। दिन-पर-दिन हम देख रहे थे कि उनकी शक्ति घटती जा रही है और हम इस बात को रोकने के लिए कुछ नही कर सकते थे। आखिर दम तक पिताजी ने अपने हँस-मुख मिजाज को नही खोया। अक्सर गाधीजी से हँसी-मजाक की बाते किया करते थे या माता-जी को यह कहकर छेडते कि मै तुमसे पहले दूसरी दुनिया मे जा रहा हू और वहा तुम्हारा इतजार करूगा। पर वह कभी भी इस बात से परेशान नही दिखाई दिये, जिसके बारे मे वह जानते थे कि होकर ही रहेगी। पिताजी अपनी सारी उम्र लडाइया लडते रहे थे और ज्यादातर उनकी जीत ही हुई थी। वह मौत के सामने भी बिना लडे हथियार डालनेवाले नही थे, और कई दिन और कई राते वह अपनी क्षीण शक्ति से उसका मुकाबला करते रहे और यह कोशिश करते रहे कि अभी कुछ साल और जिये, इसलिए नही कि दुनिया के और सुख भोगे, बल्कि इसलिए कि उस काम का, जिसके लिए उन्होने अपना सारा जीवन अर्पित कर दिया था, कुछ अच्छा नतीजा निकलते देखे। पर उनकी सारी हिम्मत और बहादुरी कुछ काम न

आ सकी और आखिर मौत ने फतह हासिल कर ही ली।

एक दिन वापू से वाते करते हुए पिताजी ने यह इच्छा जाहिर की कि काग्रेस कार्यकारिणी समिति की बैठक स्वराज्य भवन मे की जाय, क्योकि ज्यादातर सदस्य वहा मौजूद ही थे। उनके आखिरी शब्द थे, "हिंदुस्तान की किस्मत का फैसला स्वराज्य भवन मे कीजिये। यह फैसला मेरी मौजूदगी मे कीजिये और अपनी मातृभूमि की किस्मत के आखरी सम्मानपूर्ण फैसले मे मुझे शरीक होने दीजिये। जब मरना ही है, तो मुझे आजाद हिद की गोद मे मरने दीजिये। मुझे अपनी आखिरी नीद एक गुलाम देश मे नही, वल्कि एक आजाद देश मे सोने दीजिये।"

जब पिताजी की हालत और ज्यादा खराब हुई, तो डाक्टरो ने सोचा कि अच्छी तरह एक्सरे लेने के लिए उन्हे लखनऊ ले जाये, पर पिताजी जाना नही चाहते थे। वह इस बात को डाक्टरो से भी अच्छी तरह जानते थे कि उनका आखिरी वक्त आ चुका है और वह उसी आनद-भवन मे मरना चाहते थे, जिसे उन्होने वडे परिश्रम से वनवाया था और जिसे वह वहुत पसद करते थे। पर डाक्टरो ने अपनी वात पर जोर दिया और गाधीजी भी उनसे सहमत हो गय। पिताजी इतने कमजोर हो गये थे कि वह अब जोर से विरोध भी नही कर सकते थे। ४ फरवरी, १९३१ को उन्हे मोटर से लखनऊ ले जाया गया। इतने लबे सफर के वाद भी दूसरे दिन उनकी हालत कुछ ठीक मालूम हुई, पर शाम होते-होते हालत फिर विगड गई। वह सास भी नही ले सकते थे और उन्हे आक्सिजन दिया जा रहा था। अतएव वह होश मे थे और उन्हे इस वात का पता था कि क्या हो रहा है। शाम को पाच वजे के करीव डाक्टर विधानचद्र राय ने, जो डाक्टर अन्सारी और डाक्टर जीवराज मेहता के साथ पिताजी का इलाज कर रहे थे, मुझे पिताजी के कमरे मे वुलाया और कहा कि उनके पीछे वैठकर उन्हे सहारा दू। मैने वैसा ही किया और डाक्टर हमे छोड-कर कमरे से निकल गये। मुझे कभी इस वात का पता नही चला कि पिताजी ने मुझे वुला भेजा था या डाक्टरो ने अपनी तरफ से ही ऐसा किया था। कुछ मिनट वाद मुझे ऐसा मालूम हुआ कि पिताजी कोई चीज ढूढ रहे है। मै आगे की तरफ झुकी और उनसे पूछा कि क्या चाहते है। वह मुश्किल से ही वात कर सकते थे। पर उन्होने वडी कोशिश से मेरा मुह अपने सूखे हुए हाथ मे ले लिया और अपने उन होठो से, जो इतने सूज गये थे कि पहचाने भी नही जाते थे, उन्होने मेरे चेहरे को खूब चूमा। कुछ ऐसा मालूम हो रहा था कि वह मुझसे अतिम विदा ले रहे है।

मैंने अपने दात भीच लिये और वेहद कोशिश की कि मेरे आँसू, जिनसे मेरी आखे डवडवा रही थीं, उनके हाथो पर न गिरे और न मेरे मुह से चीख निकले। जव मैं अपने-आप पर कावू न पा सकी, तो मैंने उनकी पकड मे निकलने की कोशिश की। चतुर और भावुक पिताजी ने महसूस किया होगा कि मुझपर क्या गुजर रही थी। अव भी मुझे उसी तरह पकडे हुए उन्होने लडखडाती हुई आवाज मे कहा, "मेरी वेटी को हमेशा वहादुर रहना चाहिए।" मैं इस चीजको और ज्यादा वर्दाश्त नही कर सकती थी। इसलिए मे उनके कमरे से निकल भागी और वाहर जाकर दिल खोल-कर रोई। ज्यो-ज्यो शाम होती गई, उनकी हालत और भी खराव होने लगी। मुझे फिर उनके कमरे मे जाने की हिम्मत न हुई। इसलिए कुछ और लोगो के साथ मैं रात भर कमरे के वाहर ही वैठी रही। दुख और थकान से चूर सुवह के होते-होते मैं सो गई और इसी तरह मेरी वहन, कमला और दूसरे कई रिश्तेदार भी, जो-जो उस वक्त वहा थे, सो गये। हम मुश्किल से घटा भर सोये होगे कि हमारी चाची ने आकर हमे जगाया और खवर दी कि पिताजी चले गये। उनकी आखिरी घडी मे सिर्फ जवाहर, माताजी और डाक्टर लोग उनके कमरे मे थे।

एक के वाद एक हम लोग पिताजी के कमरे मे दाखिल हुए। वह अपने विस्तरे पर लेटे थे और ऐसा मालूम होता था कि सो रहे हो। उनके चेहरे पर शाति थी और वह अपनी जीवित अवस्था से भी ज्यादा शानदार मालूम होते थे। मेरा मन इस वात को किसी तरह मानता ही न था कि मेरे पूज्य पिता का अत हो गया है। जवाहर उनके पीछे वैठे थे, उनका हाथ पिताजी के सिर पर था, गोया वह उनका सिर सहला रहे हो। जवाहर की आखो मे आँसू भरे हुए थे। मेरे आँसू निकल ही नही रहे थे, क्योकि जो कुछ हो चुका था, उस पर मुझे विश्वास ही नही आ रहा था। फिर गाधीजी ने कमरे मे प्रवेश किया और पिताजी के विस्तरे के पास गये। अपना सिर झुकाकर और आंखे वद करके वह कुछ देर तक खडे रहे। ऐसा मालूम दे रहा था कि वह प्रार्थना कर रहे है और विदाई दे रहे हो। हम सव उनके आसपास खडे थे। फिर वह माताजी के पास गये, जिन्होने पहली चीख के वाद फिर आवाज नही निकाली थी और दुख से भरी हुई चुपचाप एक कोने मे वैठी थी। गाधीजी उनके करीव वैठ गये और उनके कधे पर अपना हाथ रखकर वोले, "मोतीलालजी मरे नही है। वह वहुत दिन जिंदा रहेगे।" गांधीजी के इन शब्दो ने मुझे महसूस करा दिया कि क्या वात हुई है और मेरे आँसू वहने लगे।

पिताजी की मृत्यु की खवर विजली की तरह देश-भर मे फैल गई। लखनऊ मे खवर आम हो गई और हजारो आदमी अपने नेता के आखिरी दर्शन के लिए कालाकाकर महल पहुचे, जहा हम लोग ठहरे हुए थे।

पिताजी की लाश फूलो से लदी हुई थी। देखनेवालो दोस्तो, और रिश्तेदारो का एक ऐसा ताता बध गया था, जो खत्म ही नही होता था। हर शख्स उनको आखिरी श्रद्धाजलि अर्पित करता था। गाधीजी उनके विस्तरे के करीव चुपचाप वैठे थे। उनके करीव ही मेरी माताजी थी, जो दुख और गम की प्रतिमा वनी हुई अपने उस पति की लाश के करीव वैठी थी, जिनके साथ उन्होने पूरी जिंदगी इज्जत, आवरू, सुख और दुख के साथ गुजारी थी। करीव ही थके हुए और मुर्झाये हुए जवाहर खडे थे, जो ऐसा मालूम होता था कि एक रात मे ही वहुत वूढ हो गये है। फिर भी इस महान् दुख मे उनका चेहरा शात था।

मकान के वाहर मजमा वरावर वढता जाता था। हर शख्स के चेहरे पर दुख और गम की छाया थी और कोई आख न थी, जो आँसू न वहा रही हो। चारो तरफ एक अजीव खामोशी छाई हुई थी और हम सवको जो दुख और सदमा हुआ, वह शव्दो मे वयान नही किया जा सकता।

पिताजी को मोटर से इलाहावाद लाया गया। उनकी लाश तिरगे कौमी झडे मे लिपटी हुई थी। जवाहर उनके पास वैठे थे। कमला, स्वरूप और मै मोटर से पहले ही रवाना हुए थे, इसलिए कि और लोगो से पहले घर पहुचे। लखनऊ मे हमारे घर के वाहर वडी भारी भीड थी। जव हम इलाहावाद के करीब पहुचे, तो हमने देखा कि मीलो तक हजारो आदमी जमा है और ज्यो-ज्यो हम अपने घर के करीव पहुचते गये, लोगो की तादाद और भी वढती गई। आनद-भवन से चार मील के फासले पर मजमा वहुत ज्यादा था और ज्यो-ज्यो हमारी गाडी आगे वढी, मजमा वढता ही दिखाई दिया। जव हमारी गाडी लोगो के वीच से गुजरती थी, तो उनके हमदर्दी के शव्द हमारे कानो मे पडते थे। जव हमने देखा कि लोग इतनी वडी तादाद मे मीलो के फासले से पिताजी को अपनी आखरी श्रद्धांजलि अर्पित करने आये है, तो हम और ज्यादा दुखी हुए। आखिर हम अपने घर, पहुचे, उसी घर मे, जो फिर कभी पहले की तरह न हो सकेगा, वही घर, जिसने एक ऐसी वडी चीज खोई थी, जो फिर मिल नही सकती थी। हमारे घर का पूरा अहाता भीड से खचाखच भरा था। वह तिरगा कौमी झडा, जो वहा हमेशा वडे शान से लहराया

करता था, अव झुका दिया गया था। शहर मे और जगह भी झडे नीचे कर दिये गये थे। आखिर एक वार एक वडी दुखभरी आवाज सुनाई दी, जिसमे उन हजारो वल्कि लाखो आदमियो का, जो वहा जमा थे, दुख-दर्द शामिल था और इसी आवाज के साथ पिताजी की गाडी धीरे-धीरे आनद-भवन के लोहे के दरवाजो मे से आखिरी वार अदर दाखिल हुई।

लखनऊ से सव लोग आ चुके थे, आखिरी क्रिया-कर्म के लिए हर चीज तैयार थी, पर जिस गाडी मे गाधीजी और माताजी थे, वह अभीतक नही आई थी। उनके न आने से काफी परेशानी हुई और उनकी तलाश मे दूसरी गाडिया भेजी गई। एक घटे वाद वह आये और पता चला कि रास्ते मे दुर्घटना हो गई थी। लखनऊ और इलाहावाद के वीच की सडक वहुत खराव थी और चूकि हमारा ड्राइवर रो रहा था, इस वजह से रास्ते के वीच की एक खाई उसे दिखाई न पडी। हमारी डिलाज नाम की वडी गाडी थी। वह जब इस खाई पर से गुजरी, तो उलट गई। चमत्कार यह हुआ कि धक्के से गाडी का दरवाजा खुल गया और माताजी और गाधीजी दोनो वाहर गिर पडे और किसीके भी चोट न आई। ड्राइवर के मामूली चोट आई, पर गाडी का कुछ नुकसान न हुआ।

माताजी के घर पर आते ही आखरी क्रिया-कर्म हो गया और पिताजी की अर्थी वडे भारी जुलूस के साथ गगा किनारे पहुचाई गई। उनकी अर्थी फूलो से लदी हुई थी और खूब सजाई गई थी। हमारे दुखी दिलो को यह देखकर कुछ शाति जरूर हुई कि पिताजी से लोगो को कितना प्रेम था, क्योकि उस भारी मजमे मे एक शख्स भी ऐसा न था, जो रो न रहा हो और न कोई दिल ही ऐसा था, जो उस व्यक्ति की मौत पर शोक न कर रहा हो, जिसकी मिसाल इन्सानो मे शेर से दी जा सकती थी। जव हमने देखा कि पिताजी को हमसे दूर ले जाया जा रहा है और वह अव कभी वापस न होगे, तो हमने भी अपने इस प्यारे पिता को आखिरी प्रणाम किया। उस रात जव मै आनद भवन के वाग मे अकेली टहल रही थी तो मुझे ऐसा मालूम हुआ कि वहा की कोई चीज वदली नही है। आकाश साफ था और तारे हमेशा की तरह चमकदार और सुदर थे। पर मेरे लिए सारी दुनिया तवाह हो चुकी थी।

इलाहावाद के इतिहास मे कभी किसीका इतनी धूम-धाम से दाह-कर्म होते न देखा था। गगा के किनारे सगम पर आखिरी क्रिया-कर्म के लिए कोई एक लाख

मर्द, औरते और बच्चे जमा थ। जहा तक नजर पहुचती थी, सिरो का एक समुद्र दिखाई देता था। सब लोग नगे सिर थे और खामोश खडे हुए थे। आस-पास के देहातो से सैकडो किसान इस जलूस मे शामिल होने आये थे।

जब आखिरी क्रिया-कर्म हो चुका, तो गाधीजी और पडित मदनमोहन मालवीय ने उस जन-समूह के सामने तकरीरे की। जब बापू बोलने के लिए खडे हुए तो, पूरे मजमे से एक दुखभरी आवाज उठी, मगर बहुत जल्द लोग बिलकुल खामोश हो गये और चारो ओर सन्नाटा छा गया। उन्होने कहा, "हमारे देश के इस बहादुर वीर के शव के सामने खडे होकर गगा और जमुना के किनारे हममे से हर पुरुष और स्त्री को यह प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि जबतक हिंदुस्तान आजाद न होगा, वे चैन नही लेंगे, इसलिए कि यही वह काम है, जो मोतीलालजी दिल से चाहते थे। इसीकी खातिर उन्होने अपनी जान दे दी।" गाधीजी कुछ देर और बोले। उनकी आवाज भर्राई हुई थी और सुननेवालो की आखो से आँसू बह रहे थे।

पडित मदनमोहन मालवीय ने लोगो से अपील की कि अपने आपस के झगडे दफन करदे और अपने इस महान नेता की कुर्बानियो से सबक लेकर लोग एक हो जाये और हिंदुस्तान की आजादी हासिल करे।

दो दिन तक सारे देश मे शोक मनाया गया। शहर-शहर, गाव-गाव मे हडतालें हुई। स्कूल और कालेज बद कर दिये गये और सारा कारोबार बद रहा। दुनिया भर से हजारो की सख्या मे हमारे पास हमदर्दी के पैगाम आये।

पिताजी की मृत्यु के बाद गाधीजी ने एक सदेश दिया, जिसमे उन्होने कहा, "मेरी हालत विधवा स्त्री से भी बुरी है। एक विधवा अपने पति की मृत्यु के बाद वफादारी से जीवन बिताकर अपने पति के अच्छे कामो का फल पा सकती है। मै कुछ भी नही पा सकता। मोतीलालजी की मृत्यु से मैंने जो कुछ खोया है, वह मेरा सदा के लिए नुकसान है।"

पिताजी मजबूत शरीर के और दरम्यानी लबाई के आदमी थे, पर उन्हे देखकर ऐसा मालूम होता था कि वह बहुत लबे है। उनके चेहरे से जहानत टपकती थी। उनकी आखो से ऐसा मालूम होता था कि दूसरो के मन के विचार पढ रहे हो। उनका सिर बडा शानदार था और उनका व्यक्तित्व बहुत ही लुभानेवाला। जब मैं पैदा हुई, तब ही उनके बाल पकने शुरू हुए थे, पर मेरी उम्र पद्रह साल की होते-होते तो उनका पूरा सिर सफेद हो चुका था और बर्फ की तरह सफेद बाल उन्हे

वडी शोभा देते थे। चेहरे से वह सख्त मिजाज मालूम होते थे और अक्सर लोग उनसे बहुत डरते थे; पर उन्हे इस वात का पता न था कि इस जाहिरी सख्ती और रुखाई के नीचे एक सोने का दिल था—वडा ही नर्म, दूसरो की वात समझनेवाला और ऐसा कि आसानी से कावू मे किया जा सकता था, अगर कोई उसका तरीका जानता हो तो। वह छोटे बच्चो से वहुत प्यार करते थे और छोटे बच्चे उनकी वडी कद्र करते थे। मै किसी ऐसे बच्चे को नही जानती, जो फौरन उन्हे चाहने न लगा हो और जिससे उनकी दोस्ती न हो गई हो। वह अपने बच्चो से तो बहुत मुहब्बत करते थे, पर उनपर भी वह यह वात कभी नुमाइशी तरीके से जाहिर नही करते थे। एक बच्चे की हैसियत से मै अपने पिताजी से वहुत डरती थी। पर मुझे उनसे बडा प्रेम भी था। जव मै वडी हुई और उन्हे ज्यादा अच्छे तरीके से समझने लगी, तो मेरे मन से उनका डर विलकुल निकल गया। ज्यो-ज्यो समय वीतता गया, हम एक-दूसरे के वडे दोस्त वनते गये और वह मेरे सबसे अच्छे दोस्त थे। पिताजी का एक जवर्दस्त व्यक्तित्व था, जो दूसरो पर वडा असर डालता था और उनमे कुछ ऐसी शाही शान थी कि वह जिस किसी मजमे मे जाते थे, सब लोगो से अलग ही नजर आते थे। हमारे लिए, जो उनके बच्चे थे और उन सब लोगो के लिए, जिनकी वह परवरिश करते थे, वह एक वडा सहारा थे, और हमने इस वात से पूरा फायदा उठाया।

पिताजी सबसे ज्यादा खुश उस वक्त होते थे, जब अपने परिवार के लोगो मे घिरे हुए होते थे। पर ऐसा शायद ही कभी होता था कि हम लोग अकेले हो। हमारे दोस्त और रिश्तेदार शाम को हमारे घर पर आया करते थे, क्योकि वही एक ऐसा वक्त होता था, जब पिताजी जरा फुर्सत से होते थे और उनसे वातचीत कर सकते थे। दिन भर और कभी-कभी रात को भी वडी देर तक वह काम किया करते थे। मुझे अब भी वे मौके याद आते है, जब दिन भर के थका देनेवाले काम के बाद पिताजी रात का खाना खाने वैठते थे। वह मेज के सिरे पर उन लोगो मे बैठे होते थे, जिनसे उन्हे गहरी मोहब्बत थी। वारी-वारी से हममे से हर एक पर वह ध्यान देते थे, हँसते थे और मजाक करते, औरो को छेडते थे और इस वक्त वह उस सख्त मिजाज के आदमी, जैसाकि बाहर के लोग उन्हे समझते थे, विलकुल न रहते थे। हमारी बावत छोटी-से-छोटी वात भी उनकी नजरो मे आ जाती थी। किसीने नये तरीके से पोशाक पहनी हो या किसीने नये तरीके से बाल वनाये हो,

तो उसपर उनकी नजर जरूर पडती थी। उनमे एक अजीब बात यह थी कि उन्हे न मालूम किस तरह यह पता चल जाता था कि दूसरा आदमी अपने मन मे क्या सोच रहा है। कभी-कभी और ऐसा बहुत कम होता था कि वह हममे से किसी की तारीफ करते थे, क्योकि वह किसीको लाड नही दिखाते थे। मुझे यह भी खूब याद है कि जब पिताजी किसी बात पर माताजी की तारीफ करते, तो वह कैसी शरमाती थी। या कोई पुराना किस्सा सुनाते हुए वह इस बात को भूल जाते थे कि बच्चे पास बैठे है, और अपनी बीवी से पुरानी बाते दोहराते थे। ये ऐसी बाते है, जो कभी भूली नही जा सकती और मै उन्हे बडे प्रेम से याद रखती हू। मेरे लिए दुनिया मे इससे ज्यादा सुदर दृश्य और कोई नही है कि दो ऐसे व्यक्ति देखे जाय, जिनके बाल सफेद हो चुके हो, जिन्होने जिदगी साथियो की तरह बिताई हो, जिनकी बढती उम्र के साथ-साथ प्रीति और एक-दूसरे के लिए समझ बढती गई हो और जिन्होने जिन्दगी के आनद और दुख साथ ही सहे हो और जो उस सबसे अप्राभावित रहे हो।

दिन भर का काम खत्म करने के बाद शाम को पिताजी की तबीयत बहार पर रहती थी। रात के खाने से पहले दो-एक घटे वह आराम करते थे और फिर दूसरा काम शुरू करते थे। शाम को छ-साढे छ के करीब पिताजी के दोस्त एक के बाद एक आने शुरू होते थे और उनकी तादाद दो दर्जन तक पहुच जाती थी। बाग मे घास पर मेज और कुर्सिया लगाई जाती थी और वहा अपने दोस्तो के साथ वह रोज छोटा-सा दरबार लगाते थे, जहा हँसी-मजाक और लुत्फ की बातो मे सबका वक्त कटता था। इन बैठको मे पिताजी सबसे आगे रहते थे और कोई पुराना किस्सा या ताजा वाकया बयान करके सबका ध्यान अपनी ओर खीचते थे। और लोग भी मौके-मौके से इसमे हिस्सा लिया करते थे।

पिताजी को बहुत कम लोग ठीक तौर पर समझ पाते थे। जो लोग उनसे पहली बार मिलते थे, वे समझते थे कि वह बडे ही सख्त मिजाज, जरा भी न झुकने-वाले और अक्खड आदमी है। कभी-कभी वह सचमुच ऐसे बन भी जाते थे, पर जो लोग उन्हे अच्छी तरह जानते थे, उन्हे मालूम है कि वह सचमुच कितने नर्म-दिल और कितने अच्छे थे। उनकी शख्सियत बडी भारी थी और उनमे बडी खूबिया थी और चाहे कैसे ही मजमे मे वे क्यो न हो, सब लोग उन्हीकी तरफ खिचते थे। दावतो वगैरा मे भी वह लोगो का दिल मोह लेते थे, और इस बात पर उनसे कम

उमर के वहुत से लोगो को निराशा होती थी। वह किसी कदर खुद मुख्तार जरूर थे, उनकी तवीयत मे हुकूमत थी, कुछ गरूर भी, पर उसीके साथ कुछ ऐसी शान भी उनमे थी कि जो कोई भी उन्हे जानता था, वह उनकी इज्जत करने पर मजवूर हो जाता था। उनमे न तो छोटेपन की कोई वात थी और न कमजोरी। शरीर और मन दोनो से वह मजवूत थे और मेरे लिए तो कुछ अजीव चीज थे। मै काफी सफर कर चुकी हू और वहुत से पुरुषो और स्त्रियो से मिली हू, जिनमे वहुत सी खूविया थी और मैने उन्हे पसद भी किया है। पर मै अभीतक किसी ऐसे आदमी से नही मिली हू, जिसमे वे सव खूविया हो, जो मै अपने पिताजी मे पाती थी। हो सकता है कि मै उस मोहव्वत की वजह से जो मुझे उनसे थी और उनके लिए मेरे मन में जो आदर था, उसके कारण मैं उनके वारे मे पक्षपात से काम ले रही हू।

उनका एक ही दोप—उनका गुस्सा था। पर यह वह दोप था, जो उन्हे वाप-दादा से मिला था और हममे से कोई भी इससे खाली नही है। शायद उनकी एक ही कमजोरी—उनका अपने वच्चो से अटूट प्रेम था। अकसर लोग समझते थे कि पिता की हैसियत से वह वहुत रूखे और सख्त आदमी थे। पर उनकी इस जाहिरी रुखाई और सख्ती के नीचे एक ऐसा दिल छुपा हुआ था जो अपने खानदान की मोहव्वत से भरा हुआ था। खानदान के काम का सारा वोझ उन्हीके कधो पर पडा, क्योकि इस काम मे जवाहर ने कभी कोई दिलचस्पी ली ही नही। हमे वहुत कम पता होता कि उन्हे क्या-क्या दिक्कते और परेशानिया रहती है, क्योकि वह कभी हमसे इन वातो का जिक्र करते ही न थे। जवतक वह जिंदा रहे, हमने वडे ही सुख और वेफिकरी की जिंदगी गुजारी, क्योकि हम जानते थे कि हमारी रक्षा करने के लिए वह मौजूद है। उनके प्रेम की ढाल मे हम इतने सुरक्षित थे कि हमे पता ही न था कि तकलीफ और परेशानी क्या होती है। उनका विचार ही हमारे लिए एक अजीव सुख था। वह हमारे लिए शक्ति के एक भारी स्तभ थे और ऐसी पनाहगार, जिसमे हर किस्म की क्षुद्रताओ और तकलीफो से वचे रह सकते थे। उनकी मृत्यु के वाद हममे से हरएक ने यह महसूस किया कि हमारा सहारा छूट गया है और उनके विना हम अपने जीवन को ठीक से नही चला सकते।

देश के लिए भी उनकी मृत्यु एक वडा भारी नुकसान था। अपने इतिहास के वहुत ही नाजुक मौके पर देश ने अपने वडे भारी सिपाही और राजनेता को खोया था। पिताजी की पहुच, सूझ और जानकारी आश्चर्य पैदा करनेवाली थी और

उस मौके पर उनका नेतृत्व देश के लिए बहुत कीमती साबित होता। हमारे नेताओ मे से एक ने पिताजी को श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए ठीक ही कहा था, "उनकी आत्म-त्याग की भावना मामूली आदमी से कही ज्यादा थी। हमारे आजादी के आदोलन मे एक-पर-एक बलिदान करने मे उन्हे बडा आनद आता था और उनके आत्म-बलिदान की कोई सीमा थी ही नही। उन्होने हिदुस्तान के काम को अपना काम बना लिया था और उनका जीवन हिंदुस्तान की आजादी के लिए ही था। आजाद हिदुस्तान जब अपने नेताओ और शहीदो के लिए स्मृति-मदिर बनायेगा, तो उसमे आधुनिक हिदुस्तान के सस्थापक महात्मा गाधी के करीब ही मोतीलालजी को ऊची जगह मिलेगी।"

: ६ :

कदो गेसू में फँसो कोहकन की आजमाइश है ।
जहां हम हैं वहां दारो रसन की आजमाइश है ।।

(बाहरी दुनिया मे सुदरता और प्रेम की आजमाइश है। लेकिन जहा हम है, वहा फासी के रस्से और जेल की जजीरो की आजमाइश है।)

—गालिब

पिताजी की मृत्यु के वाद जवाहर को गाधीजी के साथ मशविरे के लिए दिल्ली जाना पडा, जहा गाधीजी की वाइसराय लार्ड अर्विन से मुलाकाते हो रही थी। हमारे परिवार के वारे मे कई वाते ऐसी थी, जिनका जवाहर को इन्तजाम करना था, पर उनकी गैरहाजरी की वजह से ये सब काम रुके रहे। दिल्ली के कामो मे भी वह इस वात को भूल न सके कि अव हमारे छोटे से कुटुव के मुखिया है। उस समय हम सवको और खासकर माताजी, को जो गम से टूट चुकी थी, जवाहर के हमारे साथ रहने की जरूरत थी। दिन-पर-दिन गुजरते गये और फिर भी जव वह घर न आ सके, तो उन्होने मुझे लिखा

"मुझे आशा थी कि मै पूरा एक हफ्ता इलाहावाद मे रहकर कुटुब के और लोगो के मशविरे से अपने घर के काम-काज का फैसला कर सकूगा, पर अव ऐसा मालूम होता है कि जाने कवतक मुझे यही रहना पडे। अबतक घर के सारे कामो का बोझ पिताजी पर था, और उनकी मोहव्वत भरी निगरानी और दूरदेशी की वजह से हम सव वहुत-सी मुसीवतो से बचे हुए थे। अपने वच्चो पर उनका अटूट प्रेम हमे उनकी छत्रछाया मे छुपाये रखता था, हमारी रक्षा करता था और हम उन फिक्रो और तकलीफो से आजाद रहते थे, जो अक्सर लोगो को उठानी पडती है। जिदगी की कोई भी मुसीवत जव हमारे सामने आती थी, तो केवल उनका विचार ही हमे सुख देता था। अब हमे विना उनके अपना काम चलाना है और हरएक दिन के गुजरने के साथ मुझे उनकी कमी महसूस होती है और तकलीफ देनेवाली तनहाई परेशान करती है, पर हम अपने वहादुर बाप के बच्चे है और उनकी शक्ति और हिम्मत का कुछ हिस्सा हममे भी मौजूद है और चाहे हमारे रास्ते मे कितनी

ही दुश्वारिया और कठिनाइया पैदा हो, हम दृढ निश्चय के साथ उनका मुकबला करेंगे और हिम्मत से काम लेकर उनपर काबू पायेंगे।"

इस खत से पता चलता है कि जवाहर को पिताजी की मौत से कितना सदमा हुआ था और इस सदमे मे हम सब उनके साथ बराबरी से शरीक थे। पिताजी के बिना हम सब खोये-खोये से रहते थे और हमारी समझ मे नही आता था कि उनकी निगरानी और नेतृत्व के बिना हम अपना काम किस तरह चलायेंगे। अब हमारे छोटे से खानदान का पूरा बोझ जवाहर के कधे पर पडा और उन्होने यह बोझ बहादुरी और बाहोशी से उठाया। बहुत जल्द उन्होने पिताजी की जगह ले ली और हर छोटी-मोटी बात के लिए हम लोग उन्ही की तरह देखने लगे। हम अब भी यही करते है।

जवाहर का खत मेरे जख्मी दिल के लिए मरहम साबित हुआ। इस खत ने मेरे दिल का जख्म भरने मे और सब चीजो से ज्यादा काम किया। जवाहर इस बात को नही जानते, पर यह सच है कि बेशुमार ऐसे मौको पर जब मै किसी बात से निराश हुई हू या मेरा दिल बैठा है, तो इस खत ने, जो अब से बारह बरस पहले लिखा गया था, मुझे जिंदगी की समस्याओ का मुकाबला करने की हिम्मत और शक्ति दी है।

इडियन नेशनल कांग्रेस की बैठक उस साल कराची मे हुई और माताजी और मै जवाहर और उनकी बीवी के साथ वहा गये। जवाहर की सेहत उन दिनो ठीक न थी। अपनी रिहाई से पहले जेल मे उनकी तबीयत अच्छी नही थी और पिताजी की बीमारी और मौत के सदमे का बोझ उनके उस शरीर को भी, जिसे वह 'फौलादी' कहा करते है, ऐसा साबित हुआ जिसे वे आसानी से उठा नही सकते थे। डाक्टरो ने उन्हे लबी छुट्टी लेने और पूरी तरह आराम करने का मशविरा दिया। इसलिए जवाहर, कमला, और इदिरा तीन हफ्तो के लिए लका गये। जवाहर लका देखकर बहुत खुश हुए और वहा के लोगो ने उनके प्रति जो प्रेम जाहिर किया और जिस मेहबानी से पेश आये, उसका बडा असर पडा। अपने वापसी के सफर मे जवाहर ने जहाज पर से मेरे नाम खत मे लिखा, "हम जहा कही भी गये, हमारा बहुत ही शानदार स्वागत किया गया और जब मै एक बडे मजमे से दूसरे बडे मजमे मे जाता था और उन बेशुमार लोगो मे से गुजरता था, जो घटो तक रास्तो पर हमारे इतजार मे खडे रहते थे, तो मुझे इस चमत्कार पर हैरत होती थी और मै उसका अर्थ समझने की कोशिश करता

था मै। समझ गया कि इस चीज के पीछे कोई बात जरूर है, कोई ऐसी बात, जो इससे ज्यादा गहरी है कि लोग किसी एक व्यक्ति को पसद करते हो। और इस तरह विचार करते-करते अचानक यह बात मेरी समझ मे आ गई कि ये लोग जिस चीज की इतनी इज्जत कर रहे है, वह हिंदुस्तान की शान और आजादी के लिए हिंदुस्तान की लडाई है और हम लोग तो उसी शान के मामूली चिह्न है। अभी ज्यादा दिन नही गुजरे कि बाहर के देशो मे हिंदुस्तानी को अपना सर शर्म से नीचे झुकाना पडता था, पर कोई बात हुई जरूर है और अब वह शर्म पुराने जमाने की बात मालूम होती है, एक ऐसा तकलीफदेह सपना, जो गुजर चुका है। अब तो हिंदुस्तानी होना बडे फख्र की बात है और खासकर ऐसा हिन्दुस्तानी होना, जिसने इस लडाई का कुछ बोझ खुद भी उठाया हो। और हममे से कोई भी कही जाय, उसके साथ नये हिंदुस्तानी की शान चलती है।" जवाहर ने उस वक्त यह समझा और अब भी वे यही समझते है कि उन्हे जो भी इज्जत दी जाती है या उनके प्रति जो भी प्रेम जाहिर किया जाता है, वह व्यक्तिगत तौर पर उसके लिए नही होता, बल्कि वह एक तरह का तोहफा होता है, जो उन्हे इसलिए दिया जाता है कि वे हिन्दुस्तानी की उन सन्तानो मे से एक है, जो इसके लिए लडते है और ऐसे पुत्र है, जिसने अपना सब कुछ देश को दे दिया है और अगर देश को जरूरत हो, तो उसकी खातिर अपनी जान भी दे देगे।

गाधी-अर्विन समझौता होते हुए भी देश की हालत मे कोई फर्क नही पडा। हुकूमत को इस बात की इच्छा ही न थी कि इस समझौते की भावना को स्वीकार करे और जनता जो जाग चुकी थी, वह इसके लिए तैयार न थी कि अपनी मेहनत के फल को फेक दे।

सयुक्तप्रात में किसानो मे बेचैनी और बेइतमीनानी जारी रही और किसानो के आदोलन को दबाने के लिए सरकार आर्डिनेन्स जारी करती रही। इस सूबे मे जो प्रातीय सम्मेलन होनेवाला था, उसकी सरकारी ने मुमानियत कर दी और यह हुक्म दिया कि सम्मेलन उसी सूरत मे हो सकता है, जब यह वायदा किया जाय कि उसमे किसानों के सवालो पर विचार नही होगा। सम्मेलन खास इसी सवाल पर गौर करने के लिए होनेवाला था, इसलिए सरकारी शर्त को मान लेना सम्मेलन का मजाक बना देता। पर गाधीजी बहुत जल्द गोलमेज परिषद् से वापस आनेवाले थे और जवाहर और उनके और साथी गाधीजी से मिलना चाहते थे। इस-

लिए उन्होने मुनासिब समझा कि सम्मेलन मुल्तवी कर दे। पर ऐसा करने पर भी वह गाधीजी से मिल न सके।

दिसवर १९३१ मे जवाहर ववई जाते हुए इलाहावाद से कुछ मील दूर एक छोटे से स्टेशन पर गिरफ्तार हुए। दो दिन वाद गाधीजी, जो गोलमेज परिषद् मे शरीक होने इग्लैड गये थे, वापस लौटकर ववई पहुचे। उन्हे आशा थी कि वदरगाह पर ही जवाहर उनसे मिलेगे, पर इसकी जगह उन्हे यह खवर मिली कि जवाहर और दूसरे बहुत से नेता गिरफ्तार कर लिये गए है और वहुत से प्रातो मे नये-नये आर्डिनेन्स लगाये गए है। दाव खेला जा चुका था और आजादी की लडाई फिर एक वार शुरू हो गई थी। ४ जनवरी १९३२ को गाधीजी और वल्लभभाई पकडे गये और उन्हे विना मुकदमा चलाये नजरवद कर दिया गया। हफ्ते के अदर-अदर आदोलन पूरे जोरो पर था। हममे से वहुत से लोग जिन्होने इससे पहले के आदोलन मे ज्यादा अमली हिस्सा नही लिया था, वे अब पूरी शक्ति और जोश से इस आदोलन मे कूद पडे। मेरी माताजी जो वहुत वूढी और कमजोर थी, वह भी पीछे न रही। वह शहरो और आस-पास के गावो मे जाकर सभाओ मे वोलती। हम सवको उन्हे देखकर वडा अचरज होता था, क्योकि अपनी पूरी जिंदगी उन्होने एक ऐसे कमजोर वीमार की तरह गुजारी थी जो ज्यादा मेहनत-मशक्कत का काम नही कर सकता था। पर अव ऐसा मालूम होता था कि कही ऊपर की प्रेरणा से उनमे अचानक वडी भारी शक्ति और निश्चय पैदा हो गया। वह उतना ही काम करने लगी जितना हम करते थे, बल्कि कभी-कभी तो उससे भी ज्यादा।

वहुत जल्द मेरी वहन को, मुझे और हमारे कुछ और साथियो को यह नोटिस मिला कि हम एक महीने की मुद्दत के लिए जलसे या जलूस मे भाग न ले और हडताल न कराये। स्वतत्रता-दिवस मे दो हफ्तो की देर थी। इसलिए हमने इरादा किया कि उस वक्त तक खामोश रहे। २६ जनवरी को हमारे शहर मे इतना वडा जलसा हुआ, जितना इससे पहले कभी न हुआ था। माताजी ने इस जलसे की सदारत की और वडी जोशीली तकरीर की, पर इससे पहले कि सभा खतम हो पुलिस ने लाठी चार्ज किया और सभा भग कर दी गई। वहुत से लोगो को वही गिरफ्तार कर लिया गया और वहुत-से बुरी तरह जख्मी हुए। हमने उस नोटिस को जो हमे दिया गया था भग किया था, इसलिए हमे आशा थी कि हम भी पकडे जायेगे। पर ऐसा हुआ नही और हम निराश होकर घर लौटे। दूसरे दिन

सुवह साढे नौ बजे पुलिस की गाडी एक इस्पेक्टर के साथ हमारे घर आई और मेरी वहन को और मुझे इत्तला दी गई कि हमे गिरफ्तार कर लिया गया है। हमने अपनी जरूरी चीजे इकट्ठी कर ली और माताजी से और दूसरे लोगो से विदा लेकर जेलखाने रवाना हुए। यह हमारा जेल का पहला सच्चा तजुर्वा था। मै इससे पहले भी एक बार वारह घटे जेल मे रह चुकी थी। हमे खुद अपनी कुछ भी पर्वाह न थी, पर अपनी बूढी और कमजोर मा की वडी फिक्र थी, जिसे हमने अपने उस वडे घर मे अकेला छोड दिया था, जहा पहले हमेशा सुख और आनद ही आनद था, और जहा अव निरा दुख और तनहाई थी। माताजी को यह देखकर जरूर वडी तकलीफ हुई होगी कि उनके सभी बच्चे एक-एक करके जेल चले गये और उन्हे खुद अपना और दूसरो का भी काम करने के लिए अकेला छोड गये। उनका शरीर नाजुक और कमजोर था, पर उनका दिल शेरनी की तरह मजबूत और वहादुर था और वह वहा अपनी एक वहन के साथ, जो उन्हीकी तरह वहादुर औरत थी, रह गई। फिर भी आजादी की इस लडाई को जारी रखने के उनके निश्चय मे जरा भी कमी नही आई।

अव हम अपने प्यारे घर से जिला जेल की तरफ रवाना हुए। जव हम वहा पहुचे, तो हमने देखा कि हमारी और साथी औरते वहा पहले से ही मौजूद है। वे सव-की-सव वडी खुश थी और जो भी मुसीबत आ पडे, उसके मुकावले के लिए हँसी-खुशी तैयार थी। हमे एक साथ रहने से वडी खुशी हुई। वजन वगैरा लेने की कुछ मामूली कार्रवाई के वाद हमे अदर ले जाया गया। इस जेल मे खास औरतो का विभाग नही था। कायदा यह था कि वदिनियो को वहा सिर्फ इतनी देर तक रखा जाता था, जवतक उनका मुकदमा खत्म न हो, और उसके वाद उन्हे दूसरी जगह भेज दिया जाता था। जेल का एक वार्ड स्त्रियो के लिए रखा गया था और उसी मे बुरी-से-बुरी औरते भी थी, जिन्हे हर तरह की वीमारिया थी। इन औरतो मे हमारे मुकदमे से पहले तीन हफ्ते और मुकदमे के वाद चार दिन हमे और रखा गया। पर हमे अलग-अलग कोठरियो मे हर कोठरी मे चार-चार के हिसाव से रखा गया था। हर रोज सुबह जेल का सुपरिण्टेण्डेण्ट, जो एक अग्रेज था और जिसे पिछली लडाई मे वम का बुरी तरह धक्का पहुचा था, गश्त लगाता था। हम सवको उस वक्त हाजिर रहना पडता था, क्योकि वह अपनी आखो से सवको देखकर यह इत्मीनान करना चाहता था कि कोई कम तो नही है। एक दिन ऐसा हुआ कि मुझे

और मेरे एक दोस्त को कोठरी से वाहर निकलने मे देर हुई। जैसे ही उसने हमे देखा, आवाज दी—"जल्दी करो, मैं यहा तुम्हारे लिए दिन भर नही ठहर सकता। उधर टेनिस का टूर्नमिट हो रहा है, जो मुझे देखना चाहिए और मुझे यहा इस गदी जगह मे रुकना पड रहा है।" मुझे यह वडा बुरा लगा और मैंने पलटकर जवाव दिया—"हमारे लिए यह जगह उससे भी ज्यादा तकलीफ की है, जितनी तुम्हारे लिए, क्योकि यहाकी हर चीज वेहद गदी है। रहा टेनिस का टूर्नमिट, सो अगर तुम एक दिन यह खेल न देख सके, तो क्या हर्ज है, जवकि हम किसी दिन भी नही देख सकते।" सुपरिंटेण्डेण्ट चुपके से चल दिया और अच्छा ही हुआ कि उसने कुछ जवाव न दिया।

जेल मे शुरू के कुछ दिन हमारे लिए एक अजीव तजुरबे के थे और तजुरवा भी ऐसा कि जिसे हम मे से कोई भी भूल नही सकता। हमारी कोठरियो मे किस्म-किस्म के कीड-मकोडे थे और रात को हम इस डर के मारे सो न सके कि ये खौफनाक चीजे हमारे बिस्तरो पर न चढ आये। इस खयाल से घटे के वाद घटा गुजारना बडा ही तकलीफदेह होता कि किसी वक्त भी कोई कीडा-मकोडा हमारे हाथ या पैर पर चढ आयेगा। हममे से हर एक को एक-दो बार इसका तजुर्वा भी हुआ। आगे चलकर हमने यह आदत डाल ली कि हर रात को सोने से पहले कोठरिया खूव अच्छी तरह साफ कर ले और फिर हम जवतक उस जेल मे रहे, कोई ऐसी बात नही हुई। हमारे मुकदमे से पहले जो मुद्दत गुजरी, उसमे और लोगो को रोजाना मिलने की इजाजत थी और माताजी हर रोज हमसे मिलने आया करती थी। आखिर हमारे मुकदमे के दिन की सुवह हुई और हम किसी कदर वेचैनी से मुकदमे के समय का इतजार करने लगे। न मालूम क्यो? मगर हमे खयाल था कि हम लोगो को छ-छ महीने से ज्यादा की जेल न होगी और हम उसके लिए बिलकुल तैयार थे। मुकदमा जेल ही मे हुआ। हम सव एक कतार मे बैठे थे और जिस किसीका मुकदमा होता, उसीका नाम पुकारा जाता था। हमने मुकदमे की कार्रवाई मे किसी तरह का हिस्सा लेने से इन्कार कर दिया। मेरी वहन का नाम पहले पुकारा गया और जव मजिस्ट्रेट ने वडी धीमी आवाज मे उन्हे एक साल की सख्त कैद और ऊपर से कुछ जुर्माने की सजा सुनाई, तो हम सव चौंक पडे। वहन के वाद मेरी वारी आई और मुझे भी उतनी ही सजा विना-जुर्माने के सुनाई गई। वाकी और लडकियो ने भी एक के वाद एक अपनी सजा का हुक्म सुना।

दो और लडकियों को एक-एक साल की सजा हुई । वाकी सबको तीन महीने से लेकर नौ महीने तक अलग-अलग मुद्दत की सजाए दी गई । चार दिन के वाद एक रात को ग्यारह वजे हमे लखनऊ भेज दिया गया, जहा हम साढे-ग्यारह महीने रहे । अच्छे चाल-चलन की वजह से पन्द्रह दिन की छूट मिल गई

हम लोग अपनी मजिल पर कडकते हुए जाडे मे सवेरे-सवेरे पहुचे । जेल की खौफनाक और ऊची-ऊची दीवारो को देखकर हमारा दिल कुछ वैठ सा गया। पहली बार हमने महसूस किया कि जेल-जीवन का मतलब उस वक्त क्या होगा, जव हम साल-भर के लिए बद कर दिये जायगे और बाहर की दुनिया से हमारा कुछ भी सबध न रहेगा । पर हममे से हर एक का यह निश्चय था कि इस वात से अपना जोश ठंडा न पडने देगे और वहुत-सी तकलीफो और मानसिक परेशानियो के होते हुए भी हमारा अपने कार्य पर और अपने नेता पर पक्का विश्वास वना रहा ।

हम जेल के दफ्तर मे दाखिल हुए, जहा हमारे सामान की तलाशी ली गई । फिर हमे जेल के अदरं ले जाया गया, और मैट्रन ने हमे वह बारक दिखाई, जिसमे हमे रहना था । हमे वता दिया गया कि हमे क्या काम करना और किस तरह रहना होगा । फिर वह हमसे यह कहकर चली गई कि हम अपनी बारक के अहाते मे घूम-फिर सकती है, मगर शाम के पाच वजे हमे वद कर दिया जायगा । हमे यह सुनकर धक्का-सा लगा । खैर, हमने अपने बिस्तर ठीक किये, जो जरा भी अच्छे न थे, और मुह-हाथ धोकर हममे से कुछ लडकियो ने फैसला किया कि चारो ओर घूमकर सव जगह एक नजर डाल ली जाय ।

वह सुबह का वक्त था और सब कैदिने अपनी कोठरियो के वाहर या तो कपडे धो रही थी या कोई और काम कर रही थी । जब हम इतमीनान से उनके करीब से टहलते हुए गुजरे, तो उनमे से कुछ कैदियो ने अचभे से हमारी तरफ देखा, कुछ ने मुस्कराकर अपना मित्र-भाव जाहिर किया और कुछ ऐसी कैदिनो ने, जो पुरानी पकी हुई मुजरिम थी, रुखाई से हमारी ओर देखा । एक कैदिन ने, जिसके वारे मे हमे आगे चलकर पता चला कि वडी बदला लेनेवाली वुढिया है और जेल मे वार्डर भी हैं, वडी जिल्लत के साथ हमे सिर से पैर तक देखा ।

जेल मे सोमवार का दिन परेड का दिन हुआ करता था । इसका मतलव यह था कि उस दिन सुपरिटेडेट मुआयने के लिए आता था । उस रोज सवेरे पाच वजे

से ही वडी धूम मची रहती थी और वारको और उनके आगे-पीछे के अहातो की सफाई का काम शुरू हो जाता था। आठ वजे तक तमाम कैदियो को उनके साफ-सुथरे कपडो मे एक कतार मे खडा कर दिया जाता था और उनकी खूब साफ पालिश की हुई लोहे की थालिया उनके सामने रख दी जाती थी।

हमारी मेट्रन पहली परेड के दिन कुछ परेशान-सी थी, क्योकि उसे इस वात का पता न था कि जव सुपरिंटेंडेंट हमारी वारक मे आयेंगे, तो हम लोग क्या करेंगे। सुपरिटेंडेंट जव आते थ, तो सव कैदियो को खडा होना पडता था, पर कुछ जेल-खानो मे राजनैतिक कैदियो ने इस मौके पर खडे होने से इन्कार कर दिया था और इसी कारण हमारी मेट्रन को फिक्र थी कि क्या होगा।

पहला मुआयना तो अच्छी तरह गुजरा। सुपरिंटेंडेंट वडी अच्छी तरह और नर्मी मे पेश आये और हमसे पूछा कि आपको कोई शिकायत तो नही है और किसी चीज की जरूरत तो नही है। मेरी कुछ साथिनो ने कहा कि हमे किताबो की और कुछ चीजो की जरूरत है। मैं जवतक जेल मे थी, पढना चाहती थी। इसलिए मैंने दर्याफ्त किया कि क्या मुझे फ्रेंच और इटालियन भाषा की कुछ किताबे, शार्ट-हैंड की कुछ पुस्तके और तीन शब्द-कोष मिल सकते है? साथ ही मैंने सुपरिंटेंडेंट से यह भी कहा कि ये सव पढाई की किताबें है। इसलिए मुझे उनके अलावा दो-एक उपन्यास भी चाहिए।

मैंने ये सव किताबे वडी सजीदगी से मागी थी और मुझे इस वात का ध्यान नही रहा कि मैं कैदिन हू और हम लोगो को एक वक्त मे छ से अधिक किताबे रखने की इजाजत नही है और शब्द-कोष भी उसीमे शामिल है।

क्षण-भर के लिए सुपरिंटेंडेंट कुछ झिझके, फिर उन्होने वडी गभीरता से जवाब दिया—"क्या यह अच्छा न होगा कि मैं ऊचे अधिकारियो से इस वात की इजाजत मागलू कि आप लोगो के लिए जेल मे एक छोटे-से पुस्तकालय का इन्त-जाम कर दिया जाय? फिर वहुत-सी किताबो मे से आप जो भी किताबे चाहेगी, अपने लिए चुन सकेगी।" मैं जवाब देने मे पशोपेश कर रही थी कि मैंने देखा, वह मेरी ओर देखकर मुस्करा रहे है। इसलिए मैंने कहा—"यह तो वडा ही अच्छा होगा यदि आपको इसमे ज्यादा तक्लीफ न हो तो! देखिये, मैं केवल सूत कातने मे ही यहा अपना समय नही लगा देना चाहती। मुझे आशा है कि आप मेरी किताबो का जरद वदोवस्त कर देंगे।" अधिकारियो के काफी देर तक विचार करने

के पश्चात पूरे दो महीने वाद मुझे ये कीमती कितावे मिली।

हममे से हरएक को सिर्फ छ साडिया और कुछ कपडे रखने की इजाजत थी। हमे ये कपडे रोज खुद ही धोने पडते थे और यह कोई आसान काम न था। खादी मोटी और भारी थी और पानी मे भीगकर और भी वजनी हो जाती थी, उसका धोना और भी कठिन होता था। पर जेल मे और वहुत सी चीजो की तरह हमे इस काम की भी जल्दी ही आदत पड गई। हमे जो खाना मिलता था, वह वहुत ही खराव होता था और चाहे हम वडी हिम्मत करके उसे खाने की कोशिश करते,पर उसमे हमे कामयावी नही होती थी। वात यह नही कि खाना खराव होने से ही हमे खाने मे तकलीफ होती थी, वल्कि खाना जिस गन्दे तरीके से दिया जाता था, उसे देखकर ही घिन आती थी। हमने इस वात की इजाजत मागी कि हमे अपना खाना खुद पकाने दिया जाय और यह इजाजत मिल भी गई। हमने चार-चार छ-छ की टोलिया वना ली। हर टोली मे से एक खाना पकाती थी, एक भाजी काटती थी और एक वर्तन साफ करती थी। इस इन्तजाम से हमे किसी कदर आराम मिला।

एक-एक वारक मे हम लोग दस-दस और कभी-कभी वारह होते थे। दिनभर हमे अपने अहाते मे जहा चाहे घूमने की आजादी थी, मगर शाम के पाच वजे हमे वद कर दिया जाता था और दूसरे दिन सुवह छ वजे फिर खोल दिया जाता था। यह समय विताना वडा ही मुश्किल होता था। हममे से हर एक कोई-न-कोई नया ही काम करना चाहती थी। कुछ तो वाते करना चाहती थी, कुछ पढना और वहस करना और कुछ चाहती थी कि गा-वजाकर अपना गम गलत करे। कभी-कभी हमे एक-दूसरे से वडी कोफ्त और तकलीफ होती थी, लेकिन आमतौर पर हमने काफी अच्छी तरह और दोस्ती से दिन गुजारे।

वाहर से जो खवरे आती थी, वे अकसर हमे परेशान करती और जव कभी कोई बुरी खवर मिलती, तो हम कई-कई दिन परेशान रहते। एक वार हमने सुना कि लाठी-चार्ज मे हमारी माताजी बुरी तरह जख्मी हुई है। तफसील मालूम न होने की वजह से मै और मेरी वहन दोनो सख्त परेशान थी। फिर भी न तो हमे तार भेजने की इजाजत मिली, न खत लिखने की, इसलिए कि कुछ ही रोज पहले हम दोनो अपने वे खत लिख चुके थे, जिन्हे हर पखवाडे लिखने की हमे इजाजत थी। ऐसे ही मौके पर इन्सान को जेल मे अपनी लाचारी का अदाजा होता है और दिल मे कडवाहट पैदा होती है।

मुलाकात के दिन हमारे लिए वडे स्मरणीय दिन हुआ करते थे। कभी कभी ऐसा होता कि इन दिनो पर कोई भी हमसे मिलने नही आता था, क्योकि हमारे परिवार के सभी लोग जेल मे थे। सिर्फ हमारी माताजी वाहर थी। उन्हे मेरे भाई, वहनोई और मेरी वहन से मिलना होता था और कभी-कभी ऐसा होता था कि वह तबीयत ठीक न होने या किसी और काम के कारण हमसे मिलने नही आ पाती थी। जब ऐसा होता तो हमे वडा रज होता था।

हर पद्रहवे दिन हमारा वर्जन लिया जाता था और अगर इत्तफाक से किसी का वजन एक-आध पौड वढ जाता, तो यह वडे गजब की वात होती। जिस काटे पर हमे तौला जाता था, उसे हम दोष देते थे और जेल के रद्दी खाने को कोसते थे। जो डाक्टर हमे तौलता था उस गरीव को कभी चैन ही नही मिलता था। मेरा तो खयाल है कि डाक्टर जव कभी हमारे वारक मे आता, तो उसका वजन कई पौड घट जाता होगा। औरतो के जेल मे सिर्फ दो मर्दो को आने की इजाजत थी, एक जेल के सुपरिटेडेट और दूसरे डाक्टर। और इसमे से औरतो के हक की हिमायत करनेवाली कैदिने यह कबूल नही करती थी कि कभी-कभी किसी पुरुष से मिल लेना अच्छा ही होता है, लेकिन जव कभी सुपरिटेडेंट या डाक्टर वहा आता, तो सारे समय वे उन्हीसे वाते करती रहती थी और जेल की हर खरावी के लिए उन्हीको दोष देती थी।

गर्जेकि इस तरह हमारी जिदगी के दिन-पर-दिन और महीने-पर-महीने गुज-रते गये। कभी हम उदास रहते और उन रिश्तेदारो और मित्रो की याद हमे सताती जिन्हे हम वाहर छोड आये थे। कभी हम खुशी और सतोप से काम मे, पढने मे या एक-दूसरे के साथ वहस मे अपना समय विताते।

छोटी उमर की कैदिने हमारे साथ मित्र-भाव से पेश आती थी। उनमे से कई वडी दिलचस्प और होशियार भी थी। वे नाच और गाना जानती थी और उनमे से एक एग्लो-इडियन लडकी को तो इन वातो मे वडा कमाल हासिल था। वह एक अजीव लडकी थी और अपनी जवानी मे वडी खूबसूरत रही होगी। आगे मै 'मेरी' के नाम से उसका जिक्र करूगी, क्योकि मै उसका असली नाम वताना नही चाहती। उसे अक्सर सवसे अलग वद करके रखा जाता था, क्योकि वह वरावर कुछ-न-कुछ शरारत किया करती थी। वडी शरीर थी और जिद्दी भी। एक रोज जव वह कुछ देर के लिए अपनी कोठरी से वाहर थी, तो मेरे पास आई और कहने लगी—"क्या

आप जानती है कि मै एक मशहूर अग्रेज अभिनेत्री की रिश्तेदार हू ? जी हा, यह बात सच है, हालाकि आपको सच न मालूम होती होगी।" मैने उससे कहा—"मेरी, तुम जेल मे क्यो आई हो और जब आई हो तो ठीक से क्यो नही रहती हो ? ठीक से रहोगी, तो तुम्हे माफी मिलेगी और जल्द बाहर जा सकोगी।" मेरी बात सुनकर उसने कहा—"अच्छा, यह बात है ! तो सुनिये, आप भी कैदिन है और मै भी कैदिन हू। मै आपको एक राज की बात बताती हू। आप जानती है कि मै कई बार जेल आ चुकी हू। हर बार जब मै जेल से बाहर जाती हू, तो मर्द मेरे पीछे पड जाते है। वे समझते है कि मै बडी खूबसूरत हू और उन्हे मुझपर मेरी चचेरी बहन का शुबाह होता है, जो एक मशहूर अभिनेत्री है। वे मुझे इतना तग करते है कि मुझे कुछ-न-कुछ करके वापस जेल आना पडता है। यहा आकर ही मुझे उनसे छुटकारा मिलता है।"

एक रात जब बला की खामोशी छाई हुई थी, और सब लोग सो रहे थे, उस लडकी ने, जो मेरे करीब ही सो रही थी, मुझे जगाया और कहा—"देखो, कुछ सुनती हो ?" मैने कान लगाकर सुना, तो मुझे ऐसा मालूम हुआ कि बहुत दूर किसी जगह घुघरू बज रहे है। मैने उस लडकी से पूछा—"यह आवाज कैसी आ रही है ?" उसने कहा—"न मालूम किस चीज की आवाज है, पर उसे सुनकर मेरा दिल डरता है। कहते है कि एक नाचनेवाली लडकी को मौत की सजा दी गई थी और उसे इसी जेल मे फासी पर लटकाया गया था। हो सकता है कि उसीका भूत इस जेल मे घूमता हो।"

मै यह बात सुनकर काप उठी। जेल मे या जेल के बाहर कही भी भूत देखने की मेरी इच्छा न थी, फिर भी मैने ऐसा जाहिर करने की कोशिश की कि मुझे इसकी जरा भी पर्वाह नही है। मैने अपनी साथिन से कहा कि वह ऐसी फिजूल बाते न सोचे। यह हो नही सकता कि कोई भूत जेलखाने मे आकर बस जाय। मुझे यकीन है कि भूत भी इस जगह आना पसद नही करेगा। मेरी साथिन को यह बात महज मजाक की न मालूम हुई और उसने मुझे डाटा। जो आवाज हमे सुनाई दी थी, वह और दूर चली गई और कुछ देर बाद हमे सुनाई भी न दी।

दूसरी रात हम फिर वही आवाज सुनकर जाग पडे और हमे इससे कुछ बेचैनी-सी हुई। हम पडे-पडे सोचते रहे कि आखिर यह क्या चीज होगी, मगर कुछ समझ मे न आया। तीन राते इसी तरह गुजरी। चौथी रात वह आवाज और

ज्यादा जोर से आने लगी और हमारे वहुत करीव भी होती गई। हमारे दिल दह-लने लगे। इसी हालत मे हमने एक काली छाया देखी, जो एक वारक के कोने पर घूम रही थी। उसीसे यह आवाज आ रही थी। कुछ क्षणो तक तो हम समझ नही सके कि यह क्या चीज है, फिर एकदम हमारी समझ मे यह बात आई कि यह पहरेदारिन होनी चाहिए। इस विचार से हमे इतनी राहत मिली कि हम मारे खुशी के उछल पडी। पहरेदारिन का काम यह था कि वह रोजाना रात को औरतों के पूरे जेल का चक्कर लगाये, मगर वह वहुत सुस्त थी और समझती थी कि सियासी कैदियो के वार्ड तक जाना जरूरी नही है। वह हमारी तरफ नही आती थी और जेल के दूसरे हिस्सो मे गश्त लगाती थी। यह छम-छम की आवाज कुजियो के उस वडे गुच्छे मे से निकलती थी, जो उसकी कमर मे लटका रहता था।

हमने तय किया कि दूसरे दिन सुवह दूसरी साथिनो को यह किस्सा सुनायेगे और अपनी ही कमजोरी पर खूब हँसेगे, पर जब हमने अपना किस्सा सुनाना शुरू किया, तो हमने देखा कि हमारी और साथिने एक-दूसरी की तरफ कुछ इस तरह देख रही हैं, मानो कोई भेद की बात हो। जब हमने उनसे सवाल किया, तो वडे आग्रह के बाद उन्होने बताया कि उनमे से हरएक ने वही छमछम की आवाज सुनी थी और सब इसी नतीजे पर पहुची थी कि हो-न-हो यह भूत ही है, पर उन्होने यह वात हमे इसलिए नही बताई कि हम उसे सुनकर कही डर न जाये।

पर जेल मे जितनी वाते होती थी, उनमे से हरएक ऐसी नही थी कि जिस पर हम हँसते। छोटी उमर की वदिनियो के साथ जो बर्ताव किया जाता था, वह ऐसा होता था कि उसे देखकर हमारा खून खौलने लगता था, पर हम इतनी वेवस थी कि उनकी कुछ भी मदद नही कर सकती थी। पहरेदारिने बडी खराब होती थी और अक्सर राजनैतिक कैदिनो के साथ सख्ती से पेश आती थी और उनकी तौहीन करती थी। जव वे हमसे सख्ती से वात करती तो अपने दिल पर कावू रखना मुश्किल होता था, मगर उससे भी ज्यादा तकलीफ यह देखकर होती थी कि वे दूसरी वहनो को वहुत छोटी-छोटी वातो के लिए डाट-डपट दिया करती थी और बुरा-भला कहती थी।

दिन धीरे-धीरे बीतते गये। हमने जाडो का मौसम गुजारा। उत्तरी हिंदुस्तान का सख्त और कडाके का जाडा और ऊपर से यह हाल कि ठडी और तेज हवा को रोकने के लिए हमारी कोठरियो मे दरवाजे तक न थे। सिर्फ लोहे की सलाखे

लगी हुई थी, जो मुश्किल से सर्दी से हमारी हिफाजत कर सकती थी। फिर कुछ अच्छा मौसम शुरू हुआ, मगर वह वहुत जल्द खत्म हो गया और गर्मिया आगई और लू चलने लगी और आधिया आने लगी। यह मौसम बुरा था। हम उसे भी निभा ले गये। फिर एक वार वरसात शुरू हुई और सर्दी के दिन फिर करीब आ गये। दिसवर के आखिर मे मेरी वहन को और मुझे छोड दिया गया। हमारे कुछ साथी हमसे पहले ही छोड दिये गए थे। कुछ जो हमसे वाद मे आये थे, उन्हे अभी अपनी मुद्दत पूरी करनी थी। हालाकि हम अपने घर वापस जाने के लिए वेचैन हो रहे थे और हमे छूटने की खुशी हो रही थी, फिर भी अपने साथियो को छोडते हुए कष्ट जरूर हुआ।

जेल का जीवन कुछ सुखमय तो नही था, पर उससे वडा भारी तजुर्वा हुआ। कम-से-कम मुझे कुछ ऐसी वदिनियो से दोस्ती करके हर्ष हुआ, जो समाज के लिए वडी खतरनाक समझी जाती है। उन लोगो के मुकावले मे, जिनसे आये-दिन जिदगी मे मुलाकात होती रहती है, ये लोग इन्सानियत के कही वेहतर नमूने थे। मुझे घर जाने का आह्लाद हो रहा था, पर इस विचार से वडा दुख भी हो रहा था कि इन वेचारियो को अभी वरसो यही रहना है और जव वे जेल से छूटेगी, तो उनके लिए न कोई घर-वार होगा, जहा वे जा सके, न उनके सिरपर किसी का साया होगा। न कोई दोस्त और सगी-साथी, जो उस नई जिन्दगी मे उन्हे साहारा दे सके। उनके पास सिवाय उस चालाकी के, जो उन्होने जेल मे सीखी थी कोई ओर चीज न थी, जिससे वे अपना पेट पाल सके। उनके भाग मे तो यही लिखा था कि समाज उनको दुतकारता रहे और वे कुछ दिनो तक इधर-उधर मारी-मारी फिरे और मायूसी की हालत मे फिर कोई जुर्म कर बैठे। यह जुर्म वे अक्सर जरूरत से मजबूर होकर और अपनी भूख मिटाने के लिए करती है। फिर एक वार जेल चली जाती है और शायद वाकी सारी जिदगी वही गुजारती है।

हम अखवारो मे अक्सर पढते है कि कम उम्र की लडकियो को किसी वडे भारी जुर्म के लिए सजा दी गई, या किसी औरत को किसीके कत्ल के इलजाम मे सजा का हुक्म सुनाया गया या यह कि किसी औरत को वार-वार जेल भेजा गया। ये खवरे पढकर हमारा दिल काप उठता है कि क्या ऐसी वाते भी हो सकती है। हम लोग आराम की जिदगी वसर करते है और हमारे चारो तरफ ऐसे लोग रहते है, जो हमारे शुभचिन्तक होते है और हमारी निगरानी रखते है। इस वात का

अदाजा भी नही हो सकता कि हमारी इन अभागी वहनो को किन-किन प्रलोभनो का सामना करना पडता है। हम जव किसी खौफनाक जुर्म का हाल पढते है या उसका जिक्र सुनते है तो हम फौरन उससे अपनी दहशत और नफरत जाहिर करते है, पर मै यह सोचकर आश्चर्य करती हू कि अगर हम भी उसी अवस्था मे होते, जिसमे ये जुर्म करनेवाले होते है, तो हम खुद क्या करते ? हम लोग कम उम्रवालो की जेल मे थे और वहा सजा भुगतनेवाली सव लडकिया इक्कीस साल से नीचे की ही थी। यह वात सचमुच वडे अचरज की थी कि इनमे से ज्यादातर लडकिया, जिन्हे समाज खतरनाक समझता था, स्वभाव की कितनी कोमल, स्नेह-मयी और समझदार थी। अगर उनके साथ नर्मी और दोस्ती का सुलूक किया जाता, तो वे दिल खोलकर साफ-साफ वाते करती थी। मगर इसपर भी इन वद-नसीवो को इतनी लम्वी अवधि के लिए जेल मे ठूस दिया गया था। महज इसलिए कि उनका भाग्य कठोर था और गुस्से की हालत मे वे खूनी प्रवृत्तियो का शिकार वन गई थी। ऐसी प्रवृत्तिया हममे से वहुतो की होती है, पर हम अपने अच्छे सस्कारो की वजह से उन्हे जाहिर नही होने देते। अपने इन दोस्तो को पीछे छोडते हुए मुझे वडी वेदना हुई। इस वात पर शर्म भी आई कि मुझे तो जिदगी की इतनी अच्छी चीजे हासिल है और इन वेचारियो के पास कुछ भी नही है।

इन लडकियो मे से वचुली नाम की एक लडकी के प्रति मेरे मन मे वडा स्नेह था। उसका रग गोरा था, आखे वडी-वडी, शरीर स्थूल और उचाई पांच फुट से भी कम। वाल रूखे-सूखे और कधो पर लटके। जव मैने उसे पहली वार जेल की डरावनी दीवार से सटकर खडे होकर जाली वुनने का काम सीखते देखा, तो उसके मोटे झोटे कपडे और गदे रूप के वावजूद भी वह मुझे वडी सुदर लगी। वह इतनी कम उम्र की थी और उसकी सूरत इतनी भोली-भाली दिखाई देती थी कि मै हैरान हो गई कि आखिर वह जेल मे क्यो है और यह जरा-सी वच्ची ऐसा कौन-सा भारी अपराध कर सकती है। जव मै उसके करीव गई, तो वह कुछ गुनगुना रही थी। वैसा ही एक दर्द-भरा गाना अक्सर उत्तरी हिदुस्तान के पहाडी इलाको मे सुनाई देता है।

मैने उससे पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है ?"

उसने मेरी तरफ शका-भरी नजर से देखा और वडी नर्मी और झिझक से पूछा—"आप कौन है और यहा कैसे आई ?"

"मै भी एक कैदिन हू,"—मैने जवाव दिया ।

सुनकर वह खिलखिलाकर हँस पडी। "आपको किस वात पर सजा हुई है ?" —उसने मुझसे फिर सवाल किया। मैने उससे कहा कि मै राजनैतिक कैदिन हू, तो उसने मेरी इस वात पर ऐसे सिर हिलाया, गोया वह मेरी वात समझ गई, पर मेरा खयाल है कि वह वात शायद ही उसकी समझ मे आई हो। खैर, उसने समझ लिया कि मै उसके साथ दोस्ती करना चाहती हू और इस वात का इतमीनान कर लेने पर मै जेल की ओहदेदारिनी नही हू, उसने मुझे अपना नाम वताया। उसने लजाते हुए मेरी तरफ सिर उठाकर देखा, मुस्कराई और एक ठडी सास भरकर फिर अपने काम मे लग गई।

"वचुली, तुम्हे किसलिए सजा हुई ?" मैने उससे पूछा। वडी-वडी और स्पष्ट आखो से उसने मेरी ओर देखा और सहज भाव वोली—"खून के लिए।"

"क्या कहा ? खून के लिए ?" मैने उससे भी इस प्रकार प्रश्न किया गोया मुझे उसकी वात का विश्वास ही न हुआ हो और उसने फिर एक वार सिर हिलाकर अपनी बात की पुष्टि की। मुझे न तो अपनी आखो पर विश्वास आता था, न अपने कानो पर ! यह हो सकता था कि इतनी कम उम्र की वच्ची ने किसीको कत्ल किया हो ! हो न हो कही कुछ गलती जरूर हुई है।"

"वचुली, तुम्हे खून क्यो करना पडा ?"—मैने फिर पूछा—"आखिर तुम तो इतनी छोटी हो। शायद तुम्हे पता भी न रहा हो कि खून करते समय तुम क्या कर रही थी। हो सकता है कि अकस्मात् ही ऐसा हो गया हो।" उसने धीरे से अपना सिर उठाया और फिर एक वार मेरी तरफ देखा। उसकी हँसी गायव हो चुकी थी और उसकी जगह खौफ और नफरत ने ले ली थी, जिससे उसका कोमल चेहरा कठोर हो गया था।

उसकी कहानी यो है

"मैने अपने पति को ही कत्ल कर दिया।" उसने कहा—"वह मुझ पर वहुत जुल्म किया करता था। मुझे पीटता था और अक्सर ताले मे वन्द कर दिया करता था। वह मुझे फाके भी कराता था। घर मे खाने-पीने का सामान वहुत होता, पर वह मेरा हिस्सा भी मुझसे ले लेता और मुझे वहुत कम खाना देता था। जो कुछ वचता, उसे या तो वह खुद खा लेता या फेक देता था। मै उसे खुश रखने की वहुत कोशिश किया करती थी, फिर भी वह मुझे सताने और तकलीफ देने का कोई-

न-कोई नया वहाना ढूढ ही लेता। वह बहुत खूवसूरत था। जब मेरी शादी हुई मैं सिर्फ चौदह साल की थी, मगर मै उसे पसद करती थी और मैंने देवी-देवताओ के सामने सौगन्ध खाई थी कि मैं अपनी माता के कहने के अनुसार इनकी भली बीवी बनकर रहूगी, उसकी सेवा करूगी, उसका कहना मानूगी और उसे खूब खिलाया-पिलाया करूगी। मगर हमारी शादी के कुछ ही महीने वाद वह मुझ पर अचानक जुल्म करने लगा और उसे इस बात मे कुछ मजा आने लगा कि मैं उससे डरती रहू। उसने मुझसे कहा कि मुझे इसलिए सताता है कि ऐसा करने मे उसे आनन्द आता है। यह बात सुनकर मुझे बहुत डर लगा। कोई साल-भर मैं यह सब बर्दाश्त करती रही। मेरा पति मुझे अपने मा-बाप के घर जाने की इजाजत नही देता था, हालाकि मैं उससे बार-बार विनती करती थी कि मुझे घर जाने दो। दिन-पर-दिन मैं ज्यादा दुखी होती गई। इन सब जुल्म और पीडा के होते हुए भी मै कोशिश करती रही कि वह मुझे चाहे, पर मैंने जितने भी प्रयत्न किये, उनका कुछ भी असर न हुआ। वह किसी भी तरह मुझसे खुश नही हुआ। एक दिन सुबह उसने मुझे बहुत पीटा, इसलिए कि मैंने उसका एक कोट, जो वह पहनना चाहता था, धोया नही था। मुझे खूब मारने के बाद उसी तरह तडपता हुआ छोडकर वह कही चला गया। कुछ घटे बाद वह वापस लौटा। अब उसने नये कपडे पहन रखे थे और उसके गले मे लाल रग का एक रूमाल बधा हुआ था। मैं घर का काम कर रही थी और जब वह आया, तो मैंने मुडकर उसकी तरफ देखा भी नही। उसने मुझे आवाज दी—'यहा आ। बेवकूफ कही की! मेरे नये कपडे देख। क्या मै इन कपडो मे खूबसूरत नही दिखाई देता?' मैंने कुछ जवाब नही दिया। सिर्फ अपने कपडो की तरफ देखा, जो गन्दे और फटे हुए थे।

"'बोल!' वह फिर चीखा—'क्या तेरे मुह मे जबान नही है, या मेरे नये कपडे तुझसे देखे नही जाते?' मैं फिर भी खामोश रही। अब वह मेरे करीब आया और उसने मेरे मुह पर दो तमाचे मारे और मेरी कलाई इस तरह मरोडी कि मुझे बहुत तकलीफ हुई। 'मुझे छोड दो,' मैंने कहा—'वरना किसी दिन मैं तुम्हे मार डालूगी। मैं तुम्हारे नये कपडे क्यो पसद करू, जब तुम खुद तो दिन-भर खाते रहते हो और मुझे भूखा मारते हो! मैं पूछती हू कि आखिर ऐसा क्यो?' इसके पहले कि मै अपनी बात पूरी करू, उसने अपना डडा उठाकर गालियो की बौछार करते

हुए मुझे इतना पीटा, इतना पीटा कि मै करीव-करीव वेहोश हो गई। इस हालत मे उसने मुझे एक तरफ पटक दिया और कहा—'ले, अब तेरा वस हो तो मुझे मार डाल।' यह कहते हुए उसने डडा एक तरफ को फेक दिया और इतमीनान से लेट गया और जरा-सी देर मे सो गया। कुछ घटे वाद मैने उठने की कोशिश की, पर मेरा सारा जिस्म टूट रहा था। मै फिर लेट गई। थोडी देर बाद अचानक देखा कि मेरा पति एक कोने मे सो रहा है। उसने अपने नये कपडे उतारकर खूटी पर टाग दिये थे। पर नया रेशमी रूमाल अभी तक उसके गले मे वधा हुआ था। जब मे उसकी तरफ देख रही थी, तो मेरे दिल मे उसके लिए नफरत भरी हुई थी। अनायास मेरे मन मे आया कि मै उसको मार डालू और उससे छुटकारा पा लू। पर कैसे ? मैने इधर-उधर देखा, पर कोई ऐसी चीज नजर न आई, जिससे मै उस पर वार करती। फिर मेरी निगाह उस गले के रूमाल पर पडी। मुझे नही मालूम कि यह बात किस तरह हुई, पर फौरन ही मै उठ खडी हुई और उसी रूमाल को अपने पति के गले मे खूब कसकर जोर से बाधने लगी। रूमाल से गला घुटते ही वह जाग पडा, उसने हाथ-पैर हिलाये और चीखने का प्रयत्न किया, पर मै उस रूमाल को मजबूती से कसती ही गई। यहातक कि उसकी दोनो आखे वाहर निकल आईं और फिर वह ठडा हो गया। मैने उसे उसी हालत मे छोड दिया और वहुत थकी हुई होने के कारण मै मूर्च्छित होकर गिर पडी। मेरा कुछ ऐसा खयाल था कि वह उठकर मेरी खूब मरम्मत करेगा, पर वह नही उठा और मै वही उसके करीव पडी रही, इस तरह कि मै हिल भी नही सकती थी। दूसरे दिन सुबह किसी-ने हम दोनो को इसी हालत मे पाया। उसने देखा कि मेरा पति मरा पडा है। उसने पुलिस को खवर दी और इधर-उधर जाकर सब पड़ोसियो को भी इस बात की खबर कर दी। मै अव भी कुछ वेहोश-सी थी और मुझे इस वात का यकीन नही आता था कि मैने सचमुच अपने पति को मार डाला है।

"पुलिस के आनेतक कोई भी मेरे पास न आया। पुलिस मुझे जेलखाने ले गई। मुकदमा चलने के वाद मुझे इस जेल मे भेजा गया और अव मै यहा हू। मैं इतनी छोटी थी कि मुझे फासी नही दी जा सकती थी और औरतो को यू भी फासी नही दी जाती। मुझे उम्र-भर की कैद की सजा मिली। यह है मेरी दास्तान।"

मैने यह विचित्र कहानी खामोशी से और वचुली के चेहरे पर अपनी नजर जमाकर सुनी थी। मुझे अब भी यकीन नही आता था कि जो कुछ यह कह रही

है वह सच होगा, पर वह सच तो होगा ही, क्योकि वह जेल मे थी।

बचुली अपनी कहानी खत्म करके फिर अपने काम मे लग गई, गोया उसने मुझे एक मामूली-सी कहानी सुनाई हो। उसे यह मालूम करने की इच्छा भी नही थी कि उसकी कहानी का मुझ पर क्या असर हुआ। उसके लिए यह सारा किस्सा एक ऐसी घटना थी, जिसके बारे मे वह अपने सीधे-सादे भोले मन से यह मानती थी कि यही उसकी किस्मत मे बदा था। जेल मे वह अपना जीवन बिताती थी, मानो यही उसका भाग्य हो। यह एक ऐसी बात थी जो उसके खयाल मे टल ही नही सकती थी। फिर परेशान होने से क्या फायदा?

जब मैने उसके झुके हुए सिर की तरफ देखा, तो मेरा दिल टूटने लगा। वह इतनी छोटी और अपरिपक्व थी कि किसी तरह मुजरिम नजर नही आती थी। आखिर किस्मत उसके साथ कैसे इतनी निष्ठुर हो गई थी? उसकी जिदगी कैसे कटेगी? मै सोचने लगी—क्या ऐसे मुकदमो पर दूसरे तरीके से विचार नही करना चाहिए और जो सजा ऐसे लोगो को दी जाय, वह भी किसी और प्रकार की नही होनी चाहिए? उम्र-कैद कोई मजाक नही है। इसके मानी है जेल मे कम-से-कम बीस बरस गुजारना, और ऐसी हालत मे कि बाहर की दुनिया का कुछ भी हाल मालूम न होने पाये, सिर्फ दूसरे गुनहगार कैदियो के साथ रात-दिन गदी-से-गदी गालिया और बुरी-से-बुरी बाते सुनना, बुरे लोगो को देखते रहना और जेल के अदर ऐसी-ऐसी चालाकिया और बुरी बाते सीखना, जिन्हे बाहर की दुनिया मे कोई बारह बरस मे भी न सीख सकेगा। बचुली की उमर पन्द्रह साल की थी। जब वह जेल से निकलेगी, तो उसकी उम्र पैतीस साल की हो जायगी। अपनी पूरी जवानी जेल मे गुजारने के बाद क्या वह ऐसी ही सुन्दर और भोली-भाली बनी रहेगी, जैसी अब थी? या वह पक्की मुजरिम बन जायगी, जिससे आम लोग नफरत करेगे, या पापी जीवन बितायगी और उनके लिए अन्त मे फिर जेल मे पहुचकर रहेगी?

मै बडी परेशानी मे थी। मैने बचुली के सिर पर हाथ फेरा और कहा—"बचुली, सुनो, मै तुमसे फिर मिलूगी। तुम्हे अच्छी तरह काम करना चाहिए, ताकि कैद की मियाद मे कमी हो जाय और तुम जल्दी से ही जेल से छूट जाओ।"

उसके चेहरे पर हँसी खेलने लगी। वह बोली—"जी हाँ। लोग मुझसे कहते है कि अगर मै किसीको परेशान न करू और खूब मेहनत से काम करू, तो जल्दी छूट जाऊगी और मुझे अपनी पूरी सजा जेल मे नही काटनी होगी। फिर मै अपने

मा-वाप के पास जाऊगी। यह कितना अच्छा होगा ! मेरा घर पहाडो मे है और मुझे अपने माता-पिता से वडी मुहब्वत है।" मै भारी हृदय लिये वहासे चल दी। मुझे आशा थी कि इस लडकी को जो लम्वी मुद्दत जेल मे काटनी है, उसमे इसका साहस और उत्साह कायम रहेगा और उसके कदम डगमगायेंगे नही। पहाडो की सतान—इस जवान लडकी को दरख्त, फूल और खुली हवा की आदत थी। मैदानी इलाके के इस जेल की हवा और यहाकी सख्त गर्मी कैसे वर्दाश्त होगी ? ऐसी चिन्ता ने मुझे घेर रखा था। तो भी वह खासी मस्त और अपनी किस्मत पर अपने-आपको छोडे हुए नजर आती थी। मैं उसकी हिम्मत की दाद दिये विना न रह सकी।

मैंने फिर एक वार नजर दौडाई। वचुली अपने काम मे मगन थी। उसके साथ मैंने उस जेल मे एक साल गुजारा था। मुझे अक्सर बाहरी दुनिया की याद आती थी, पर जव मेरे वाहर जाने का दिन आया तो मुझे दुख हुआ। जेल के वाहर वडी-वडी आखोवाली वचुली कहा मिलेगी, जिसके साथ मै बाते करके और पहाडी गीत सुनकर अपना वक्त गुजार सकू ? अपने पीछे उसे जेल मे छोड़ जाने के विचार ने मुझे बहुत ही वेकार कर दिया। आखिर वह दिन भी आया, जो उस जेल मे मेरे लिए आखिरी दिन था। मै अपने सव साथियो से विदा लेने गई। अचानक वचुली ने आकर अपनी दोनो वाहे मेरे गले मे डाल दी। मैंने देखा कि प्यारी वचुली खामोश खडी है और उसकी वडी-वडी आखो मे आँसू भरे है। मैंने उसे चिपटा लिया और उसकी ओर देखकर कहा—"वचुली, देखो हिम्मत से काम लेना और खुश रहने की कोशिश करना। जव तुम बाहर आओ, तो मुझे जरूर खवर कर देना और जी चाहे तो मेरे पास चली आना।"

"क्या आप वाहर की इस फैली दुनिया मे मुझे भूल न जायगी ?" वचुली ने मुझसे पूछा और फिर खुद ही कहा—"लोग मुझसे कहते है कि जो लोग यहासे वाहर जाते है, वे कैदियो को याद रखना पसद नही करते।" मैंने उसके सिर पर हाथ फेरा और उसे विश्वास दिलाया कि ऐसा न होगा। इस बात को आज कई साल वीत गये, तो भी उसकी याद मेरे मन मे ताजा है और इसी तरह वरसो तक वनी रहेगी।

जब मैंने अपनी कुछ और साथिनो के साथ, जो उसी दिन छूट रही थी, जेल के अहाते और फाटक से बाहर कदम रखा, तो मेरे हृदय से यहीं प्रार्थना निकल रही थी कि हे भगवान् ! वचुली और उस-जैसी कम उम्रवाली कैदिनो को अपना

सारा जीवन जेल मे न विताना पडे और नियति की ऐसी कृपा हो कि जिससे वे अपने घरो मे वापस आकर सुख और शान्ति की जिन्दगी वसर कर सके।

मैंने फिर एक वार पीछे की तरफ मुडकर जेल की उन डरावनी दीवारो को देखा, जिनके भीतर कम उमर की दरजनो लडकिया वद थी और जो साल-भर से मेरा भी घर था। जेल के वडे दरवाजे वंद हो रहे थे और उनमे से मुझे वे वहने दीख रही थी, जो हमे विदा करने अहाते मे खडी थी। मैने उनकी तरफ देखकर अपना हाथ हिलाया और फिर जल्दी से मुह फेर लिया, ताकि उन्हे मेरे आँसू दिखाई न दे सके; पर उन्होने मेरे आँसू देख ही लिये और हँसते हुए पूछा—"क्या जेल से वाहर जाते आपका दिल टूट रहा है ?" उन्हे पता नही था कि मेरे आँसू किसलिए वह रहे थे। कम उमर की कैदिनो से वे दूर रही थी और मेरी वहन ने और मैने उन्हे जितना पहचाना था, वे उन्हे नही पहचान पाई थी। मेरे आँसू इसलिए नही निकल रहे थे कि मै जेल से वाहर जा रही थी, क्योकि जेल हमारे लिए कोई आराम की जगह नही थी। मेरे आँसू इसलिए वह रहे थे कि मै अपने पीछे जेल मे उन छोटी-छोटी वेवस लडकियो को छोडकर जा रही थी, जिन्हे नादानी और दुख से तग हालत मे किये गये अपराधो के लिए लंवी-लवी मुद्दत की सजाए दी गई थी। उन्होने नासमझी और जुल्म की वजह से ऐसे काम किये थे, जो वे कभी भी न करती, अगर उन गरीवो के भाग्य मे गरीवी, गफलत और वेरहमी न वदी होती। इन्ही छोटी वच्चियो के लिए, जिनमे इतनी ज्यादा इन्सानियत, सादगी और प्रेम भाव भरा हुआ था, मेरा दिल खून के आँसू रो रहा था और उनको छोडते दुख हो रहा था। मै अपने घर वापस जा रही थी, अपने सवधियो और प्रियजनो मे, जो मेरे स्वागत के लिए तैयार वैठे थे मगर ये। वदनसीव लडकिया! इनका क्या होगा ? मै इस वात को सोच भी नही सकती थी!

: ७ :

तुम्हारी खुशी के लिए मैं प्रभात में पशु-पक्षियों का कलरव-गान और रात्रि में सितारों के टिमटिमाते प्रकाश के गहने और खेल-खिलौने बनाऊंगा।

वन के हरियाले और सागर के नीले दिनों का तुम्हारे और अपने लिए उपयुक्त एक महल बनाऊंगा।

—आर० एल० स्टीवेसन

हमें लखनऊ में रिहा नहीं किया गया, बल्कि हमें जेल की मेट्रन के पहरे में वापस इलाहाबाद लाया गया। हम साल-भर बाद घर लौटे। देखा, सारा घर उजड़ा पड़ा है। कमला कलकत्ते में बीमार थी और माताजी उन्हींके पास थीं। किसीको हमारे जेल से छूटने की खबर न थी। हमने आनन्द-भवन बन्द पाया। पर हमारे आने की खबर बिजली की तरह फैल गई। किसीने हम लोगों को स्टेशन से घर आते हुए देख लिया था और हमारी रिहाई की खबर फैला दी। घंटे-दो-घंटे भी नहीं गुजरे कि हमारे घर पर दोस्तों और रिश्तेदारों का ताता बंध गया। उनमें से हर शख्स हमारे जेल-जीवन के बारे में बेशुमार सवाल करता था। हम जिस तरह की खामोश जिन्दगी साल-भर से गुजार रहे थे, उसके बाद यह बात कुछ अजीब-सी लगती थी और कम-से कम मैं तो एक साथ इतने आदमी देखकर चकरा गई थी।

इलाहाबाद में कुछ दिन ठहरने के बाद स्वरूप और मैं कलकत्ते चले गये। कमला करीब-करीब अच्छी हो चुकी थी और घर वापस लौटना चाहती थी। इसलिए एक हफ्ते कलकत्ते में रहने के बाद हम सब साथ ही इलाहाबाद लौट आये।

स्वरूप ने अपनी गिरफ्तारी से कुछ पहले अपनी तीनों छोटी लड़कियों को पूना के एक बोर्डिंग स्कूल में भेज दिया था। उनमें सबसे छोटी लड़की सिर्फ तीन साल की थी। स्वरूप ने बच्चों को बहुत दिनों से देखा नहीं था। इसलिए वह चाहती थी कि जल्द उनसे मिलने जाये। यह स्कूल हमारे दोस्तों का था और इन्दिरा भी उसी में थी। जेल में मुझे एक बार बड़े जोर का मलेरिया हुआ था और उससे मैं बहुत

कमजोर हो गई थी। माताजी ने सोचा कि आवो-हवा वदलने से मेरी तवीयत ठीक हो जायगी और इस खयाल से उन्होने कहा कि मैं भी स्वरूप के साथ पूना और वम्वई चली जाऊ। उनकी इस वात को मैंने वडी खुशी मे मजूर कर लिया। हम लोग सीधे पूना गये और कुछ दिन वहा ठहरने के वाद सव वच्चो को साथ लेकर वम्वई चले गये। जव हम पूना मे थे, तो यरवदा जेल मे कई वार गाधीजी से मुलाकात की। वह हमेशा वडे प्रेम से हमारा स्वागत करते थे और जव कभी इजाजत मिलती थी, तो उनके साथ कुछ वक्त गुजारने मे हमे वडी खुशी होती थी।

मेरी वहन, उनके वच्चे और मैं एक हफ्ता वम्वई रहे। इसी हफ्ते मैं राजा से मिली। पहली वार हमारी मुलाकात एक दावत मे हुई और जैसे ही मैंने कमरे मे प्रवेश किया, मैंने उन्हे देखा। वहा जितने लोग थे, उन सवसे राजा कुछ निराले मालूम हुए। वह औरो के साथ घुल-मिल नही रहे थे और ऐसा मालूम होता था कि अपने-आपको वह दूसरो से कुछ ऊचा समझ रहे हैं। इससे मुझे कुछ झुझलाहट भी हुई और कुछ ताज्जुव भी। हालाकि वह उसी पार्टी के लोगो मे से थे, पर लगता ऐसा था मानो पार्टी मे उनका कोई सम्वन्ध ही न हो। वह विलकुल खामोश और अलग वैठे एक खूवसूरत पाइप पी रहे थे। हमारा एक-दूसरे से परिचय कराया गया, मगर इसके सिवा हममे कुछ भी वात चीत न हुई। मेरी आदत है कि जव मैं पहली वार किसी-से मिलती हू, तो मेरी नजर उसके हाथो पर जाती है, क्योकि मुझे हमेशा ऐसा मालूम होता है कि हाथ देखने से लोगो के चरित्र का पता चल जाता है। इसलिए जो चीज मैंने सवसे पहले देखी, वह राजा के हाथ ही थे, जो वडे नाजुक और कलापूर्ण थे; और उनसे उनके वारे मे काफी पता चलता था। हमारी दूसरी मुलाकात एक दूसरी दावत के मौके पर जुहू मे हुई, जिसका राजा ने और एक दूसरे दोस्त ने इन्तजाम किया था। उस मौके पर राजा मे और मुझमे वहुत वात-चीत भी हुई। हमारी वाते ज्यादातर कितावो और साम्यवाद के वारे मे थी। मैंने राजा से वायदा किया कि अपने भाई के पुस्तकालय से कुछ कितावें उन्हे भेजूगी। यह हमारी दोस्ती की शुरुआत थी और इसके वाद हमने एक-दूसरे से खत-कितावत शुरू की।

मई के महीने मे मैं स्वरूप के साथ एक-दो महीने के लिए मसूरी चली गई और वहा से वापसी पर मैंने फैसला किया कि कुछ दिनो के लिए अहमदावाद जाकर अपनी सहेली भारती साराभाई के साथ रहू, जो जल्दी ही ऑक्सफोर्ड जानेवाली थी। मैंने राजा को खत लिखकर अपने इरादे की खवर दी और लिखा कि मुझे

आशा है कि अहमदाबाद या बम्बई मे उनसे मुलाकात होगी। उन्होने मुझे लिखा कि मै दिल्ली होकर न जाऊ, जैसा कि मेरा इरादा था। उनकी इच्छा थी कि मै बम्बई से अहमदाबाद जाऊ। मै इसपर राजी हो गई। खुशकिस्मती की बात कि हमारे खानदान के एक पुराने मित्र को, जो उन दिनों बम्बई मे थे, यह खबर मिली कि मै आ रही हू। वह और राजा दोनो स्टेशन पर मुझे लेने आये, पर उनमे से एक को दूसरे का पता न था कि वह भी स्टेशन पर है। मै उन दोनो से मिली और वह दोस्त राजा से जिस तरह मिले, उससे मुझे कुछ उलझन-सी हुई; पर जब मैने उन्हे एक-दूसरे से मिलाया, तो उस दोस्त ने राजा की तरफ बडे शक की नजर से तो देखा, मगर उनसे कोई सवाल नही किया।

उस दिन के बाद से मैने अपना ज्यादातर वक्त राजा के साथ बिताया। हम सिनेमा देखने जाते थे और मोटर पर दूर तक घूमने भी, पर राजा दूर-दूर से रहते थे। मै जानती थी कि वह मुझे पसन्द करते होगे, तभी तो मेरे साथ हर रोज इतने घटे गुजारते थे, फिर भी मै यह नही कह सकती थी कि उन्हे मेरी कुछ पर्वाह भी है, क्योकि उनके दिली इरादो का किसी तरह पता ही नही चलता था। यह भी एक सबब था कि मुझे वह पसन्द आये और मै उन्हे चाहने लगी।

लोग मेरी ओर काफी ध्यान देते थे और मै इस बात को माने हुई थी कि लोग मुझे पसन्द करते है। इसकी वजह सिर्फ यह थी कि मेरी समझ मे इसका कोई सबब नही आता था कि वे मुझे नापसन्द क्यो करे, न कि यह कि मै इस बात को अपना हक समझती थी कि लोग मुझे पसन्द करे। राजा की बेपर्वाही से मुझे कुछ उलझन-सी हुई, और शायद यही वजह हो कि वह अपने चारो तरफ जो दीवार खड़ी किये हुए थे, उसे तोडने की मैने कोशिश की। हर रोज कई-कई घटे हम साथ बिताते थे। हम बराबर एक-दूसरे से बाते करते रहते, फिर भी कभी एक-दूसरे से उकताये हुए नज़र नही आते थे।

मेरे अहमदाबाद जाने से कुछ ही पहले एक दिन शाम को यो ही राजा ने मुझसे कहा—"यह तो बताइये कि हम दोनो की शादी कब होगी?" यह एक बडा ही सीधा-सादा सवाल था, जो सीधे-सादे ढग से किया गया था, और एक ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसका दिल वैसा ही सादा और साफ था, जैसा बच्चो का हुआ करता है।

मै इस सवाल से कुछ हैरान-सी हुई। फिर भी शादी की दरख्वास्त के इस अनोखे तरीके से मुझमे एक तरह की बिजली-सी दौड गई। एक हफ्ते से हम दोनो

एक-दूसरे से वरावर मिल रहे थे और इस मुद्दत मे हममे से किसीने भी प्रेम का एक शब्द भी नही कहा था। मै जानती थी कि मै राजा को पसन्द हू, पर मै यह न समझ सकी थी कि वह मुझसे प्रेम करने लगे है। मेरा यह हाल था कि मै उन्हे जितना ज्यादा देखती थी, उतना ही ज्यादा पसंद करती थी। मै जितने लोगो को जानती थी वह उन सवसे कुछ अनोखे थे। फिर भी मुझे यकीन नही था कि मुझ उनसे प्रेम है और मैने राजा से यह वात कह भी दी। राजा ने अपने शात और खामोश तरीके से मुझे यकीन दिलाया कि भले ही मुझे इस बात का पता न रहा हो, पर मुझे उनसे प्रेम जरूर था और कहा कि अव तो मै शादी के लिए "हा" कह दू। मैने "हा" की नही। मैने उनसे कहा कि मै अहमदाबाद से अपनी वापसी पर उन्हे जवाव दूगी।

जो एक हफ्ता मै बाहर रही, उसमे राजा मुझे रोज खत लिखते रहे। उनके वे खत बडे ही सुदर थे और उनमे वह शादी की वात पर वरावर जोर दे रहे थे। उनसे दूर होकर मुझे पता चला कि मुझे उनसे कितना प्रेम है और फिर उनके करीव होने को मेरा जी कितना चाह रहा है। मुझे अहमदाबाद मे अपने ठहरने की अवधि कम करनी पडी, क्योकि मुझे कुछ ऐसा मालूम हो रहा था कि मेरे लिए वम्वई वापस जाना जरूरी है।

गरज यह कि मै वम्वई वापस आई और मैने राजा से कह दिया कि मैं उनसे शादी करूगी। मै उस समय एक सपने की दुनिया मे थी, पर एक दिन सुवह मेरे पैर फिर जमीन पर आ लगे। मैने अखवारो मे पढा कि माताजी वहुत बीमार हैं। मैने राजा को टेलीफोन किया कि मै उसी रात को इलाहावाद जा रही हू। भारी दिल मे मै उनसे जुदा हुई और हम नही जानते थे कि हम फिर कव मिलेंगे।

जव मै इलाहावाद पहुची, तो मुझे पता चला कि माताजी को इलाज के लिए लखनऊ ले जाया गया है। इसलिए मै भी लखनऊ चल दी।

सिर्फ एक व्यक्ति से मैने राजा का जिक्र किया था और वह मेरी वहन थी। अपनी वापसी पर मैने उनसे कहा कि मैने राजा से शादी का वादा कर लिया है। पर मैने उनसे कहा कि अभी किसीसे इस वात का जिक्र न करना, क्योकि माताजी बीमार है और जवाहर जेल मे है। इसलिए हम दोनो ने यह वात अपने तक ही रखी।

माताजी की हालत वहुत नाजुक थी और हमने कई दिन और राते उनके पास

काटी। जवाहर की कैद की दो साल की मियाद पूरी होनेवाली थी, लेकिन चूकि माताजी की हालत बहुत खराब हो चुकी थी, जवाहर को दो-तीन दिन पहले छोड दिया गया। कुछ दिन बाद माताजी की हालत सुधरने लगी।

अब मैने स्वरूप से कहा कि जवाहर से राजा का जिक्र कर दो। मुझे इसमे कोई बात असाधारण बात नही मालूम हुई कि अपने पति का चुनाव अपने घर वालो के मशविरे के बिना करू, इसलिए कि मुझे हमेशा से इस बात की आजादी थी कि जो चाहू करू। यह बात तो मै सोच भी नही सकती थी कि मै अपनी माताजी, भाई और बहन की मर्जी के खिलाफ कुछ करू या उनका हुक्म न मानू, पर मै जानती थी कि जबतक कोई खास सबब न होगा, वे कोई ऐसी बात न करेगे, जो ठीक न हो। वे लोग राजा के बारे मे कुछ नही जानते थे, पर मै जानती थी कि इस शादी को अपनी मजूरी जरूर देगे, क्योकि उन्हे जिस बात का सबसे ज्यादा खयाल था, वह मेरा सुख था और मुझे इसका भी यकीन था कि वे सब राजा को जरूर पसद करेगे। मुझे सिर्फ एक ही बात का डर था और वह यह कि वे यह कहेगे कि हम दोनो एक-दूसरे को काफी दिनो से जानते नही है और यह बात सच भी थी। पर मै नही समझती कि लम्बी मुद्दत तक सम्पर्क रखने से लोग एक-दूसरे को ज्यादा अच्छी तरह जान सकते है।

जब जवाहर ने मुझसे राजा के बारे मे बात-चीत की, तो अपने खास अदाज मे की। अपनी आखो मे चमक लाते हुए उन्होने कहा—"अच्छा, तो मैने सुना है कि तुम शादी का इरादा कर रही हो ? क्यो उस लडके के बारे मे कुछ बताओगी ?" मै इस सवाल से कुछ परेशान जरूर हुई, पर मैने कहा कि मै बता सकूगी। जवाहर ने मुझसे पूछा कि राजा क्या करते है ? मैने कहा कि वह बैरिस्टर है और उन्होने हाल ही मे अपना काम शुरू किया है। फिर जवाहर ने मुझसे राजा के घरवालो और खानदान के बारे मे पूछा। मैने कहा कि मै कुछ नही जानती। फिर उन्होने पूछा कि राजा के कितने भाई-बहन है। इसका भी मै कुछ जवाब न दे सकी। अब जवाहर भडक उठे। मै कापने लगी। अपने-आपको कोसती थी कि ये सब बाते मैने राजा से पूछ क्यो न ली। आक्सफोर्ड मे राजा किस कालेज मे पढते थे ? वहा वह क्या करते रहे ? और इसी तरह के कोई एक दर्जन सवाल जवाहर ने मुझसे पूछ डाले। मै उनमे से किसी एक का भी ठीक जवाब न दे सकी। आखिर जवाहर ने मुझसे पूछा कि जब राजा के

नाम के पहले अक्षर 'जी० पी०' है, तो मै उन्हे राजा क्यो कहती हू ? 'जी० पी०' से क्या मतलब है ? अब मै सचमुच घबरा गई। राजा ने मुझे बताया तो था कि जी० पी० से क्या मुराद है, पर उस घडी मुझे उनका असली नाम याद ही न आ सका। मैने कुछ डरते-डरते अपने भाई से कहा कि मुझे याद नही आता। अब जवाहर बहुत तेज हो गये और यह कहते हुए कि यह तो बडी भयकर बात है, वह कमरे से बाहर चले गये और मै हताश और दुखी होकर बैठी रही।

अब मुझे पता चला कि मैने वास्तव मे बेवकूफी की कि इतनी मामूली बाते भी ठीक से न मालूम कर सकी, पर सच तो यह है कि मै जितने दिन राजा के साथ रही, उनमे इतनी मगन रही कि मुझे कभी यह खयाल भी न आया कि मै खुद उनके बारे मे या उनके कुटुब के बारे मे बाते पूछू। हमने बहुत-सी बाते की थी और बहुत-से सवालो पर बहस की थी, पर खुद अपने बारे मे एक-दूसरे से कुछ न पूछा था। मै राजा को चाहती थी और मुझे किसी और बात से सरोकार भी न था।

उसी रात मैने राजा को एक खत लिखा और उनसे जरूरी बाते पूछी। वह कुछ खफा जरूर हुए, पर उन्होने यह जवाब भेजा

मेरा परिचय

नाम—गुणोत्तम हठीसिग।

स्कूल—नेशनल स्कूल और गुजरात विद्यापीठ।

कालेज—सेट केथरीन, ऑक्सफोर्ड।

इन्स आफ कोर्ट—लिकन।

डिग्री—बी० ए०, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र और दर्शनशास्त्र मे।

क्लब—कोई नही। न किसी मे शरीक होने का इरादा है।

पेशा—बैरिस्टर-एट-ला। मुझे उससे दिलचस्पी है। जो भी काम करता हू, उसमे मुझे दिलचस्पी होती है, पर उसका यह मतलब नही कि मै किसी और काम के खयाल से—हो सकता है कि राजनीति के खयाल से—साल दो साल मे बैरिस्टरी छोड न दू।

खास शगल—आराम कुर्सी पर बैठकर पाइप पीना। सोचने की आदत है, जो अक्सर लोगो मे नही होती।

खेल—बहुत साल पहले क्रिकेट खेला करता था। अब कुछ नही खेलता।

स्वभाव—लोग समझते है कि मै अहकारी और स्वार्थी हू।

शादी के बारे मे विचार—अगर कोई आजादी चाहता है और उसे वह कायम रखना चाहता है, तो पूरी आजादी देने का कायल हू।

हवाला—किसी का नही दे सकता।

भविष्य मे तरक्की के मौके—कुछ भी नही।

माली हालत—मामूली तौर पर अच्छी-खासी। औसत दर्जे के आराम से रह सकता हू, मगर अमीरी ठाट से नही।

आखिरी बात—यह एक दरख्वास्त है—मुमकिन है कुछ अनुचित हो—कुमारी कृष्णा नेहरू के नाम—इस बात के लिए कि ऊपर जिस व्यक्ति का वर्णन है, उसके साथ अक्तूबर, १९३३ मे शादी के लिए राजी हो जाय।

यह था जवाब जो मुझे मिला; और उसे पाकर मुझे बड़ा लुत्फ आया; क्योकि उससे मै अदाजा कर सकी कि राजा से खुद उनके बारे मे तफसील पूछने पर उन्हे कितनी झुझलाहट हुई है।

माताजी जब जरा और अच्छी हुई, तो जवाहर बबई जाकर राजा से मिले। फिर जवाहर गाधीजी से मिले और उनसे कहा कि मै राजा से शादी करना चाहती हू। गाधीजी राजा के खानदानवालो को अच्छी तरह जानते थे। उन्होने कहा कि मै पहले राजा से मिलना चाहता हू। राजा को वह कुछ-कुछ पहले से जानते थे। इस पर राजा गाधीजी से मिलने गये और गाधीजी ने उनसे जो सवालात किये, उनसे राजा बहुत खुश नही हुए, पर यह सब होते हुए भी राजा शादी के इरादे से पलटे नही और न झिझके, (मुझे यकीन है कि कम बहादुर व्यक्ति ऐसे होगे, जो ऐसी बातो का मुकाबला कर सके) और उन्होने जवाहर की यह बात मजूर की कि लखनऊ जाकर मेरी माताजी से और खानदान के और लोगो से मिले। वह कोई पन्द्रह दिन बाद लखनऊ आये। माताजी तब भी अस्पताल मे थी। वह बहुत कमजोर थी, और तबतक खतरे से बाहर नही हुई थी। जब माताजी ने राजा को देखा, तो उन्होने उन्हे फौरन पसद कर लिया और राजा ने भी माताजी को बहुत पसद किया। उसके बाद माताजी की यही इच्छा थी कि जितनी जल्दी हो सके, हमारी शादी हो जाये। मै नही चाहती थी कि माताजी की तबीयत ठीक होने से पहले शादी हो, पर वह किसी तरह इस काम मे देर पसद नही करती थी। वह समझ रही थी कि शायद अब ज्यादा दिन जिंदा न रह सकेगी और इसीलिए चाहती थी कि इससे पहले कि उन्हे कुछ

हो, मेरी शादी हो जाय और मै सुख से अपना घर बसाऊ।

२० अक्तूबर, १९३३ को सिविल मैरिज के तरीके से मेरी और राजा की शादी आनंद-भवन मे हुई। यह उत्सव बहुत सादा था और आध घटे में खत्म हो गया। स्वरूप की शादी के मुकाबले में, जिसमे पूरा एक हफ्ता लगा था, मेरी शादी बडी ही सादगी से हुई। इस मौके पर हमारे कुछ दोस्त और रिश्तेदार और राजा के भाई-बहन और चाचा कस्तूरभाई लालभाई मौजूद थे। माताजी अभीतक विस्तर पर ही पडी थी और अहमदाबाद मे राजा की माताजी भी बहुत बीमार थी। इसीलिए हमने तय किया था कि हमारी शादी खामोशी से हो जाय।

बापू (गाधीजी) उस समय इलाहाबाद नही आ सकते थे। इसलिए उन्होने कहला भेजा कि यह शादी वर्धा मे हो। मै यह जरूर चाहती थी कि इस समय पर बापू मौजूद हो और हमे आशीर्वाद दे, पर उसपर भी मै इसके लिए तैयार न थी कि मेरी शादी वर्धा मे हो। मै इस बात को सोच भी नही सकती थी कि मेरी शादी मेरे उस घर के सिवा कही और हो, जिसके साथ मेरे बचपन की बहुत-सी बातें जुडी थी और जहा मै अपने पिताजी की गोद मे पली थी। हालाकि अब वह हमारे बीच नही थे, फिर भी इस घर के साथ उनकी कितनी ही बातें मुझे याद आती थी। मेरी शादी मे यही एक कसर थी कि वह मुझे कदम-कदम पर याद आ रहे थे। बापू ने, फिर भी, मुझे आशीर्वाद का एक खत भेजा और अपने हाथ से कते हुए सूत के दो हार—एक राजा के लिए और एक मेरे लिए। उन्होने मुझे हिन्दी में यह खत भेजा था

"चि० कृष्णा,

"तुम्हारा पुनर्जन्म होनेवाला है, क्योकि शादी एक तरह का पुनर्जन्म ही तो है, है न ?

"स्वरूप दुलहन बनकर काठियावाड मे आई, पर उसने अपने पति को अपने पुरान सूबे—यू० पी०—मे जाकर बसने के लिए तैयार कर लिया। लेकिन तुम्हारे मे और स्वरूप में अतर है। रणजीत काठियावाडी और महाराष्ट्रीय होने का दावा रखता है। गुणोत्तम सिर्फ गुजराती है और मै नही समझता कि उसे तू इलाहाबाद खीच ले जायगी। तुम्हे तो बहुत करके गुजरात अथवा बबई में ही रहना होगा। मेरी उम्मीद है कही भी तू रहे खुश रहेगी और माता-पिता के नाम को उज्ज्वल रखेगी। ईश्वर तुझे और गुणोत्तम को सहायता करे। विवाह के समय मेरा आना तो नही

हो सकता, इसलिए यहीसे आशीर्वाद भेजकर सतुष्ट रहना होगा।

बापू के आशीर्वाद।"

वल्लभभाई पटेल उन दिनो नासिक जेल मे थे। वही उन्होने हमारे रिश्ते की खबर सुनी। उन्होने भी मुझे मुबारकबादी का एक खत भेजा और आशीर्वाद दिया। खत मे उन्होने लिखा कि मेरे बहनोई रणजीत पडित ने शादी के बाद अपना घर छोड दिया था और सयुक्तप्रात मे आ बसे थे, जहा हमारा घर था। गुजरात के लोग मुझे अपने सूबे मे रखेंगे और इस बात की इजाजत न देगे कि मै उत्तर मे चली जाऊ या राजा को अपने साथ ले जाकर वही बसाऊ। मेरा खुद भी ऐसा इरादा नही था। इसलिए वल्लभभाई की शका ठीक नही थी। पर मुझे यह जान करके बडी खुशी हुई कि इतने सब लोग मेरे नये घर मे मेरा स्वागत करने को तैयार थे।

सरोजिनी नायडू हमारे कुटुब की बडी पुरानी दोस्त है। उन्होने भी मुझे बधाई की एक चिट्ठी भेजी। यह खत वैसा ही था, जैसा उनका खत होना चाहिए था, काव्य और सगीत से भरा हुआ। उन्होने लिखा था

"मेरी प्यारी बिट्टी, (यह मेरा बचपन का नाम है, जो अबतक मेरे साथ लगा हुआ है) यह बात कितनी खुश करनेवाली है कि हमारे मौजूदा रूखे राष्ट्रीय जीवन मे अचानक मोहब्बत की एक कली खिलकर फूल बन जाये और अपनी शोभा से सारे चमन को पुरबहार बना दे! तुम दोनो सचमुच कितने शरीर हो कि तुमने अपने इस राज को इतने दिन छुपाए रखा! बिट्टी, मै तुम्हारे इस नये हासिल किये आनद से बहुत ही खुश हूं। सच तो यह है कि मुझे दुगुनी बल्कि तिगुनी खुशी है; क्योकि मै जानती हू कि प्यारी अम्माजी को (इसी नाम से श्रीमती नायडू मेरी माताजी को पुकारा करती थी), जो बिस्तर मे बीमार पड़ी है, अपने मन की आखिरी इच्छा पूरी होने और अपनी नन्ही बिटिया के दुलहन बनने से कितनी खुशी होगी। मै यह भी जानती हू कि यदि पापाजी (पिताजी) जिदा होते, तो वह तुम्हारे इस चुनाव को कितना ज्यादा पसद करते और तुम्हे कितना आशीर्वाद देते, अपने दिल की भावनाओ को हँसी-मजाक करके किस तरह छुपाते। उनके पुराने शाही दिल मे भी यही इच्छा थी और वह कभी-कभी उसका जिक्र भी किया करते थे।

"तुम अपने राजा को जबसे जानती हो, उससे कही पहले से मै उन्हे जानती हूं। मै तुम्हे उनके जीवन के कई एक चित्र हू-ब-हू दिखा सकती हूं—मई के एक हफ्ते

मे वह आक्सफोर्ड मे नदी किनारे एक किश्ती मे पडे हुए-और पादरियो और पैगबरो पर छीटे कसते हुए, लदन के कैफे रायल मे अपनी लहराती हुई टाई लगाकर और पाइप पीते हुए इस तरह फिरते हुए, जैसे उन्हे दुनिया मे किसीसे कुछ सरोकार ही नही। पर मुझे उनकी जो आखिरी अदा याद है, वह बबई मे बोरीबदर के स्टेशन पर खद्दरपोश लोगो के एक मजमे के किनारे खडे होकर जवाहर को रुखसत करना था। वहा हर शख्स यही सोच रहा था कि यह कौन है। मुझे भी कुछ अचरज तो हो ही रहा था और गाडी निकल जाने पर वह मेरे साथ ही प्लेटफार्म के बाहर निकले, पर किसी बात से भी उन्होने पता न चलने दिया कि अपनी होनेवाली दुलहन के भाई के साथ उनका इस वक्त क्या सबध है और बहुत जल्द वह सबध कितना गहरा होनेवाला है।

"मै जानती हूं कि स्वरूप और कमला दोनो यही है और तुम्हारे लिए शादी के जोडे तैयार कर रही है और उनकी यह शिकायत है कि शुद्ध खादी ही के जोडे खरीदने है, इसलिए पसद का मौका बहुत कम है, पर तुम्हारी पोशाक तो इस वक्त तुम्हारा सुख और तुम्हारे सुहाने सपने है और तुम अपनी जवानी और नये जीवन के गहनो मे लदी फिर रही हो, फिर तुम्हे और कपडो की फ़िक्र या पर्वाह क्यो हो?

"मेरी प्रार्थना है कि तुम दोनो मिलकर अपनी शादी को एक सुन्दर और मजबूत साथी-जीवन का नमूना बनाओ, जिसकी बुनियाद केवल एक-दूसरे के प्रेम पर ही न हो, बल्कि एक-दूसरे को समझने, विश्वास और रोजाना की ज़िदगी मे ऐसे काम करने पर हो, जिनसे दोनो को दिलचस्पी हो।

"इस दोस्ती और साथी जीवन मे अपने हिस्से के तौर पर तुम अपनी कुछ बडी निजी खूबिया अपने साथ ला रही हो, ऐसी खूबिया, जिनमे तुम्हारे खानदान की मानता और परपराओ ने चार चाद लगा दिये है। ये वही आदर्श और बडे काम है, जिनसे आज सारे देश को प्रेरणा मिल रही है और इसी कारण तुम्हारी शादी सिर्फ व्यक्तिगत मामला नही है। पूरे देश का भी उसमे बहुत कुछ हिस्सा है, क्योकि तुम मोतीलाल नेहरू की बेटी और प्यारे जवाहर की बहन हो।

"पर तुम मेरी भी छोटी बहन हो और इसीलिए नन्ही दुलहन, मै तुम्हे प्यार-भरी दुआए भेजती हू और तुम्हारी इस खुशी मे शरीक हू कि तुम्हे अपना साथी मिल गया, जो तुम्हारी जवानी का दोस्त और सगी है।"

इस खत का और इसी जैसे और बेशुमार खतो का, जो मेरे पास आये और जिनमे मुझे सुख और आनन्द के आशीर्वाद दिये गये थे, मेरे मनपर बडा असर हुआ और मैने आशा की कि अब मै जिस नये जीवन मे कदम रख रही हू, उसमे जरूर कामयाब होऊगी।

शादी के कुछ दिन बाद मैने अपना पुराना घर छोडा और नये घर को रवाना हुई और ऐसा करते समय मुझे काफी तकलीफ भी हुई। मुझे यह बहुत बुरा लग रहा था कि मै अपनी माताजी को, जो अभी बीमार थी, और अपने खानदान के और लोगो को छोडकर चली जाऊगी। मुझे आनेवाले जमाने से और अपने नये जीवन से कुछ डर-सा लगता था, पर हर बार जब मै राजा की तरफ देखती थी, जो मुझपर इस कदर मेहरबान थे, तो मेरी हिम्मत बढ जाती थी और मेरे दिल मे विश्वास पैदा होता था।

जिस शाम को हम अहमदाबाद जानेवाले थे, मेरे तमाम रिश्तेदार, दोस्त और करीब-करीब सारा इलाहाबाद हमसे मिलने और हमे विदा करने इकट्ठा हो गया। मुझे उस समय ऐसी तकलीफ हुई, जैसी पहले कभी न हुई थी। हर एक ने आखो मे आँसू भरकर मुझे गले लगाया, पर मै अपनी हिम्मत बाधे रही। अन्त में जब गाडी चलनेवाली थी और सीटी बज गई, तो मै जवाहर से गले मिली। उन्होंने मेरे कान मे कहा—"बहन, सुखी रहो!" इन तीन छोटे शब्दो ने उन आँसुओ का बंद तोड डाला, जिन्हें मै अबतक रोके हुए थी। माताजी से विदा होते समय मेरा दिल टूट रहा था, पर उनकी खातिर मैने जब्त से काम लिया और अपने मन को रोके रखा। अब रेल धीरे-धीरे चलने लगी। मेरा मन चाहता था कि रेल से कूद पडू और अपने घरवालो मे वापस चली जाऊ। पर अब तो बाजी लग चुकी थी, पलटना कैसा?

जब हम अहमदाबाद के करीब पहुचे, जहा राजा का घर था, तो उन्होने पहली बार मुझसे अपने खानदान के हर एक आदमी के बारे मे बात की। इस बारे मे उन्होने बडी सफाई और निष्पक्षता से काम लिया और मेरे सामने उन सबकी ठीक-ठीक तस्वीर रखकर मुझे बताया कि अब मेरे सामने किस प्रकार का जीवन होगा। उन्होंने उन कठिनाइयो का भी जिक्र किया, जिनका शायद मुझे मुकाबला करना पडे और यह भी कहा कि उन्हे यह बात बडी नापसन्द थी कि मुझे अपना पुराना घर छोडना पड रहा है। उन्होने कहा कि उन्हे कुछ ऐसा मालूम

दे रहा है कि वह एक छोटे से दरख्त को, जो एक खास जमीन मे लगाया गया था और जो वहा जमकर वहार पर आने लगा था, जड से उखाडकर दूसरी जगह ले जा रहे है। अव उसी दरख्त को दूसरी जगह लगाना था और ऐसा करते वक्त उनके मन मे अनेक शकाए पैदा हो रही थी। क्या इस तरह एक जगह से उखाडकर दूसरी जगह लगा देने से इस दरख्त को फायदा पहुचेगा ? वह ज्यादा सुन्दर होगा और ज्यादा फल देगा या नये हवा-पानी मे वह मुर्भा तो न जायगा ? जैसे-जैसे राजा का घर करीव आता जाता था, ऐसे सवाल उनके मन को परेशान कर रहे थे और और कुछ ऐसा मालूम होता था कि उन्हे इस वात पर अफसोस-सा हो रहा है कि उन्होंने मुझसे शादी की।

हम लोग वडे सवेरे अहमदावाद पहुचे और स्टेशन पर राजा के घरवालो और दोस्तो ने हमारा स्वागत किया। अहमदावाद मे कुछ दिन गुजारने के वाद हम वम्वई चले गये और इस तरह हमारा नया जीवन शुरू हुआ।

अपनी जवानी मे राजा ने सरकारी स्कूल छोड दिया था और वे राष्ट्रीय विद्यापीठ मे दाखिल हुए थे। वाद मे इग्लैण्ड मे उन्होने राजनीति मे भाग लिया, जैसाकि अक्सर विद्यार्थी करते है। वापसी पर उन्होनें तय किया कि जवतक वह वम्वई में अपनी वैरिस्टरी खूव जमा न लेंगे, राजनीति मे हिस्सा नही लेंगे। कुछ दिनो तक वह अपना काम करते रहे, पर हमेशा उनके मन मे राजनीति मे भाग लेने की इच्छा होने की वजह से उनके लिए यह मुश्किल हो गया कि दूर से खडे तमाशा देखा करे। धीरे-धीरे वह फिर सियासत के शिकार हो गये। मै यह देख रही थी कि राजा अपने काम से खुश नही है। वह देश के लिए शक्ति-भर काम करना चाहते थे और अगर जरूरत पडे, तो आजादी की खातिर अपनी हर प्यारी चीज कुर्वान करने के लिए तैयार थे।

अवतक किसी खुदगर्जी के खयाल ने राजा के राजनैतिक काम को खराव नही किया है और मुझे विश्वास है कि न कभी आगे ऐसा होगा। वह हमेशा इस वात के इच्छुक रहे है कि पीछे रहकर खामोशी से अपना काम करते रहे, जहा किसी की नजर भी उनपर न पड सके। पिछले कई साल मे वहुत-सी वार उन्हे मायूसियो का सामना करना पडा, फिर भी वह जमकर और विना हिच-किचाहट के इसी तरह काम करते आये है।

राजा उन लोगो में से है, जिनकी उमर चाहे कितनी ही क्यो न हो जाये, वे

हमेशा अपनी बचपन की सी सादगी और कुछ सिद्धान्तो पर अपना अटल विश्वास कायम रख सकते है। वह ईमानदार और साफ दिल है और अपने साथी इन्सानो की अच्छाई पर उन्हे बडा भारी विश्वास है। वह खुद अपने लिए चाल-चलन के बडे कडे नियम बनाकर उनका पालन करते है; पर उन लोगो को दोष नही देते या बुरा नही कहते, जिनके नियम भिन्न है। ऐसे लोगो को, जो दिल से आदर्शवादी होते है, जब मायूसी होती है, तो बहुत दुख होता है।

बहुत-से लोगो को राजा को देखकर यह खयाल होता है कि वह घमडी और खुदपसद है। यह बात ठीक नही है। उनका सबसे बडा दोष—अगर उसे दोष कहा जा सके, तो—यह है कि वह बहुत ज्यादा भावुक है। शुरू उमर मे उन्हे यह आदत पड गई कि वह और लोगो से अलग रहे, क्योकि वह औरो से कुछ भिन्न थे, और इसी कारण उनके बारे मे लोगो को गलतफहमी होने लगी। उनकी इसी अलग रहने की आदत की वजह से लोग उन्हे खुदपसद या घमडी समझने लगते है। जो लोग उन्हे अच्छी तरह जानते है, वह उन्हे पसद किये बिना नही रह सकते, उनकी खूबियो की वजह से नही (क्योकि उनमे कुछ खूबिया भी है), बल्कि उनके उन्ही ऐबो और कमजोरियो की वजह से, जिन्होने उन्हे ऐसा अच्छा इन्सान बनाया है।

: ८ :

यात्री हम हैं और जिस राह जा रहे हैं, उसी राह के तंतु हैं। हम रुकते हैं, ठहरते हैं, परन्तु काल के प्रवाह के अनुसार कोई जितनी देर ठहर सकता है, उतनी ही देर।

—सेसिल डे ल्यूइस

१६२० से हमारा जीवन आये दिन कुछ इस तरह बदलता रहा है कि मुझे कभी यह पता नही चला कि अब इसके बाद क्या होगा। पहले तो मुझे इस तरह की जिदगी मे बडा मजा आता था, पर जब दिन-प्रति-दिन, वर्ष-प्रति-वर्ष अनिश्चित रूप से बीतने लगे, तो कभी-कभी इसकी वजह से तबीयत परेशान होने लगी। इसके मुकाबले मे मेरा शुरू का विवाहित जीवन बहुत ही शात था और मै आशा कर रही थी कि वह इसी तरह जारी रहेगा, कोई बडा भारी तूफान नही आयगा, पर मै ऐसी बात की आशा कर रही थी, जो हासिल नही हो सकती थी।

शुरू के महीनो मे जिदगी कुछ आसान न थी। अहमदाबाद नये कारखानो का और उद्योग-धधो का बडा भारी केन्द्र है और उसमे वे ही सब बाते पैदा हुई हैं, जो पुरानी रस्मो और रीति-रिवाजो से औद्योगिक क्राति की टक्कर होने से पैदा होती हैं। यह एक बिलकुल नई दुनिया थी, जिसका मुझे कुछ भी पता न था। मेरा जिस दुनिया से सम्बन्ध रहा था, उसके मुकाबले मे यहा की हर चीज निराली मालूम होती थी। जिदगी का दृष्टिकोण, रस्म-रिवाज, रहन-सहन के तरीके, लोगो की आदते सभी तो भिन्न थी। मै अपने पति के घर मे जिन लोगो से मिली, उनमे से हरएक मेरे साथ बडी नर्मी और महरबानी से पेश आया, फिर भी कभी-कभी मै वहा अकेलापन-सा महसूस करती थी और खोई हुई-सी रहती थी। अगर राजा के लिए मेरे मन मे इतना गहरा प्रेम न होता, जितना कि है, तो मुझे यह नया जीवन बहुत मुश्किल मालूम होता। मेरी मायूसी की घडियो मे राजा की मोहब्बत और सूझ-बूझ ने तथा उनके खानदानवालो ने, मेरा जो खयाल रखा, उसीने बडे नाजुक मौको पर मुझे सभाल लिया। मुमकिन है, मै बहुत-से मौको पर राजा का साथ न दे सकी होऊ, पर उन्होने हर मौके पर मेरा साथ दिया है।

मेरी शादी हो जाने के कुछ महीने बाद मुझे जवाहर का एक खत मिला, जिसने मुझे अपने कामो को ठीक करने मे वडी मदद दी। उन्होने लिखा था, "शादी के वाद अपनी जिंदगी के नये तजुर्वे मे तुम्हे जीवन को एक दूसरे ही दृष्टिकोण मे देखना होगा और उससे अक्लमदी सीखनी होगी। पर इन्सान को अक्ल अक्सर वहुत-कुछ खोकर और कई साल गुजारकर, जो फिर वापस नही आ सकते, हासिल होती है। जिन लोगो को जेल का तजुर्वा है, वे कम-से-कम सब्र की कीमत तो जानते ही हैं और अगर उन्होने अपने इस अनुभव से फायदा उठाया हो, तो वे यह वात भी सीख जाते हैं कि किसी भी परिस्थिति मे अपने-आपको किस तरह ठीक से खपाया जाय। यह वडी भारी चीज हैं। मुझे आशा है कि तुम वहुत जल्द अपने नये घर मे जम जाओगी। मेरी छोटी वहन, हमेशा सुखी रहो।"

यह वात कुछ अजीव-सी मालूम होगी, मगर सच है कि शादीके वाद के शुरू के कुछ महीनो मे मेरी सवसे वडी दिक्कत खाने की थी। मै खाने-पीने के वारे मे कुछ खास खयाल कभी भी नही रखती थी, पर मुझे गोश्त और मछली वहुत पसद थी, जैसीकि ज्यादातर काश्मीरियो को होती है। अहमदावाद मे मैंने देखा कि घर पर हर शख्स कट्टर शाकाहारी है। खाने मे न गोश्त, न मछली, न अडे। यह भी मुमकिन न था कि किसी होटल या रैस्त्राँ जाकर ये चीजे खाई जाती, क्योकि-ऐसी वाते वहा होती ही न थी। मुझे गुजराती खाना पसंद था, पर सिर्फ शाक-भाजी से मेरा पेट नही भरता था। तीन महीने मैंने शाक-भाजी पर गुजारा किया और सच तो यह है कि मै इस अर्से मे करीव-करीव भूखी ही रहती थी। वाद मे मैंने इस वात की आदत डाली कि गोश्त पर इतना ज्यादा निर्भर न रहना पडे और अव मेरा यह हाल है कि मै खुशी से वडी लवी मुद्दत तक विना गोश्त के काम चला सकती हूं।

राजा का कुटुव अहमदावाद के चोटी के व्यापारी खानदानो मे से है। उनके पिताजी का वरसों पहले देहात होगया था, जव वच्चे वहुत छोटे थे। उस वक्त राजा की माताजी ने कारोवार अपने हाथ मे लिया और वहुत कठिनाइयो के होते हुए भी उसे कामयावी से चलाती रही। वरसो तक वह काम देखती रही, यानी उस समय तक, जवतक कि उनके वेटो ने वडे होकर काम को खुद न सभाल लिया। उन कठिनाई के दिनो मे उन्होने अपने वच्चो की तरफ से गफलत नही वरती, वल्कि वडे प्रेम और चाव से उनकी देख-भाल करती रही और उनकी छोटी-छोटी जरूरते

भी पूरी करती रही। राजा के घरवाले भी कुछ अलग रहनेवाले और खामोश है, जैसे सभी व्यापारी होते है और वे मन के भाव दूसरो पर ज़ाहिर नही होने देते। मै इस चीज को समझ न सकी और अक्सर मैने यह भी सोचा कि इस तरह अलग रहने का मतलब उनमे प्रेम का अभाव है।

राजा का सयुक्त परिवार है, पर उनके घरवाले किसीके रहन-सहन के तरीके मे शायद ही कभी दखल देते है। हर एक को आजादी है कि जिस तरह चाहे, रहे। पर उनका खानदान बडा ही सगठित है और एक-दूसरे से उनके सबध बहुत गहरे है, केवल एक साथ तिजारत की वजह से नही, बल्कि आपस के गहरे प्रेम की वजह से। अहमदाबाद का व्यापारी-वर्ग तंग-नजर, पुराने विचारो का और अपने ही तौर-तरीको को अलग समझनेवाला है और अक्सर वह ऐसी बाते चाहता है, जिनसे व्यक्ति-मात्र के अपने जीवन मे गैर-जरूरी खलल पडता है और उसे परेशानी भी होती है, खासकर ऐसी हालत मे, जबकि वह व्यक्ति सयुक्त परिवार का एक सदस्य हो।

मै मानती हू कि पुराने जमाने के सयुक्त परिवार निस्सदेह उपयोगी सिद्ध होते थे और उस जमाने की सामाजिक व्यवस्था के लिए उपयुक्त थे, पर वह ढाचा अब तेजी से गिर रहा है और अपने पुराने रूप मे कायम नही रह सकता। ऐसा मालूम होता है कि इस बारे मे हिंदुस्तान-भर मे बराबर एक तरह की रस्साकशी चल रही है। हर व्यक्ति अपने मनमाने तरीके से रहना चाहता है। दूसरी तरफ सयुक्त परिवार की माग है कि उसमे जितने लोग शामिल है, सब एक ही प्रकार का जीवन बिताये। कुदरती-तौर पर इन दोनो मे खानदान का असर दिन-पर-दिन कम होता गया। यह चीज सिर्फ व्यक्ति के जीवन ही मे नही, बल्कि राष्ट्र के जीवन मे भी रुकावट बनने लगी और उन शक्तियो का साथ न दे सकी, जो इस वक्त दुनिया को हिला रही है। मै मानती हू कि सयुक्त परिवार को धीरे-धीरे गायब होना पडेगा, पर हिंदुस्तान बहुत बडा देश है और उसके अतीत मे उसकी जडे मजबूती से गाडी हुई है। इसीलिए इस काम मे कुछ वक्त जरूर लगेगा।

पर इकाई के रूप मे परिवार का, खासकर छोटे परिवार का, बडा महत्त्व है। आनन्द-भवन मे मेरे माता-पिता, जवाहर और उनके बीवी-बच्चे, मेरी बहन और मै एक साथ रहते थे और हम सबका मिलकर एक छोटा परिवार था, पर हमारे यहा कोई ऐसा खास कायदा न था, जिससे हम एक-दूसरे के साथ बधे हुए हो। हम

सब एक ही घर मे थे, पर सब अपने-अपने व्यक्तिगत तरीके से रहते थे और शायद ही कभी किसीकी एक-दूसरे से टक्कर होती थी। हम सबको एक साथ जकडे रहने के लिए मुहब्बत के सिवा कोई और बधन न था और प्रेम की डोर सचमुच सब बधनो से ज्यादा मजबूत होती है। आर्थिक बधन, जो सयुक्त परिवार में एक को दूसरे मे बाधे रखते है, जल्दी या देर से बधन ही बन जाते है और व्यक्ति को दबाकर उसकी प्रगति और विकास को रोक देते है।

मेरे ऐसे विचार कुदरती-तौर पर राजा के खानदानवालो के विचारो से और कभी-कभी खुद राजा के विचारो से टकराये। हमे पता चला कि बहुत-सी ऐसी बाते है, जिन पर हमारे विचार एक-से नही है और कभी-कभी तो हमारे विचार एक-दूसरे से टकराते भी है। ऐसे मौको पर और बाद के सब बरसो मे राजा ने जिस धीरज और समझदारी से काम लिया, वह बडी महान् और अनुपम चीज थी और इसीने मुझे शुरू के कुछ महीनो मे, जो हमेशा बडे मुश्किल दिन होते है, बडी सहायता दी।

अपनी शादी के बाद कुछ महीने हम राजा के घरवालो के साथ रहे। बाद मे हम अलग मकान मे रहने लगे। यह मकान छोटा था, मगर बिलकुल नये तर्ज का और मुझे बहुत पसद था। घर चलाने का मुझे कम ही तजुर्बा था और कभी-कभी तो मुझे इस काम मे बडी परेशानी और काफी मुश्किल भी हो जाती थी। मगर फिर भी, खुद अपना घर चलाने मे एक खास तरह का लुत्फ आता था। अपनी जिदगी का बडा हिस्सा मैंने एक बहुत बडे मकान मे गुजारा था और वहा हर बात का बहुत ही शानदार इतजाम होता था, इसलिए एक छोटे-से मकान मे सादगी से रहना मेरे लिए एक बिलकुल नया तजुर्बा था।

राजा अपने काम पर चले जाते थे और मैं दिन-भर अकेलापन महसूस करती थी। मैं बबई मे कुछ ज्यादा लोगो को नही जानती थी और राजा के दोस्तो के सिवा मैं जिन लोगो को जानती थी, वे मेरे पिताजी के पुराने दोस्त और उनके कुटुबवाले थे। मैं बहुत जल्द दोस्ती कर लेती हू। इसलिए ज्यादा दिन नही गुजरे थे कि बहुत-से लोगो से मेरी जान-पहचान और काफी लोगो से दोस्ती भी हो गई। जीवन मे सुख और सतोष था।

सन् १९३४ की सर्दियो मे जवाहर फिर एक बार जेल मे थे। वह तो हर साल का ज्यादा हिस्सा जेल मे ही बिताते है। हम लोग उनसे कई महीनो से मिले नही

थे। इसलिए जब कमला ने खत लिखकर मुझसे यह पूछा कि क्या राजा और मैं जवाहर से मिलना चाहते हैं, तो हमने इस विचार को बहुत पसन्द किया। मुलाकात तय हुई और हमने तय किया कि हम कमला से मिलें और उन्हीके साथ देहरादून जायें। मुलाकात की तारीख को हम जेल के दरवाजे पर पहुचे और आध घटे बाहर इन्तजार करने के बाद जवाहर की कोठरी मे ले जाये गये। मुलाकात का कायदा यह है कि कैदी से जेल के दफ्तर मे मिला जाता है, लेकिन जवाहर की कोठरी बाहर के ब्लाक मे थी, इसलिए हमे अन्दर जाने की इजाजत मिली। राजा इससे पहले कभी जेल के करीब भी नही गये थे और यह उनकी पहली ही मुलाकात थी। मैंने जो और जेल देखी है, उनके मुकाबले मे देहरादून जेल आधी भी डरावनी नहीं है, पर एक ऐसे शख्स के लिए, जो कभी किसी हिन्दुस्तानी जेलखाने के करीब भी न गया हो, देहरादून जेल भी काफी भयानक जगह थी। हम लोग जवाहर की कोठरी मे बैठे, जिसमे सामान के नाम पर एक लोहे का पलग, एक मेज और एक कुर्सी थी। कुछ किताबे इधर-उधर पडी थी और एक कोने मे एक चरखा रखा हुआ था। यह बडा ही उदासी से भरा दिन था, सर्द हवा चल रही थी और जवाहर की कोठरी सुनसान और फीकी दिखाई देती थी। जवाहर ने, जैसी उनकी आदत है, हँसते हुए हमारा स्वागत किया। फिर भी वह दुबले और कुछ बीमार-से दिखाई दे रहे थे। कमला को और मुझे इन बातो की आदत थी और हम अपने अजीजो को इससे पहले भी ऐसी हालत मे देख चुके थे। पर राजा के लिए यह चीज नई थी और वह यह सारा दृश्य देखकर कुछ हैरान-से रह गये। पूरी मुलाकात मे वह करीब-करीब चुप ही रहे, कमला ने और मैंने ही सारी बाते की। जब हम घर वापस लौटे, तो वह किसीसे एक शब्द भी कहे बिना सीधे अपने कमरे मे चले गये। कुछ देर बाद भी जब वह वापस नही आये, तो मैं यह देखने गई कि क्या बात है। मैंने देखा कि वह अपने बिस्तरे पर पडे कुछ सोच रहे है और उनके चेहरे पर अजीब परेशानी है। इसके बाद राजा कई बार जवाहर से जेल मे मुलाकात कर चुके हैं, पर अब भी जब कभी वह जेलतक हो आते है, तो उनपर एक तरह की उदासी छा जाती है। अपने अजीजो से साल-ब-साल जेल की सलाखो के पीछे मिलते रहना कोई सुख देनेवाली बात नही है। इसका लाजमी नतीजा यह होता है कि आदमी गमगीन हो जाता है और कभी-कभी उन लोगो के साथ, जो हमसे इस तरह दूर हो चुके होते है, कुछ वक्त गुजार देने की भूख बढती रहती है। पर यह बात होते

हुए भी इसके कारण हम अपने-आपको बेवस या दुखी नही महसूस करते, वल्कि इस बात का निश्चय कर लेते है कि देश के लिए लडाई जोर से जारी रखेगे। आज राजा भी अपने और हजारो साथियो समेत जेल मे है और हमने एक-दूसरे को साल-भर से देखा तक नही है। कभी-कभी जब मुझे अकेलापन महसूस होता है और राजा की याद सताती है और उन्हे मेरे खतो से इसका पता चल जाता है, तो वह मुझे छेडते है और मुझे ऐसी कमजोरी दिखाने पर शरमाना पडता है।

कुछ साल तक राजा राजनीति मे सक्रिय भाग लेने से दूर रहे, पर हालात कुछ ऐसी तेज़ी से और इस तरह बदलते गये कि उनके लिए देश-सेवा से दूर रहना मुश्किल होता गया और आखिर वह धीरे-धीरे उसमे पड ही गये। वहुत-से लोग यह खयाल करते है कि इस बारे मे मैने उनपर असर डाला और उनसे वकालत छुडाई; पर उनका यह खयाल विलकुल गलत है। मै राजनीति का अर्थ खूब जानती थी—अनिश्चितता, तबदीलिया, जेल और लम्बी मुद्दत से लिए जुदाइया। मै तेरह साल तक यह सब-कुछ देख चुकी थी और नही चाहती थी कि मुझे अब जो नया सुख और शांति मिली थी, उसे खो दू। मै राजनीति मे सक्रिय भाग लेना नही चाहती थी। मेरे लडके वहुत छोटे थे। मैने देखा था कि जवाहर के और स्वरूप के बच्चो को बचपन ही से घर का जीवन और घर की शाति न मिलने की वजह से कैसी तकलीफे हुई थी। फिर भी मेरे आस-पास जो कुछ हो रहा था, उसका असर मै कबूल किये विना नही रह सकती थी। इसलिए मुझसे जो कुछ वन सकता था, मै करती रही, पर राजा का दिल चाहता था कि पूरी तरह देश की लडाई मे कूद पडे और मैने इस वात को मुनासिब न समझा कि उन्हे इससे रोकू। थोडे-से सुख के वाद मैने फिर एक बार अपने-आपको गिरफ्तारियो, जेलखानो और जुदाइयो के लिए तैयार किया।

हम वम्वई मे रहते है और मुझे यह विशाल नगरी वहुत पसन्द है। इलाहावाद भी मुझे वहुत अच्छा लगता था, पर केवल इसलिए कि वह मेरा घर था। बडा शहर मुझे शायद इसलिए प्रिय है कि मैने अपनी आधी जिदगी एक छोटे शहर मे गुजारी है। वम्वई मुझे पसन्द आया, क्योकि यहां मुझे ऐसे दोस्त मिले, जिन्होने वडी हार्दिकतापूर्वक मेरा स्वागत किया। इस शहर के बारे मे कोई ऐसी वात जरूर है, जो इन्सान की दिलचस्पी उसमे कायम रखती है। समुद्र मेरे लिए एक नई-सी चीज थी और उसने मेरा दिल लुभा लिया। समुद्र के वारे मे जो कुछ मै

जानती थी, वह सिर्फ इतना ही था कि मैने यूरोप जाते हुए समुद्र देखा था। मै कभी भी लम्बी मुद्दत के लिए समुद्र के करीब नही रही थी। पर बम्बई मे मैने जी भर-कर समुद्र देखा और लहरो को एक-दूसरे से टकराते हुए या गुस्से से किनारे के पत्थरो पर सिर पटकते हुए देखकर मै कभी भी उकताती न थी।

मेरे लिए दिन काटना मुश्किल हो जाता था। इसलिए मैने समाज-सेवा का कुछ काम शुरू किया और औरतो की कई सस्थाओ मे शरीक हो गई। हमने गरीबो के गदे महल्लो मे जाकर काम किया। मुझे यह काम दिलचस्प मालूम होता था, पर यह देखकर मेरा मन बैठ जाता था कि यहा इतनी ज्यादा गरीबी और विपदा है और फिर भी हम उसे दूर करने के लिए कुछ खास काम नही कर सकते।

जनवरी, १९३५ मे माताजी हमसे मिलने आई। जवाहर जेल मे थे और कमला का कलकत्ते मे इलाज हो रहा था। बापू बहुत दिनो से माताजी से कह रहे थे कि वह कुछ दिनो के लिए वर्धा आकर रहे और चूकि वह इलाहाबाद मे अकेली थी, उन्होने वर्धा जाने का फैसला किया। वर्धा से वह बम्बई आई। मेरे नये घर मे वह पहली बार आई थी, और मुझे उनके आने से बडी खुशी हुई। उनका इरादा महीना भर रहने का था, मगर बदनसीबी से तीन हफ्ते बाद उनको लकवा मार गया और कोई दो महीने वह बहुत सख्त बीमार रही। मेरी बहन और मेरी मौसी बम्बई आई और मैने कई दिन और रातें बडी फिक्र मे गुजारी, जबकि माताजी जिदगी और मौत के बीच झूल रही थी।

उसी जमाने मे, जब माताजी की तबीयत ठीक हो रही थी, हमारा लडका हर्ष, फरवरी १९३५ को पैदा हुआ। माताजी को इससे बडी खुशी हुई। हर्ष उनका पहला नाती था, क्योकि मेरी बहन और भाई दोनो के लडकिया ही थी।

धीरे-धीरे माताजी की तबियत ठीक होती गई, पर यह असल मे उनके अंत की शुरुआत थी। वह फिर कभी पहले की तरह ठीक नही हुई।

अप्रैल, १९३५ मे कमला की तबीयत जो पहले से खराब थी और ज्यादा खराब हो गई। डाक्टरो ने सलाह दी कि जैसे ही वह इस काबिल हो कि सफर कर सके, तो उन्हे स्विजरलैंड भेज दिया जाय। उस वक्त वह भुवाली के एक स्वास्थ्य-गृह मे थी। भुवाली सयुक्त प्रान्त का एक छोटा-सा मुकाम है। राजा ने और मैने तय किया कि हम उन्हे देखने जाय और उनके बाहर जाने से पहले कुछ दिन उनके

साथ विताये। इसलिए हम अपने दो महीने के नन्हे वच्चे को लेकर भुवाली पहुचे। उनके जाने से पहले हमने एक महीना उनके साथ विताया। हमे उस वक्त यह खयाल भी न आया कि हम उन्हे फिर कभी न देख सकेगे। इसके कोई साल-भर वाद कमला की मृत्यु हो गई।

कमला की मृत्यु की खबर आने के चार दिन वाद हमारा लडका अजीत पैदा हुआ। इस वच्चे के पैदा होने की हमे वडी खुशी होती, पर कमला की मौत ने हमारी जिन्दगी पर गम का वादल विछा दिया था और हमारे दिल इस दुख से इतने भारी हो गये थे, कि हम अपने वच्चे के जन्म की खुशी नही मना सकते थे। फिर भी मेरा खयाल है कि इस वच्चे की उस वक्त मौजूदगी ने हमारी वडी मदद की और हमारे गम और दुख का वोझ वहुत-कुछ हलका कर दिया।

: ६ :

सुन्दरतम वस्तुओ का अत भी शीघ्र ही हो जाता है। उनकी सुरभि उनके बाद भी कायम रहती है; लेकिन उस व्यक्ति को, जो गुलाब के पुष्प को ही प्रेम करता था, उसकी सुगंध कडवी प्रतीत होती है।

—फ्रासिस टॉमसन

मैने पहली बार कमला को एक दावत मे देखा था, जो पिताजी ने आनद-भवन मे दी थी। उस वक्त मै बहुत ही छोटी थी और मुझे दावत मे शरीक होने की इजाजत नही मिली थी, पर मै बरामदे मे खडी रहकर तमाशा देख सकती थी और मैने देखा भी। शायद मेरी किसी मौसी ने मुझे कमला को दिखाया और कहा, "उस लडकी को देखो, क्या वह तुम्हे पसद आयगी? वही तुम्हारी भाभी होगी।" मैने उस तरफ देखा, जहा मेरी मौसी दिखा रही थी, तो मैने एक लबी, पतली और बडी ही खूबसूरत लडकी को कुछ और लोगो के साथ एक मेज पर बैठे देखा। मै यह भी नही जानती थी कि भाभी का क्या मतलब होता है, पर मै इतना समझ गई कि वह हमारे यहा रहने आ रही है। मैने सोचा कि चलो, अच्छा हुआ एक और बहन आ रही है, पर अच्छा होता अगर वह छोटी होती और उम्र मे मेरे बराबर होती। मेरे मन से कमला की वह पहली तस्वीर और सत्रह साल की उम्र मे उसकी वह भरी जवानी की ताजगी मेरे मन से कभी दूर नही हुई।

कुछ महीने बाद दिल्ली मे जवाहर की शादी हुई और कमला हमारे साथ रहने आई। मुझे अच्छी तरह याद है कि मेरे माता-पिता अपनी खूबसूरत बहू को लोगो को कितने फख्र के साथ दिखाया करते थे। वह केवल खूबसूरत ही नही थी, बल्कि खूब तदुरुस्त भी थी, उन्हे देखकर कोई यह नही कह सकता था कि वह अपनी जिंदगी का ज्यादा हिस्सा बीमारी मे और बिस्तरे मे गुजारेगी। कमला और जवाहर के लिए शादी की जिन्दगी शुरू मे तो खूब अच्छी रही। उनका भविष्य खूब रोशन नजर आ रहा था और कही कोई काला बादल दिखाई नही देता था। खुशी और सुख के कुछ साल इसी तरह गुजरे। फिर अचानक कुछ तबदीलिया

आरभ हुई। जवाहर राजनैतिक कामो मे पड़ गये और पिताजी भी। और कई वडे परिवर्तन हो गये, क्योकि एक दुबले-पतले शख्स ने, जिसे देखकर ऐसा मालूम होता था कि इसे पेट-भर खाना भी नही मिलता, हमारे और हमारी तरह और भी वहुत से लोगो की जिदगी मे वडा भारी फर्क पैदा कर दिया। सच तो यह है कि उसने हमारी जिदगी का रास्ता ही बदल दिया। यह छोटा-सा आदमी गाधी था। हमारे खानदान के और लोगो की तरह कमला ने भी सब ऐशो-आराम छोड दिया और गाधीजी की पक्की चेली बन गई। गाधीजी को उनसे वडी मुहव्वत थी और कमला को भी गाधीजी के लिए और उन्हे जो काम पसद था उसके लिए वटा प्रेम था।

कमला को अपनी सारी उमर मे भी मालूम न हुआ कि तकलीफ या गम क्या चीज होती है। शादी से पहले और शादी के वाद भी उन्होने ऐसे सुख और आराम से जिदगी विताई थी कि कभी यह सोचने की जरूरत भी न पडी कि कल क्या होगा। अचानक यह सब-कुछ बदल गया और उनके जीवन मे अनिश्चितता, जुदाई, सदमे और जिस्मानी तकलीफो ने घर कर लिया। वडी ही वहादुरी से कमला ने इन सबका हँसते हुए मुकावला किया। मैंने उनके मुह से कभी भी शिकायत का एक शब्द नही सुना, न अपनी तकदीर को उन्होने कभी कोसा, जैसाकि हममे से ज्यादातर लोग उस वक्त करते है, जव कोई बात उनकी मर्जी के खिलाफ होती है। जब जवाहर ने अपनी जिदगी देश को सौप दी, तो पल-भर के लिए भी झिझके बिना कमला उनके साथ खडी हो गई। अगर हिंदुस्तान मे कोई ऐसा सिपाही था, जिसके मन मे अपना कुछ भी नही, सिर्फ देश ही का खयाल था, जिसकी शक्ति मे कभी कमी नही आई और जिसने ऐसी हिम्मत दिखाई, जैसी मुश्किल से कभी दिखाई देती है, तो वह सिपाही कमला थी। कमला के वारे मे लोगो को वहुत कम वाते मालूम है। मेरी एक दोस्त ने उनके बारे मे लिखा था, "उनका जीवन तेल से जलनेवाले चिराग की लौ की तरह था। वह डगमगाया, फिर रोशनी तेज हुई और उसकी तेजी वढती ही गई, येहातक कि जव चिराग का तेल विलकुल सूख गया, तो उसकी लौ कापती हुई बुझ गई।" कहा जाता है कि जो लोग भगवान् के प्यारे होते है, वे जवानी ही मे मर जाते है और यह वात सच भी मालूम होती है। यह नामुमकिन था कि किसीको भी कमला से प्रेम न हो और उसकी वहादुरी की कोई तारीफ न करे। वह अपने पति और ससुर के साथ रहती थी,

जिनका राजनैतिक जीवन मे वडा भारी और ऊचा स्थान था। ऐसे व्यक्तियो के साथ रहकर इस मैदान मे अपना प्रभाव दिखाना मुश्किल था। फिर भी कमला ने अपने लिए वहा भी एक जगह पैदा कर ली और अगर मौत का जालिम हाथ उन्हे इतनी जल्द छीन न लेता, तो वह और ज्यादा मशहूर होती। वह देखने मे कमजोर थी, पर उनका चरित्र दृढ और सच्चा था। उन लोगो के सिवा, जो उन्हे अच्छी तरह जानते थे, दूसरो को बहुत कम पता था कि उनकी कोमल आखो और खामोशी-पसद तबियत के पीछे कितनी जबरदस्त शक्ति थी। उनमे वडी खूबिया थी और बहुत-से दोष भी। उनकी तबीयत मे लडकपन बहुत था और ऐसा मालूम होता था कि उम्र वडी होने पर भी वह अभी बच्ची ही है। कभी-कभी वह अपनी सेहत की तरफ से वडी ही बेपरवाही बरतती थी और चाहे उन्हे कितनी ही नसीहत क्यो न दी जाय, वह अपनी तदुरुस्ती का ज्यादा खयाल रखती ही न थी। बार-बार की बीमारियो मे, जिन्होने अत मे उनकी जान ही ले ली, कभी ऐसा मालूम नही हुआ कि वह बूढी हो रही है। आखिर तक उनमे सुन्दर लडकपन दिखाई देता था और उनका शरीर वैसा ही रहा, जैसा उनकी शादी के समय था। बीमारी ने उनके शरीर को अदर से बिलकुल खोखला कर दिया था, पर बाहर से उनमे कोई फर्क दिखाई नही देता था और मै जितने साल उन्हे देखती रही वह मुझे हमेशा एक-सी दिखाई दी।

कमला की शादी के बाद कई साल तक मै उनके ज्यादा करीब न आ सकी। जब तक वह नई दुलहन थी उनकी बराबर हर जगह दावतें होती रहती थी और बाद मे वह हमारे घर की मेहमानदारी मे लगी रहती थी, क्योकि पिताजी के यहा मेहमानो का सिलसिला बराबर बना रहता था और माताजी अपनी बीमारी के कारण बिस्तरे पर पड़ी रहती थीं। इसलिए मेजबानी के सारे काम कमला को देखने पडते थे। जब सन् १६२६ में हम एक साथ यूरोप मे थे, तब मैं कमला को अच्छी तरह पहचान पाई और हमारी दोस्ती बढी। जिंदगी के ऐसे बहुत-से सवालो पर, जिनका हमसे सबध था, हमारी बडी, लबी और गर्मागर्म बहसे होती थी, खासकर औरतो के हको के बारे में हम जो कुछ पढते थे या सुनते थे, उसपर भी हममे बहस होती थी, पर ऐसी बहसें हमेशा बडी खूबसूरती से खत्म होती थी। यूरोप मे ज्यादा समय वह बिस्तर पर ही पडी रहती थी। जब वह इस काबिल हुई कि सफर कर सकें, तो हमने जो कुछ महीने बिताये, वे बडे ही अच्छे थे। उनकी

हमेशा यह इच्छा रहती थी कि नई-नई चीजे देखे और नई-नई बाते सीखे। सैर-सपाटे मे उन्हे बडा मजा आता था और चाहे वह खुद कितनी ही थकी हुई क्यो न हो, वह अपनी तरफ से कोई ऐसी बात न होने देती थी, जिससे दूसरो का मजा किरकिरा हो। चाहे कितना ही सबल कारण क्यो न हो, मगर वह कभी किसी बारे मे शिकायत नही करती थी। यूरोप से वापसी पर हम दोनो एक-दूसरे के और भी करीब आ गये, इसलिए कि हम दोनो ने राजनैतिक आदोलनो मे हिस्सा लिया और साथ मिलकर काम किया। यहा पर फिर एक बार मुझे कमला की काम करने की शक्ति देखकर हैरत हो गई। मेरी सेहत उनसे कही अच्छी थी, पर मैं भी कई बार थककर सुस्ती से घर बैठ जाती थी, पर उन्होने कभी ऐसा नही किया। जाडो की ठड मे सवेरे पाच बजे वह उठ जाया करती थी, क्योकि स्वय-सेविकाओ की कवायद उसी वक्त हुआ करती थी और सुबह आठ बजे से हमारा विलायती कपडे की दूकानो पर धरना देने का काम शुरू होता था। सर्दी के पूरे मौसम मे कमला नित्य नियम से यह काम करती रही और दिन-भर उनका यही हाल रहता था। फिर गर्मिया शुरू हुई और तेज धूप पडने लगी, तब भी उन्होने अपना काम जारी रखा। हममे से और भी बहुत-सो ने इसी तरह काम किया था, पर हम अक्सर काम की शिकायत करती थी और थककर मायूस भी हो जाती थी। पर कमला का हाल ही कुछ और था। उनकी श्रद्धा और शक्ति कम होनेवाली न थी, इस तरह अपने-आपको बहुत ज्यादा थकाकर वह अपने हाथो अपना अत करीब लाई। यद्यपि उनकी आत्मा बलवती थी, तथापि उनका दुर्बल शरीर इस बोझ को सह नही सकता था और अत मे मृत्यु की विजय हुई।

कमला बडी ही खामोश तबीयत की थी और दूसरे के कामो मे कभी दखल नही देती थी, पर जीवन के बारे मे उनके निश्चित विचार थे, और जब किसी काम का फैसला कर लेती थी, तो फिर बीमारी भी उनके फैसले को नही हिला सकती थी। यह तो कुदरती बात है कि जवाहर के कारण किसी हद तक उनका व्यक्तित्व ढक गया था, पर यह बात केवल एक हद तक ही थी, पूरी तरह नही, क्योकि खुद कमला का अपना व्यक्तित्व भी था।

कमला औरतो के हको की बडी हिमायती थी और अपने दोस्तो और साथियो मे औरतो के हको के लिए वह हमेशा लडती रहती थी। मर्दो से उनकी खटपट हो जाती थी, क्योकि उन्हे यह शिकायत थी कि उनकी बीविया कमलाजी के कहने मे

आगई है और ऐसी बाते करने लगी है, जो खुद उन्हे पसद नही है। उनकी तबीयत बडी ही आजाद थी और कोई भी तकलीफ या बीमारी उन्हे दबा नही सकती थी। उन्हे इस बात पर बडा फख्र था कि देश की आजादी के जग मे वह भी कुछ हिस्सा ले सकी है, और इस बात से वह सुखी थी कि लाखो को जवाहर से इतना प्रेम है। जवाहर का यश उन्हे कभी न खटका और न उनके प्रशसको से कभी कमला को ईर्ष्या ही हुई।

सन् १६३४ के बाद कमला की सेहत तेजी से गिरती गई। उन्हे भुवाली के स्वास्थ्य-गृह मे भेजा गया। हमने कई दिन चिंता मे बिताये और यह प्रार्थना करते रहे कि उनकी तबीयत ठीक हो, पर उनकी हालत दिन-पर-दिन खराब ही होती गई। जवाहर फिर एक बार जेल मे थे। अबकी बार वह अलमोडे मे थे और उन्हे कभी-कभी कमला से मिलने की इजाजत थी। कमला को जवाहर की इन मुलाकातो का कितना इतजार रहा होगा और जो वक्त उन्होने साथ गुजारा, वह कितनी तेजी से गुजारा होगा! आखिर डाक्टरो ने यह सलाह दी कि कमला स्विजरलैंड चली जाय। राजा और मैं उनकी रवानगी से पहले कुछ दिन उनके साथ बिताने के लिए भुवाली पहुचे। मेरे साथ मेरा लडका था, जो मुश्किल से दो महीने का होगा और उसे देखकर कमला को माताजी से भी कही ज्यादा खुशी हुई थी। उन्होने मुझे धमकाया कि देखो, अगर तुमने बच्चे की ठीक से देख-भाल न की, तो यूरोप से वापस आकर मैं उसे तुमसे छीन लूगी और खुद ही उसे पालूगी।

कमला की रवानगी के दिन जवाहर को यह इजाजत थी कि वह अलमोडा जेल से भुवाली आकर उन्हे रुखसत कर सकते है। मै नही कह सकती कि उस दुखभरे दिन जवाहर के मन मे क्या विचार पैदा हो रहे थे। उनका चेहरा देखकर देखनेवाले का दिल टूटा जाता था। बडी हिम्मत से काम लेकर वह अपना दुख दबाने की कोशिश कर रहे थे, पर वह सारा दुख उनकी आखो मे सिमट आया था। जब जुदाई की घडी करीब आई, तो कमला और जवाहर हँसकर एक-दूसरे से रुखसत हुए। फिर कमला की गाडी उन्हे पहाड से नीचे उस रेल पर ले गई, जिससे वह बम्बई जानेवाली थी। इधर जवाहर माताजी के और मेरे गले लगे और अपनी आखो से आसू बहाये बिना उस गाडी पर बैठ गये, जो उन्हे अलमोडा जेल वापस ले जाने के लिए खडी थी। जब वह पीठ फेरकर चलने लगे, तो उनकी चाल मे पहले

जैसी तेजी नज़र नही आई। अब वह बहुत थके हुए और कुछ घटे पहले-जैसे न थे, उससे कही ज्यादा बूढे दिखाई दे रहे थे। कुछ महीने बाद जवाहर छोड दिये गए और वह हवाई जहाज मे यूरोप गये; क्योकि कमला की तबीयत बहुत खराब थी। २८ फरवरी, १९३६ को स्विजरलैड मे लोजान के पास कमला का देहात होगया। उस समय जवाहर और इदिरा उनके पास थे।

: १० :

कहीं धूप कहीं छाया, कही जीत कही हार,
और बीते बरसो का बढता हुआ बोझ !

—ईडिन फिलपॉट्स

कमला की मृत्यु के बाद मार्च, १९३६ मे जवाहर हिदुस्तान वापस लौटे। इंदिरा को वह स्विजरलैंड के एक स्कूल मे छोडते आये। मै उनसे मिलने के लिए वेचैन थी, पर कुछ दिन न जा सकी। जब मेरा बच्चा महीने भर का हुआ, तो मै जवाहर से मिलने गई। यह बडी ही तकलीफदेह सफर थी और मुझे इस खयाल ही से भय होता था कि कमला की दुखद मृत्यु के बाद मे भाई से किस तरह मिलूगी। कमला को मै खुद बहुत चाहती थी, इसलिए मै समझ सकती थी कि जवाहर को उनकी मृत्यु से कितना सदमा हुआ होगा।

जब हम आनद-भवन पहुचे, तो जवाहर हमसे मिलने बाहर आये। उनका चेहरा, जो कुछ महीने पहले इतना यौवनपूर्ण था, अब सूख चुका था और उसपर दुख की झुरिया दीख पडती थी, वह पहले से कही ज्यादा उम्र के नजर आते थे और बहुत ही थके-मादे और कमजोर मालूम होते थे। उन्होने अपने दिल की तडपन छुपाने की बहुत कोशिश की। फिर भी उनकी भावपूर्ण आखो मे कुछ ऐसा दुख समाया हुआ था, जिसे देखकर उनके साथ रहनेवालो को हमेशा तकलीफ होती थी। हम दो हफ्ते इलाहाबाद मे रहे और फिर अपने के कुटुब और लोगो के साथ लखनऊ पहुचे, जहा काग्रेस का जलसा हो रहा था।

जवाहर उस साल काग्रेस के सभापति चुने गये थे। हमेशा की तरह अब भी सियासी कामो मे उनके वक्त का बडा हिस्सा बीत जाता था और अपने व्यक्तिगत नुकसान और दुख को उन्होने परे हटा रखा था। हालाकि वह दुख और सूनापन महसूस कर रहे थे, फिर भी उन्होने अपने-आपको बेशुमार सम्मेलनो मे और दूसरे कामो के झमेलो मे डाल रखा था। दूसरे साल जब काग्रेस-अधिवेशन फैजपुर मे हुआ तो वह दुबारा काग्रेस के सदर चुने गये।

फैजपुर-काग्रेस के बाद देश-भर मे सूबो की विधान-सभाओ के लिए आम चुनाव

हो रहे थे । जवाहर ने काग्रेसी उम्मेदवारो के लिए एक तूफानी दौरा शुरू किया। उन्होने देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक सफर किया और शहरो और देहातो मे सैकडो सभाओ मे भाषण दिये और इस प्रकार फिर एक बार लोगो मे—जो कि पिछले आदोलन से अभी-अभी बाहर हुए थे, एक नया जोश पैदा कर दिया। सात प्रातो मे काग्रेस की बडी जीत हुई और बहुत बहस के बाद वाइसराय से एक समझौते के परिणाम-स्वरूप इन प्रातो मे काग्रेस ने अपनी वजारते बनाई। करीब-करीब सभी काग्रेसी वजीर ऐसे थे, जो कई-कई साल जेल काट चुके थे। मेरी बहन स्वरूप भी वजीर बनी—हिंदुस्तान की पहली और एक ही औरत वजीर!

बचपन ही से स्वरूप बडी चतुर थी और वजीर बनने के लिए हर तरह से लायक थी। वह कैसी भी बात पर शायद ही घबराती हो और हर तरह के काम शाति और बिना किसी भी परेशानी के निभाती है। वह आकर्षक, सयत और सुदर है और उन्हे लोगो का मन मोह लेने मे कोई दिक्कत नही होती है। वजीर की हैसियत से वह बहुत ही कामयाब रही। यह बडा भारी काम था, जो उन्होने अपने जिम्मे लिया था, क्योकि इस तरह के काम की उन्हे कभी शिक्षा नही मिली थी, पर यह काम उन्होने बडी ही खूबी से किया और बहुत लोकप्रियता प्राप्त की। जब स्वरूप ने राजनैतिक कामो मे हिस्सा लेना शुरू किया, तो भाषण देने की उनकी योग्यता देखकर हम सब हैरान रह गये। ऐसा मालूम होता था कि यह कला उन्हे जन्म से ही प्राप्त है और चाहे कितने ही बडे जलसे मे उन्हे बोलना क्यो न हो, वह जरा भी न घबराती थी। वह हिंदुस्तानी और अग्रेजी दोनो भाषाओ मे बडी सफाई और आसानी से बोलती है।

कम उम्र मे ही स्वरूप के बाल सफ़ेद होने लगे—यह हमारे खानदान की कमजोरी है—और उनके बाल बडी तेजी से सफेद होते गये। आजकल उनके सारे बाल चादी की तरह सफेद है, पर इससे उनकी सुन्दरता और भी बढ गई है।

वह बड़ी अच्छी मा है, और घर-गृहस्थी का काम खूब जानती है। बावजूद इसके कि राजनीति के कामो मे उनका बहुत-सा समय जाता है, वह अपने घर के काम-काज और अपनी बच्चियो की देख-भाल के लिए वक्त निकाल ही लेती है।

जवाहर साल मे दो-तीन बार बम्बई आते थे और हमारे साथ रहते थे। हमे उनके आने से बडी खुशी होती थी, पर उनका साथ हमे बहुत ही कम नसीब होता था, क्योकि वह बेशुमार कामो मे फसे रहते थे। जब वह हमारे साथ होते थे, तो हमारे

छोटे-से घर की शात दिनचर्या विलकुल वदल जाती थी। सुवह से लेकर शाम तक मिलनेवालो का ताता वधा रहता था। कुछ लोग तो वक्त ठहराकर मिलने आते थे और कुछ जवाहर के दर्शन या उनकी एक झलक पाने के लिए। टेलीफोन की घटी और दरवाजे की घटी दोनो वजती ही रहती थी और मेरा सारा वक्त इन्ही दोनो का जवाव देने मे गुजरता था। न तो हमारे खाने का ठीक वक्त रहता था, न घर मे एकात रहता। मुझे यह पता ही न रहता कि दिन के या रात के खाने मे कितने लोग आयेगे और रसोई मे ऐसा इतजाम रखना पडता था कि जरूरत के वक्त दस या वीस आदमियो को आसानी से खिलाया जा सके।

इन दिनो ऐसा मालूम होता था कि जिंदगी मे सास लेने भर की भी फुरसत नही है। जवाहर सिर्फ खाने के वक्त दिखाई देते थे, सिवाय उस सूरत के जव हम भी उनके साथ किसी जलसे मे गये हो। अगर कभी इत्तफाक से कोई ऐसा मौका मिल गया कि वह और हम ही हम हो, तो हम कुछ घटे वडे मजे मे गुजारते थे। जवाहर पुराने किस्से सुनाते थे और सारा वक्त ऐसी खुशी मे गुजरता था। अक्सर आम वाते होती थी और कभी-कभी अपने खानदान की वाते भी। अक्सर जव कभी जवाहर शाम को घर पर ही रहते, तो वह कोई कविता हमे जवानी या पढकर सुनाते थे। जवाहर से कविता सुनने मे वडा लुत्फ आता है, क्योकि वह वडी खूवी से कविता-पाठ करते है।

जनवरी, १९३८ मे माताजी की लकवे से अचानक मृत्यु हो गई और उनकी मौत के चौवीस घटे वाद हमारी मौसी, याने माताजी की वडी वहन, का भी लकवे से देहात हो गया। यह दोहरा गम हम सवके लिए वडी भारी मुसीवत थी। भाग्य स मै उस समय इलाहावाद ही मे थी। मै इसके वाद जव वम्वई लौटी तो वडी ही परेशान और दु खी थी। मै जानती थी कि अव हमारा घर फिर कभी, भी वह पुराना घर न होगा, क्योकि हमारे पुराने जीवन की कोई ऐसी चीज चली गई थी, जो फिर कभी वापस नही आ सकती थी।

इसी साल कुछ दिनो के वाद जवाहर इदिरा को देखने यूरोप जा रहे थे। राजा और मै भी उनके साथ जाना चाहते थे, पर आखिरी वक्त पर राजा अपना काम छोडकर इस सफर पर न जा सके। राजा ने कहा कि मै जवाहर के साथ चली जाऊ, पर मुझे राजा के विना और अपने दोनो छोटे लडको को छोडकर जाना मुनासिव नही मालूम हुआ। फिर वात यह भी थी कि मेरा हमेशा से यह इरादा

रहा था कि यूरोप का सफर राजा के साथ करू। मुझे अफसोस है कि मैं भाई के साथ नही गई, क्योकि वह उस वक्त स्पेन गये, जब वहा गृह-युद्ध हो रहा था। और उनका यह सफर बडा ही दिलचस्प रहा। अपनी वापसी पर वह इदिरा को कुछ दिनो की छुट्टियो के लिए अपने साथ लेते आये।

अप्रैल, १९३९ मे इदिरा ने अपनी पढाई जारी रखने के लिए इग्लैड वापस जाने का फैसला किया। फिर एक बार राजा ने और मैंने ससार-भ्रमण की योजना बनाई और सोचा कि इस सफर का एक हिस्सा इदिरा के साथ करेगे, पर हमारा यह इरादा इस बार भी पूरा न हो सका, क्योकि राजा ने इस बात को पसद नही किया कि नेशनल प्लानिग कमेटी का अपना काम उस वक्त छोड़ दे। हमने आखिरी वक्त मे अपने टिकट रद्द कराये और यह आशा रखी कि, हालाकि जग के बादल घिर रहे है, फिर कभी हम बाद मे यह सफर कर सकेगे। पर यह मौका फिर नही आया, क्योकि जग छिड गई और अब बाहर जाना मुमकिन न था।

१९४० के आखिर मे इदिरा ने फैसला किया कि वह हमेशा के लिए हिन्दुस्तान चली आये। बडी सख्त बीमारी के बाद वह कुछ दिनो से स्विजरलैंड मे थी। जब मुझे यह मालूम हुआ कि वह पहले मिलनेवाले हवाई जहाज से वापस आ रही है तो मुझे बडी खुशी हुई, पर इसीके साथ कुछ डर-सा भी लगा और मैंने यह बात जवाहर को लिखी, जो उस वक्त देहरादून जेल मे थे। जवाहर ने फौरन मेरे खत का जवाब दिया और मुझे इस बात पर डाटा कि मैं बूढी औरतो की तरह डरती हू। उन्होने लिखा, "मुझे खुशी है कि इदु ने वापस आने का फैसला किया है। यह सच है कि आजकल सफर में हर तरह के खतरे है, पर अकेले बैठकर दुखी होने से यह ज्यादा अच्छा है कि इन खतरो का मुकाबला किया जाय। अगर वह वापस आना चाहती है, तो उसे जरूर आना चाहिए और जो भी नतीजा हो, उसका मुकाबला करना चाहिए।"

: ११ :

रात थी और हम देख रहे थे कि उसकी सास बहुत हल्के और धीमे चल रही है, मानो उसके हृदय में जीवन की लहर चढ़-उतर रही हो।

और हमारी आशाए हमारे डर को झुठला रही थीं और हमारा डर हमारी आशाओ को।

जब वह सो रही थी, हमें लगा कि वह चल बसी और जब वह चल ही बसी, तब हमें लगा कि वह सो रही है।

कारण कि जब भोर हुआ, धूमिल और उदास—और जब पावस की ठिठुरन से शरीर कांपता था, उसकी शात पलकें मुंद गईं और उसका हमसे भिन्न दूसरा ही प्रभात हो गया।

—टामस हुड

माताजी वहुत सुदर थी। कद की छोटी और जिस्म की नाजुक। मुश्किल से उनका कद पाच फुट का होगा। वह पक्की काश्मीरी थी। रग-रूप मे एक सुदर गुडिया-जैसी नजर आती थी। पर वाद के वरसो ने सावित कर दिया कि वह और वातो मे गुडिया-जैसी न थी।

अपने घर मे वह सवसे छोटी थी। उनसे दो वडी वहने और एक भाई थे। उनकी वडी वहन ने उन्हे पाला-पोसा था, जो उम्र मे उनसे दस साल वडी थी और वे एक-दूसरे को वहुत चाहती थी।

तीनो वहनो मे सवसे छोटी और सवसे ज्यादा खूवसूरत होने की वजह से माताजी घर-भर की लाडली थी। सभी उनको प्यार करते थे और उन्हे उनकी उम्र की लडकियो की तरह नही, वल्कि नाजुक गुडिया की तरह रखते थे। कम उम्र मे उनकी शादी हुई और वह अपने पति के घर आईं। यह घर नये लोगो से भरा हुआ था। इनमे से कुछ दयालु और कुछ कठोर थे। मेरी दादी अनेक प्रकार से वहुत वढिया और तजुर्वेकार थी, लेकिन उस जमाने की सव सासो की परम्परा उन्हे कायम रखनी थी। जवतक खानदान के सव लोग एक साथ रहे और

अलग होकर खुद अपने घर की रानी न बनी, माताजी को सुख न मिला। पर खुद अपने घर मे भी उन्हे ऐसे रखा जाता था, जैसे कोई कीमती हीरा हो और हर तरह के आराम का उनके लिए बदोबस्त करने मे पिताजी ने खर्च का कभी खयाल नही किया। औरत का दिल जो भी सुख और आराम चाह सकता है, वह सब उनकी सेवा मे मौजूद रहता था। पर दुनिया के ये सब सुख होते हुए भी वह एक बडे सुख मे महरूम थी, जो इन्सान के लिए सबसे ज्यादा जरूरी होता है, यानी तन्दुरुस्ती। उन्हे और हजारो नियामते हासिल थी, पर जिदगी की इस सबमे बडी नियामत से वह वचित थी।

जवाहर के जन्म के बाद से ही माताजी की तबीयत खराब रहने लगी और जब-तब वह सख्त बीमार पड जाया करती। वह हर बीमारी के बाद कुदरती-तौर पर वह ज्यादा कमजोर होती जाती थी और किसी इलाज से भी उन्हे आराम नही होता था। पिताजी उन्हे यूरोप ले गये, ताकि वहा अच्छे-से-अच्छे डाक्टर का इलाज करा सके; पर इससे भी कुछ फायदा न हुआ। मुझे कोई ऐसा समय याद नही, जब माताजी खूब भली-चगी रही हो और घर के और सब लोगो की तरह खूब खा-पी सकी हो और अच्छी तरह जिदगी गुजार सकी हो। मुझे इसका भी पता नही कि मा अपने बच्चे की बराबर खबरगीरी किस तरह करती है, क्योकि माताजी की सेहत का यह हाल था कि लोगो को हमेशा उन्हीकी देख-भाल करनी पडती थी वह बेचारी भला अपने बच्चो की देख-भाल क्या करती।

इसी तरह साल-पर-साल बीतते गये। मेरे लिए माताजी एक सुदर फूल के समान थी, जो प्यार करने के लिए बना हो और जिसे तकलीफ मे और जिदगी की छोटी-छोटी मुसीबतो मे बचाने की हर तरह कोशिश की जाती हो। सन् १९२० तक हर तरह के आराम मे घिरी हुई माताजी ने अपने छोटे-से परिवार पर रानी की तरह राज्य किया। उन्हे अपने मशहूर पति, होशियार बेटे और अपने घर पर बडा फख्र था। रज और गम कभी उनके पास फटका तक नहीं था और असहयोग-आदोलन शुरू होने तक उन्हे कभी कोई परेशानी न हुई थी। पर, उसके बाद कुछ हफ्तो के अदर-ही-अदर जिदगी-भर की आदते बदल गई और हमारे छोटे-से घर मे एक अच्छी खासी क्राति हो गई।

हममे से और सबके लिए नई परिस्थितियो के अनुसार चलना इतना ज्यादा मुश्किल न था, पर माताजी और पिताजी के लिए जीवन के प्रति अपना सम्पूर्ण

दृष्टिकोण और अपनी सारी आदते बदल देने का सवाल था। पचास बरस की उमर गुजारकर जब कोई साठ साल के करीब पहुच रहा हो, तो उसके लिए यह काम आसान नही होता, फिर भी जिस तेजी से मेरे माता-पिता ने अपने पुराने जीवन को बदलकर नया तरीका अख्तियार किया, उससे सभी को हैरत हुई। पिताजी को जिदगी की सभी अच्छी चीजे पसद थी। अच्छे कपडे, अच्छा खाना-पीना और आराम की जिदगी। माताजी ने बढिया-से-बढिया रेशमी साडियो के सिवाय कभी कुछ नही पहना। कभी ऐसा नही हुआ था कि उन्हे किसी चीज की जरूरत हो और वह उन्हे न मिली हो। न वह यह जानती थी कि तकलीफ किसे कहते है। फिर भी बिना किसी झिझक के उन्होने खद्दर पहनना शुरू किया और ऐसी भद्दी और मोटी साडिया पहनने लगी, जिनका बोझ भी वह मुश्किल से सभाल सकती थी।

माताजी का बाकी जीवन तकलीफो, कुर्बानियो और बेशुमार परेशानियो से भर उठा। जिन्हे वह बहुत ज्यादा चाहती थी, ऐसे प्रियजनो और उनके बीच जेल-खानो की भयानक दीवारे बराबर खडी रहती थी। पर हमारी उन्ही छोटी-सी माताजी ने, जिनके बारे मे हमारा खयाल था कि बडी ही नाजुक है, साबित कर दिखाया कि उनके नाजुक शरीर के भीतर बडा मजबूत दिल है और उसमे इतना साहस और सकल्प है कि कितनी भी तकलीफ और रज क्यो न उठाना पडे, वह सब-कुछ बर्दाश्त कर सकता है।

इसके बाद के बरस उनके लिए बडी मुसीबत के थे। पर उनकी जिदगी मे बुढापे मे आकर जो तब्दीली हुई थी, उसके बारे मे हमने उनकी जुबान से कभी शिकायत का एक शब्द नही सुना, हालाकि उनका पहले का नियमित और शाल जीवन खत्म हो गया था और उसकी जगह तकलीफ और मुसीबत ने ले ली थी। अजीब बात यह थी कि यह सब कुछ होते हुए भी माताजी किसी-न-किसी तरह भली-चगी बनी रही। पिताजी की मृत्यु ने उनकी कमर बिलकुल तोड दी। दिल से वह पुराने खयालो की थी, इसलिए उनका वह विश्वास था कि पिछले जन्म मे उन्होने कोई बडा भारी पाप किया होगा, जिसके कारण इस जन्म मे उनसे उनके पति को छीन लिया गया। इसके अलावा वह हमेशा कमजोर और बीमार रहती थी। इसलिए वह समझती थी कि पहले वही मरेगी, जैसाकि एक हिंदू पत्नी के लिए उचित होता है। पिताजी कभी एक दिन के लिए भी बीमार नही पडे थे। जेल के

जीवन की तकलीफो ने ही उनकी जिंदगी को वक्त से पहले खत्म कर दिया।

उन दोनो ने करीब पचास साल एक साथ गुजारे थे और दुख-सुख मे एक-दूसरे का हाथ बटाया था। मानसिक और शारीरिक सकटो का मुकाबला करने के लिए माताजी हमेशा पिताजी की शक्ति पर निर्भर रहती थी। सुख और दुख मे उन्होने जो दिन एक साथ बिताये थे, उनमे पिताजी ने हमेशा प्रेम से उनकी देख-भाल की थी। बिना पिताजी के माताजी घबराई हुई और खोई हुई-सी रहने लगी। बहुत दिनो तक वह इस बदली हुई हालत को ठीक समझ ही न सकी। इन दिनो मे जवाहर ने वह सब कुछ किया, जो एक बेटा कर सकता था। खुद उनपर इतने बडे दुख का पहाड टूट पडा था कि वह गिरने के करीब थे, पर उन्होने अपने-आपको सभाला और माताजी का दुख बटाने की हर मुमकिन कोशिश की। उन दिनो जवाहर का माताजी को प्रसन्न करनेवाला श्रद्धापूर्वक व्यवहार ऐसा था कि जिसका वर्णन नही किया जा सकता।

माताजी जी रही थी केवल अपने बच्चो के और खासकर जवाहर के लिए। कमला की मौत ने उन्हे एक और सदमा पहुचाया और जिदगी की मुसीबतो का मुकाबला करने की उनकी रही-सही ताकत भी खत्म कर दी। दिन-पर-दिन वह और कमजोर होती गई।

१९३८ मे मै अपने बच्चो के साथ इलाहाबाद गई, जैसेकि हर साल जाया करती थी और वहा एक महीना रही। जब मै बम्बई वापस आनेवाली थी, तो माताजी ने बार-बार मुझे रोका और मेरे रवाना होने का दिन टलता रहा। एक दिन शाम को हम सब साथ बैठे थे—जवाहर, स्वरूप, उनके पति, उनके बच्चे और मै। इधर कुछ दिनो मे माताजी की तबीयत ठीक दिखाई दे रही थी और खासतौर पर उस शाम को तो वह भली-चगी मालूम हो रही थी।

जबतक हम लोग खाना खाते रहे, वह हमारे पास बैठी रही और पुराने किस्से सुनाती रही। उस दिन वह हर रोज से ज्यादा बोलती रही और हम सबको इससे बडी खुशी हुई। खाने के बाद हम लोग रात के साढे दस बजे तक बैठे गप-शप करते रहे। स्वरूप को उसी रात बारह बजे की गाड़ी से लखनऊ जाना था और माताजी ने हमसे कहा कि उन्हे भी नीद नही आ रही है, इसलिए वह भी स्वरूप के स्टेशन जाने के वक्त तक हमारे साथ बैठकर बाते करेगी। हमने उन्हे आराम करने के लिए बहुत समझाया, पर वह न मानी। इसलिए हम सब बैठे बाते करते-

रहे। माताजी धीरे-धीरे चुप और शात होने लगी।

११ बजे स्वरूप स्टेशन जाने के लिए तैयार हुई और माताजी से विदा होने लगी। जब माताजी स्वरूप से गले मिलने खडी हुई, तो वह लडखडाई और अगर जवाहर और मै फौरन स्वरूप की मदद को न जाते, तो वह वही गिर पडती। हम उन्हे उठाकर उनके बिस्तरे तक ले गये, पर वहातक पहुचकर उन्हे ठीक से लिटाने भी न पाये थे कि वह बेहोश हो गई। माताजी को इससे पहले दो-बार लकवा मार चुका था और यह लकवे का तीसरा हमला था। डाक्टर को बुलाया गया। उसने अपना सिर हिलाकर जवाब दिया कि अब इनकी बचने की कोई आशा नही। यह सिर्फ चद घटो की महमान है।

मै नही जानती थी कि मौत ऐसे भी आ सकती है और मै हतप्रभ हो गई। यह कैसे हो सकता था कि माताजी हमसे इस तरह अचानक एक शब्द भी कहे बिना या प्यार किये बिना हमेशा के लिए जुदा हो जाय? वह तो हममे से किसीको बिना प्यार किये घटे-भर के लिए भी घर से बाहर जाने नही देती थी! मै तो डाक्टर की बात को असभव मानती थी और मुझे उनका फैसला स्वीकार न था। मुझे उनपर गुस्सा भी आ रहा था, क्योकि उन्होने कुछ भी नही किया। हम सबकी तरह वह भी खडे इन्तजार करते रहे।

रात-भर हम सब माताजी के बिस्तरे के पास बैठे रहे। जवाहर, स्वरूप और मै। हमारी मौसी (बीबी अम्मा) भी वहा थी। सुबह पाच बजे अचानक माताजी का सास रुक गया और वह एकदम शात हो गई, मानो सो रही हो। जवाहर की आखो मे पानी भर आया और बहुत धीमी और नर्म आवाज मे वह बोले, "यह भी चली गई।" और फिर उस सारे दर्द और तकलीफ के साथ, जिसे दबाने की मै बेकार कोशिश कर रही थी, यह बात मेरी समझ मे आई कि मेरी अच्छी मा, जिसे मै सारी उम्र चाहती रही, अब ऐसी नीद सो गई है, जिससे फिर कभी न उठेगी। औरो के साथ मै भी उनके बिस्तरे के पास खडी थी। मेरी आखो मे आसू नही थे और मै अपना सास रोके हुए थी। माताजी के देहान्त के समय मौसी कमरे मे नही थी। इसलिए जवाहर और स्वरूप उन्हे खबर करने गये। इस समय मै माताजी के पास अकेली खडी थी और आसुओ की वह नदी, जिसे मै अबतक रोके हुए थी, अचानक फूट पडी। धीरे-धीरे मै अपने घुटने के बल झुक गई और खामोशी से मैने उन्हे अन्तिम प्रणाम किया। फिर मै इस डर के मारे कमरे से बाहर भागी

कि कही मेरी सिसकिया उनकी शाति मे विघ्न न डाले।

माताजी के क्रिया-कर्म मे हजारो आदमी शरीक हुए। हमने उन्हे फूलो से ढक दिया। वह कितनी सुदर दिखाई देती थी! उनके चेहरे की झुर्रिया मिट गई थी और वह जीवित-सी जान पडती थी। मुश्किल से ही कोई कह सकता था कि वह मर गई है।

एक बार फिर आनद-भवन रज और गम मे डूब गया। उसपर राज करने-वाली रानी जा चुकी थी। उनके विना वह उदास और सूना दिखाई देने लगा।

: १२ :

कुछ को नाम मिला, कीर्ति मिली और सम्मान। वे विद्वान् थे, बुद्धिमान् और बलशाली। कुछ ऐसे भी थे, जिनका नाम नहीं था और जो दरिद्र और अशिक्षित थे। अन्य प्रकार से वे भले ही दीन हों, पर दुख और अन्याय के आगे उनमें दुर्बलता नहीं थी।

—विलियम मॉरिस

हमारी वडी मौसी, जिन्हे हम 'वीवी अम्मा' कहा करते थे, वचपन मे ही विधवा हो गई थी। जिदगी मे उन्हे कोई दिलचस्पी न होने के कारण वह मेरी माताजी की सेवा मे लगी रहती थी। ये दोनो बहने आपस मे एक-दूसरी से वहुत भिन्न थी। वडी वहन पर अपनी जवानी ही मे मुसीवत का पहाड टूटा था। इस वजह से उनकी तबीयत मे एक खास तरह की खामोशी और बुद्धिमत्ता भी पैदा हो गई थी। वह समझ चुकी थी कि जिदगी उनके लिए आसान नही होगी और उन्हे किसी और पर भरोसा किये विना अपना काम आप ही सभालना होगा। इस ध्येय को सामने रखकर उन्होने अपने मन को इस वात के लिए तैयार किया कि इस कठोर निर्दयी दुनिया मे उन्हे जिदगी वितानी है, न कि उसकी दया पर जीना है। वह वेहद चतुर और समझदार थी, इसलिए अपने मकसद मे कामयाव हो गई। अग्रेजी का एक शब्द भी नही जानती थी, पर उन्होने सस्कृत खूव पढी थी और उसकी विदुषी कही जा सकती थी। कोई भी काम वडी आसानी उनकी समझ मे आ जाता था। पिताजी हमेशा कहा करते थे कि अगर वीवी अम्मा को पूरी शिक्षा और मौके मिलते, तो वह वडी अच्छी वकील वन सकती थी। वह वडी ही कुशल और बुद्धिमान थी और वहुत ही खुशदिल। विधवा होने के कारण उनका अपना कोई घर न था और वह अपने रिश्तेदारो के यहा रहा करती थी। साल मे ज्यादातर वह हमारे यहा रहा करती थी और हमे उनके साथ रहना वडा अच्छा लगता था। जव वह हमारे साथ रहती थी, तो वह माताजी को घर के काम-काज मे मदद दिया करती या अगर माताजी वीमार होती, तो फिर कुछ भी खयाल किये विना दिन-रात उनकी सेवा मे लगी रहती। उनकी वहन, भानजे और

भानजिया, वस यही उनकी दुनिया थी। उनके भाई, जिन्हे वह वहुत चाहती थी, कई साल हुए गुजर चुके थे, पर जिस व्यक्ति के आस-पास उनका सारा जीवन घूमता था, वह मेरी माताजी थी। वीवी अम्मा को माताजी के प्रति जैसा प्रेम और श्रद्धा थी, उसकी कोई और मिसाल मैं नही जानती।

मै उनकी वडी चहेती भानजी थी। मैं जव छोटी वच्ची थी, तो उनके पास वैठकर तरह-तरह के किस्से-कहानिया सुनना मुझे वडा अच्छा लगता था। वह कभी तो मुझे परियो के किस्से सुनाती और कभी हिन्दुस्तान के पुराने वहादुर मर्दों और औरतो के। किसी तरह यह वात मेरे मन मे वैठ गई थी कि मैंने जिन वहादुर औरतो के किस्से पढे-सुने है और जिनके नाम अमर हो चुके है, उनमे से हर किसी जैसा काम वीवी अम्मा वडी खूवी से कर सकती हैं। उनमे कुछ ऐसी निडरता और वहादुरी थी, जो वहुत कम औरतो में होती है। मै उन्हे वहुत ही चाहती थी।

वीवी अम्मा माताजी से उमर मे दस साल वडी थी और उन्होने पुराने तरीके की जिन्दगी गुज़ारी थी, फिर भी उनका दृष्टिकोण माताजी से ज्यादा उदार था। माताजी की तरह उन्हे भी नये तौर-तरीको और आधुनिक विचारो से चोट जरूर पहुचती थी, पर वह कभी भी हम लोगों को इस वारे मे कुछ कहती नही थी। कटे हुए वालो और विना वाहो की ब्लाउज से तो उन्हे वेहद चिढ थी, पर जव हम उन्हे छेडते थे और चाहते थे कि वह इन चीजो को लेकर हममे से किसीको नापसन्द करे, तो वह हमे वस नजरअदाज देती थी। इसके खिलाफ माताजी अपनी नापसन्दगी साफ जाहिर कर देती थी और कई तरह से अपनी नाराजगी भी जता देती थी। वीवी अम्मा कभी इस पर जोर नही देती थी कि हम अपनी मर्जी के खिलाफ कोई काम न करे, पर वह चाहती यही थी कि हम पुराने तरीको पर कायम रहे और ज्यादा आधुनिक न वने।

वीवी अम्मा मेरे लिए खासकर एक प्यारी मौसी से कुछ ज्यादा ही थी। मै उनसे अपने दिल की वाते कह-सुन लिया करती थी और जव कभी मुझे माताजी के पास जाने मे हिचकिचाहट होती थी, तो वेखटके मौसी के पास चली जाती थी, क्योकि मै जानती थी कि भले ही उनके लिए यह कितना ही मुश्किल क्यो न हो, वह मेरा दृष्टिकोण समझने की कोशिश जरूर करेगी।

माताजी पथ-प्रदर्शन के लिए हमेशा दूसरो पर निर्भर रहती थी और किसी वारे मे भी उन्हे खुद ही कोई फैसला करने का मोका कभी भी नही मिलता था।

इसलिए उनके लिए यह वडा मुश्किल हो जाता था कि वह किसी वारे मे भी हमे कोई निश्चित सलाह दे। इसके अलावा हम सव माताजी को दुर्वल और स्नेहशील समझते थे, जिनकी हम सवको देख-रेख करनी पडती थी। उनसे यह आशा कोई नही रखता था कि वह हमारी देख-भाल करे और हमे रास्ता दिखाये। इसलिए जव मुझे कोई दिक्कत पेश आती, तो मै सीधी वीवी अम्मा के पास पहुचती थी और कभी भी ऐसा नही हुआ कि उन्होने मेरा काम न किया हो।

जव माताजी गुजर गई और हमने यह खवर उन्हे सुनाई, तो वह इतनी स्तम्भित हो गई कि उन्हे हमारे कहने का विश्वास नही हुआ। यह हो कैसे सकता था कि वह खुद तो भली-चगी और जिन्दा हो और उनकी छोटी वहन कुछ ही घण्टो मे मर जाय! धीरे-धीरे यह दुखद वात उनकी समझ मे आ गई। उनके वहादुर और मजवूत दिल को, जो पहले वहुत-से सदमे सह चुका था, वडा भारी धक्का लगा और उन्हे ऐसा दुख हुआ, जिसे कोई भी मानवी शक्ति कम नही कर सकती थी। हालाकि उनका दिल टूट रहा था और उनका सिर चकरा रहा था, फिर भी अपनी इस तकलीफ मे उन्होने पहले हमारा खयाल किया और खुद अपना गम छुपा कर हमारा गम मिटाने की कोशिश की। यह जानते हुए कि हमे यह पता न होगा कि क्रिया-कर्म का क्या प्रवन्ध करना चाहिए, उन्होने यह काम खुद अपने जिम्मे ले लिया और सव जरूरी व्यवस्था कर दी। जिस छोटी वहन को उन्होने खुद पाल-पोसकर वडा किया था और जिसकी जिदगी भर देख-भाल की थी, उसके आखिरी क्रिया-कर्म के लिए हर चीज उन्होने स्वय अपने हाथ से तैयार की।

जव माताजी की अर्थी घर से रवाना हुई, तो वीवी अम्मा घर के वरामदे मे वुत की तरह खडी थी। वह न तो हिलती थी, न उनकी आखो मे आंसू थे। उनकी नजर फूलो से ढकी हुई अर्थी पर जमी हुई थी, जो उनकी प्यारी वहन को उनसे दूर लिये जा रही थी। जवतक अर्थी नजर आ सकती थी, वह वही खडी रही, फिर तेजी से पलटी और माताजी के कमरे मे चली गई। मै भी उनके पीछे-पीछे गई। मैने देखा कि वह कमरे मे खडी है और ऐसा मालूम हुआ, मानो वह उन सव चीजो को आखिरी वार नजर भरकर देख रही है, जो उनकी वहन को प्यारी थी। मैने अपनी वाहे उनके गले मे डाली और कहा, "वीवी अम्मा, थोडी देर लेटकर आराम करलो।" उन्होने मेरी तरफ विना आखो मे आंसू लाये हुए देखा और मेरे सवाल पर ध्यान न देते हुए कहा, "जाओ और नहाकर आ जाओ। मै तुम्हारे लिए चाय

तैयार करवाती हू।" उस वक्त दिन के दो वजे थे। मै उनसे बहस करना नही चाहती थी। सो चुपचाप अपने कमरे मे चली गई और नहाकर वापस लौटी, तो देखा कि चाय तैयार है। मै चाय पी नही सकी। वीवी अम्मा की भाव-भगिमा देखकर मुझे परेशानी हो रही थी। मै उन्हे ढूढने गई। देखा कि माताजी के कमरे मे ठीक उसी जगह वैठी हुई है, जहा माताजी लेटा करती थी। मै उनपर झुकी और मैने उन्हे आवाज दी, तो उन्होने अपनी आखे खोली। मैने कहा, "वीवी अम्मा, थोडे चाय पी लो। उससे तुम्हे आराम मिलेगा।" उन्होने कुछ जवाव न दिया। मैने कहा, "वीवी अम्मा, तुम हमारे सवके लिए माताजी के वरावर रही हो और अव तो तुम्ही हमारी मा हो। अव तो हमारे लिए तुम्ही रह गई हो और हमे तुम्हारी वडी जरूरत हे।" उन्होने मुझे अपनी वाहो मे ले लिया और पहली वार उनकी आखो मे आँसू भर आये। वोली, "वेटी, तुम मुझे हमेशा वेटी की तरह प्यारी रही हो, पर हरएक की मा एक ही हो सकती है और तुम्हारी मा तुम्हे हमेशा के लिए छोडकर चली गई हे। मै कभी भी उनकी जगह नही ले सकती। और मै तो उन्हीके लिए जिदा थी। और अव क्या चीज वाकी है, जिसके लिए मै जिदा रहू ? मेरा काम पूरा हो चुका। अव मुझे भी जाना चाहिए।" मै वोल न सकी, क्योकि जिन आँसुओ को मै दवाने की कोशिश कर रही थी, उनसे मेरा गला घुट रहा था। मै उनके करीव ही वैठी रही और कुछ देर उनका सिर सहलाती रही। फिर जव ऐसा मालूम हुआ कि उनकी आख लग गई है, तो मै चुपके से वहा से हट गई। इसके वाद मै कई वार उन्हे देखने गई, पर हर वार मैने यही देखा कि वह सो रही है। आखिर मै भी कुछ घवराई। इसलिए मैने करीव जाकर उन्हे हिलाया, पर वह उठी नही। मैने उन्हे वार-वार पुकारा, पर उन्होने जवाव नही दिया। मेरे भाई अभी वापस लौटे नही थे। इसलिए मैने अपनी वहन से यह वात कही। वह भी यह देखकर घवराई। हमने डाक्टर को वुला भेजा। जवाहर कोई सात वजे वापस आये। इधर डाक्टर भी आ गये। डाक्टर ने वीवी अम्मा को देखा और कहा कि उन्हे भी वैसा ही लकवा मार गया है, जैसा कल माताजी को मारा था। हम इस वात का मुश्किल से विश्वास कर सके, क्योकि वीवी अम्मा पर इससे पहले कभी फालिज नही गिरा था और न वह कभी वीमार ही हुई थी। वह हमेशा भली-चगी और मजवूत थी, फिर भी अव वह वेहोश पडी थी और हम उनके वचाने के लिए कुछ नही कर सकते थे। हम सभी परेशान थे, पर मै वहुत ज्यादा

थी, क्योकि मेरे लिए वह और सबसे कही ज्यादा प्यारी थी। हम जो कुछ कर सकते थे, वह यही था कि सब्र से इन्तजार करे और जैसे इससे पहले की एक रात गुजारी थी, वैसे ही आज की रात भी गुजारे। मेरा दिल टूट रहा था, मै हिल भी नही सकती थी। उनके करीब बैठी रही। मेरे दिल मे उन सब दिनो और बरसो की, जब बीबी अम्मा हमारे साथ रही थी, एक-एक बात की याद ताजा हो रही थी। मुझे उस स्नेह और सहानुभूति की याद आ रही थी, जो मुझे उनसे मिली थी और वह श्रद्धा और भक्ति भी, जो उन्होने माताजी और हमारे पूरे खानदान के प्रति रखी थी। मुझे ऐसा मालूम हो रहा था कि मेरे दुखी दिल के टुकडे-टुकडे हो जायेंगे और इसीमे मुझे कुछ शाति मिलेगी, पर यह भी न हुआ। मै वही बैठकर उनके शात चेहरे को देखती रही और सोचती रही कि आखिर ऐसी बाते क्यो होती है।

हम रात-भर उन्हे इसी तरह देखते रहे और दूसरे दिन सुबह पाच बजे, यानी माताजी की मृत्यु के ठीक चौबीस घण्टे बाद, बीबी अम्मा भी गुजर गई। यह बात कुछ अनभव-सी मालूम होती थी कि हमारी माताजी और मौसी एक-दूसरे के चौबीस घण्टे के भीतर गुजर जाय और हमे बिलकुल बेबस और लचार छोड दे।

अब एक दूसरी अर्थी हमारे घर से चली, पर यह उससे कितनी भिन्न थी, जो एक दिन पहले यही से चली थी! बीबी अम्मा ने सन्यास ले लिया था। उनका कुछ भी क्रिया कर्म नही किया गया। हमने उन्हे गेरुए रग की साडी पहनाई। खुद उनके रूप के सिवा कोई और आभूषण नही था। उनका चेहरा बूढा था और उसपर झुर्रिया पडी थी, पर अब ऐसा मालूम होता था कि वह अचानक जवान हो गई है और चेहरे की झुर्रिया गायब हो गई है। चेहरे पर शाति थी, जिसे देखकर यही मानना पडता था कि वह सुखी है और आराम कर रही है, शायद इसलिए कि वह अपनी बहन के पास जा रही थीं, जिनसे उन्हे मौत जुदा न कर सकी।

माताजी के शव के साथ हजारो आदमी थे। लोग उन्हे किसी रानी की तरह बडी धूमधाम से मरघट तक ले गये थे। बीबी अम्मा के शव के साथ भी बहुत से लोग थे, पर जो चीज सबसे अजीब थी, वह यह कि भीड मे ऐसे गरीब, बूढे और बीमार लोग बहुत-से थे, जो उन्हे अपनी अतिम श्रद्धाजलि अर्पित करने आये थे। ये सब लोग उन्हे 'देवी' मानते थे और उनके प्रति बडा स्नेह और भक्ति रखते थे।

चाहे कोई आदमी कितना ही गरीव या कितना ही छोटा क्यो न हो, वह विना किसी झिझक के किसी काम मे सलाह लेने या मदद मागने के लिए वीवी अम्मा के पास पहुच जाता था और उसे कभी खाली हाथ नही लौटना पडता था। उनका जीवन वडा सीधा-सादा था और वह गरीवो और ज़रूरतमदो को हमेशा कुछ-न-कुछ देती रहती थी। इन लोगो को ऐसा मालूम हुआ कि उनकी मौत से उनका एक वडा हितेच्छु खो गया है। भली चगी होते हुए भी जव माताजी के मौत के दूसरे ही दिन उनकी भी मृत्यु हुई, तो लोग यह समझे कि वह महान देवी थी, क्योकि यदि ऐसा न होता तो वह अपनी जान इस तरह क्यो दे देती ?

मै गरीवो के उस मजमे को वडे अचम्भे से देखती रही, जो हमारे घर के अहाते मे जमा था और जिसमे लोग एक-दूसरे पर इसलिए गिरे पड रहे थे कि उनका आखिरी वार दर्शन कर सके, जिनके लिए उनके मनमे इतनी भक्ति थी। वहा कोई आख ऐसी न थी, जिसमे आँसू न हो, न कोई दिल ऐसा था, जो दर्द से भरा न हो। इसी हालत मे उनकी विना सजी अर्थी खामोशी के साथ रवाना हुई। मैने भी अपनी प्यारी मौसी को अतिम प्रणाम किया। मै जानती थी कि जो कुछ हुआ, उनके हक मे अच्छा ही था; क्योकि अपनी वहन के विना उनके लिए जिदगी दूभर हो जाती। फिर भी मै चाहती थी कि वह इस तरह अचानक न जाती और हम लोगो के जीवन मे दोहरी जगह खाली न करती, जो कई साल गुजरने पर भी भर नही सकी है।

: १३ :

अरे, अब तो रुक जाओ ! क्या घृणा और मृत्यु का पुनरावर्त्तन होना ही चाहिए ?

अरे, रुको तो ! क्या आदमी का मारना और मरना जरूरी है ?

नहीं-नही, ठहरो ! कटु भविष्य के पात्र को एकदम रीता मत कर डालो ।

जगत भूतकाल से ऊब उठा है ।

अरे, या तो वह नष्ट हो जाय, या आखिर शाति पा ले ।

—शेली

जुलाई, १६३६ मे जब जवाहर ने लका जाने का फैसला किया और मुझसे साथ चलने के लिए कहा, तो मैंने बडे शौक से इस बात को मजूर कर लिया । मेरी हमेशा से यह इच्छा रही थी कि लका देखू, पर मुझे कभी भी इसका मौका नही मिला था ।

जवाहर एक काम से वहा जा रहे थे । हिंदुस्तानियो और लका-वासियो मे बहुत सी गलत-फहमिया फैली हुई थी, जिनकी वजह से बडी कटुता पैदा हो चुकी थी । इसलिए यह तय किया गया कि जवाहर जाकर वहा की हालत देखे और अगर हो सके, तो दोनो देशो के निवासियो मे मित्रता करा दे ।

एक दिन सुबह, जब बादल घिरे हुए थे, जवाहर और मै पूना के हवाई अड्डे मे रवाना हुए । रवानगी का वक्त बडे सवेरे का था, फिर भी काफी लोग हमे रुख-सत करने आये थे, काग्रेसी कार्यकर्ता और जवाहर के दोस्त । हम हैदराबाद होते हुए गये, जहा हमने श्रीमती सरोजिनी नायडू और उनके घरवालो के साथ खाना खाया । फिर मद्रास और त्रिचनापल्ली होते हुए दूसरे दिन कोलबो पहुचे । जब हम माउट लाविनिया के हवाई अड्डे पर उड रहे थे, तो हमने देखा कि लोगो का बडा भारी मजमा नीचे जमा है । हमारे यान-चालक ने, जो एक खूबसूरत नौजवान था, हमारा जहाज फौरन ही नहीं उतारा । उसने जहाज घुमाया और मजमे के सिर पर कई चक्कर लगाकर धीरे-धीरे हमे नीचे उतारा । फिर वह जहाज ऊपर ले गया और कुछ इस तरह तेजी मे नीचे आया, जिससे मालूम हो कि वह लोगो

को सलाम कर रहा है। जैसे ही हम नीचे उतरे, लोग हमारे जहाज की तरफ वढे और उन्हे वडी मुश्किल से रोका जा सका। लोग जवाहर का स्वागत करने के लिए आगे वढे और जिस प्रेम से उन्होने हाथ मिलाये और हँसी-खुशी से हमारा स्वागत किया, उससे हमे ऐसा मालूम हुआ कि हम अपने ही घर पर और अपने ही दोस्तो मे हैं।

हमारे स्वागत के लिए लकावासी और हिन्दुस्तानी दोनो कधे-से-कंधा मिला-कर खडे थे और प्रेम से हमारा स्वागत कर रहे थे। जवाहर जिस काम के लिए आये थे, उसके लिए यह एक नेक सगुन था। उस वक्त तो हमे ऐसा ही मालूम हुआ कि जवाहर अपने काम मे कामयाव हो गये और उस कटुता को, जो उस वक्त फैल रही थी, किसी हद तक कम कर सके। पर आगे चलकर साफ मालूम पडा कि ऐसा नही हुआ। हमारे सफर के एक ही महीने वाद लका-सरकार ने आठसौ हिन्दुस्ता-नियो को काम पर से अलग कर दिया और उन्हे हिन्दुस्तान वापस भेज दिया।

मुझे लका और वहा की हर चीज पसंद आई। वहुत ज्यादा काम होने पर भी जवाहर हमेशा सैर-सपाटे के लिए कुछ-न-कुछ वक्त निकाल ही लेते थे। हमने वहुत कुछ सुदर मदिर और वाग देखे और जहा कही गये, लोगो ने वडी मुहब्वत का सुलूक हमारे साथ किया। लकावासी और हिदुस्तानी दोनो हमारे स्वागत मे एक-दूसरे से वाजी ले जाना चाहते थे और मुझे यह सोचकर अचम्भा होता था कि ऐसी अच्छी तवीयत के लोगो मे ऐसे झगडे क्यो थे, जिनके कारण इतनी तक-लीफ हो रही थी।

लका मे औरते पर्दा नही करती, फिर भी कई मौको पर हमे माला पहनाने के वाद हमारे मेजवान जवाहर को अपने साथ मर्दो के गिरोह मे ले जाते और हमारी मेजवान मुझे औरतो मे ले जाती थी। सिर्फ खाने के वक्त हम थोडी देर के लिए साथ हो जाते थे और उसके वाद फिर किसी-न किसी तरह मर्द और औरते अलग-अलग हो जाती थी।

हिंदुस्तान मे औरतो को वोट देने का हक हासिल कराने के लिए हमे कोई आदोलन नही करना पडा। यहा औरतो की कुछ सस्थाए है, जो समाज-सुधार के काम करती है। पर औरतो को आजाद होने और मर्दो के वरावर दर्जा हासिल करने की प्रेरणा राष्ट्रीय आदोलन से ही मिली। अहिसा के उसूलो पर चलाये जानेवाले आदोलन के तरीके ऐसे थे कि औरते अपने मर्दो के कधा-से-कधा मिला-

कर काम कर सकती थी। गाधीजी के उसूलो का औरतो पर बड़ा असर हुआ और उन्ही उसूलो ने औरतो को सदियो पुराने रस्म और रिवाज के बधन तोडने और मातृभूमि की सेवा का रास्ता दिखाया। हजारो अपने घरो की चहार-दीवारियो से बाहर निकल आई। उन्होने तकलीफो और खतरो का सामना किया, जेल और मौत का मुकाबला किया और इस तरह पर सियासी और समाजी दोनो प्रकार की आजादी हासिल की।

लका मे हम जहा कही गये, हर जगह हजारो आदमी जवाहर को देखने और उनकी तकरीरे सुनने जमा हुए। उनमे ज्यादातर तमिल मजदूर होते थे—मर्द और औरते दोनो—जो चाय के और रबर के बागो मे काम करते थे। जिन रास्तो से जवाहर गुजरनेवाले होते थे, उनपर ये लोग घटो खडे रहते थे, इसलिए कि जवाहर को एक नजर भरकर देख सके। जब मै उन्हे गाडी मे बैठे-बैठे देखती थी या कभी-कभी जब गाडी से नीचे उतरकर मै उनके मजमे मे अपने भाई के साथ खडी होती थी, तो मै उन चेहरो पर नजर डालती, जो मेरे चारो तरफ दिखाई देते थे। उन्हे देखने से पता चलता था कि लोगो के दिल मे जवाहर के लिए प्रेम और विश्वास है, उन जवाहर के लिए, जो उनकी पुरानी मातृभूमि से आये है और उनके लिए आशा और खुशी का पैगाम लाये है। उनके बीच जवाहर का मौजूद होना ही उन्हे यह विश्वास दिलाता था कि हालाकि वे अपनी जन्मभूमि से दूर जा पडे है, फिर भी उनके देशवाले उन्हे भूले नही है।

जब दिन-भर की मेहनत के बाद शाम को मै जवाहर को बिलकुल चूर देखती, तो अक्सर मै यह सोचने लगती थी कि कही यह सब मेहनत बेकार तो नही है, पर जब अपने आस-पास के चेहरो को देखती थी, तो मेरे मन मे इस तरह का शुब्हा बाकी नही रहता था। लाखो आदमियो का प्रेम और विश्वास जिसमे प्राप्त होता हो, उसके लिए जो भी तकलीफ उठानी पडे, कम ही है।

बेशुमार जलसो, अभिनन्दनो, सभाओ और सैर-सपाटो के मौको से भरे हुए दस दिनो के बाद हमारा लका का दौरा खत्म हुआ, या यह कि जवाहर का दौरा खत्म हुआ, क्योकि मै उसके बाद भी एक हफ्ते लका मे रही और फिर बम्बई वापस लौटी।

अपनी वापसी के बाद जल्द ही जवाहर ने चीन जाने का फैसला किया। राजा, हमारे बच्चे और मै सब उन्हे शुभ-कामनाओ के साथ विदा करने इलाहाबाद गये।

जवाहर के मन मे हमेशा से चीन जाने की इच्छा थी, क्योकि प्राचीन देशो से उन्हे बडी दिलचस्पी है। मुझे यह देखकर बडी खुशी हुई कि आखिर उनकी यह बहुत पुरानी इच्छा पूरी हो रही है। उनका सफर बहुत ही थोडा रहा और उन्हे उसे जल्दी खत्म करना पडा, क्योकि लडाई छिड गई। जवाहर जब इस सफर से वापस लौटे, तो उनके दिल मे चीनियो और उनके महान् नेता जनरलस्सिमो च्याग-काइ शेक की बहादुरी और हर हालत मे अपने देश की हिफाजत करने और उसकी आजादी की रक्षा के निश्चय के लिए बडा मान था और वह इन लोगो की बडी तारीफ करते थे।

सितबर, १९३९ मे इग्लैड और जर्मनी के बीच युद्ध छिड गया। हिंदुस्तान की तरफ से भी जर्मनी के खिलाफ, हिदुस्तान की मर्जी मालूम किये बिना, जग का ऐलान किया गया। पहले तो हम लडाई की हालत को बडे गौर से देखते रहे और यह आशा करते रहे कि आखिर साम्राज्यवाद खत्म हो जायगा और इसी उथल-पुथल मे से आजाद हिदुस्तान उठ खडा होगा। गाधीजी और काग्रेस की हमदर्दी पूरी तरह और दिल से ब्रिटेन के साथ थी और उन्होने मदद और दोस्ती देने की जो बात कही थी, वह बिलकुल सच्ची थी। हम यह चाहते थे कि लडाई किन उद्देश्यो से लडी जा रही है, उनका ऐलान किया जाये, पर कोई ऐलान नही किया गया। धीरे-धीरे यह हुआ कि जो लाखो और करोडो हिदुस्तानी यह आशा रखते थे कि अपने इतिहास के इस नाजुक मौके पर ब्रिटेन अपने मन की तब्दीली का सुबूत पेश करे, उनके दिलो पर मायूसी छाती गई।

१९४० मे गाधीजी के लिए सिवाय इसके कोई और रास्ता न रहा कि वह वैयक्तिक सत्याग्रह शुरू करे। यह पूरे देश की तरफ से एक प्रकार की नैतिक पुकार थी, जिसके द्वारा वह सरकार की नीति के प्रति विरोध जाहिर करना चाहते थे। पहला स्वयसेवक जो गाधीजी ने इस काम के लिए चुना, श्री विनोबा भावे थे, जो पूर्ण सत्याग्रही थे। दूसरे स्वयसेवक जवाहर होते, पर इससे पहले कि जवाहर सत्याग्रह करते, वर्धा से इलाहाबाद जाते हुए रास्ते ही मे वह पकड लिये गये और मुकदमा चलाने के लिए उन्हे गोरखपुर ले जाया गया। उन्हे चार साल की सख्त कैद का हुक्म सुनाया गया। यह ऐसी सजा थी, जिसने सारे हिदुस्तान को हैरान कर दिया, पर उसीके साथ देश मे यह निश्चय भी पैदा कर दिया कि अपनी आजादी की लडाई आखिर तक जारी रहेगी।

राजा उन लोगो मे से थे, जिन्होने अपने-आपको स्वयसेवक की हैसियत मे पेश किया, पर जब राजा ने गाधीजी की इजाजत मागी, तो उन्होने पूछा कि क्या मुझे यह विचार पसन्द है। गाधीजी ने कहा कि अगर किसी कारण से मुझे यह बात पसद न हो, तो फिर उनकी यह राय होगी कि राजा जेल न जाय। पर हमारे चारो तरफ जो गडबडी मच रही थी, उसे देखते हुए मै जानती थी कि जबतक राजा इस काम मे अपनी शक्ति के अनुसार हिस्सा न लेंगे, उन्हे चैन नही पडेगा। इसलिए मै भी राजी हो गई। राजा की गिरफ्तारी के एक महीना बाद मैंने बापू को खत लिखकर खुद भी सत्याग्रह करने की इजाजत चाही, इसलिए कि अब लडाई से अलग रहने मे बडी तकलीफ थी। पर उन्होने मुझे इजाजत नही दी, क्योकि मेरे बच्चे छोटे थे और उनकी देख-भाल की जरूरत थी। मेरे लिए सिवाय इसके कोई चारा न था कि उनके फैसले पर अमल करू।

इससे पहले राजा और मै कभी पन्द्रह दिन या तीन हफ्तो से ज्यादा के लिए एक-दूसरे से जुदा नही हुए थे और अब उनकी जुदाई से मुझे बडी तकलीफ हो रही थी। हमे पन्द्रह दिनो मे एक बार मुलाकात की इजाजत थी और नियत समय पर हम खत भी लिख सकते थे। मेरे आस-पास काफी अच्छे दोस्त थे, फिर भी मुझे अक्सर अकेलापन महसूस होता था। मेरे लडके भी राजा की गैर-हाजिरी महसूस करते थे। छोटी उम्र के होने पर भी वे यह समझते थे कि राजा जेल क्यो गये है और उन्हे अपने पिता पर फख्र भी था। कभी-कभी यह होता था कि मुलाकात के बाद इन बच्चो को तैश आ जाता था और उनके रोकते-रोकते कुछ आँसू उनकी आखो मे दुलक ही जाते थे। उस बार कैदियो से मुलाकात की इजाजत नही थी और उसकी वजह से छोटे-छोटे बच्चो के दिलो मे भी कटुता और नफरत पैदा हो गई।

: १४ :

"ससार के तमाम साम्राज्यो की सेनाए भी एक सच्चे आदमी की आत्मा को कुचल नही सकती। वही एक आदमी अत में कामयाब होकर रहता है।"

—टेरेंस मैक स्विनी

ग्यारह वरस की उम्र तक जवाहर अपने मा-वाप के इकलौते वच्चे थे और हमारे माता-पिता ने, खासकर मांताजी ने, लाड-चाव से उन्हे वहुत कुछ विगाड दिया था। वह स्कूल नही गये। घर पर ही मास्टर रखकर उनकी पढाई का इतजाम किया गया था और कई साल तक उनके कोई भाई-वहन न होने की वजह से उन्हे अकेले रहने की आदत पड गई थी। हालाकि पिताजी ने उन्हे विगाड रखा था, फिर भी खुशकिस्मती से पिताजी वडे अनुशासन-प्रिय थे। इससे जवाहर मे अपने-आपको वहुत वडा समझने की आदत न पैदा हो सकी।

वचपन मे भी जवाहर के मन मे पिताजी के लिए वडी इज्जत थी। वह पिताजी को तमाम अच्छी वातो और खूवियो, वहादुरी और हिम्मत की मूर्ति समझते थे और उनकी सवसे वडी इच्छा यह थी कि खुद भी उन्ही-जैसा वने। हालाकि वह पिताजी को वहुत पसद करते थे और उनसे उन्हे प्रेम भी था, तथापि वह उनसे डरते भी वहुत थे। पिताजी के गुस्से से जवाहर कापते थे, क्योकि एक वार वह इस गुस्से के शिकार हुए थे और उस वक्त की याद आसानी से उनके दिल से मिट नही सकती थी, पर हम सव यह जानते थे कि पिताजी हमे कभी भी नाइन्साफी से सजा नही देगे। फिर भी जैसे साल-पर-साल गुजरते गये, पिताजी अपने गुस्से पर कावू पाते गये और हालाकि उनका गुस्सा आखिरी वक्त तक उनकी तवीयत मे मौजूद था, पर वह पूरी तरह उनके कब्जे मे रहा।

इस तरह जवाहर वडे होते गये। वह शर्मीले, तेज स्वभाव के थे और अपनी उम्र के सगी-साथी न होने के कारण अपने से वडी उम्रवालो से वहुत मिला करते थे। वह चौदह साल की उम्र मे हैरो गये और अपनी शिक्षा केम्व्रिज मे खत्म करके सन् १९१२ मे हिन्दुस्तान वापस लौटे। तभी मैंने पहली वार उन्हे देखा, हालाकि

१९०८ मे भी वह मुझे देख चुके थे, जबकि वह छुट्टियो मे घर आये हुए थे।

कई साल तक मेरे भाई मेरे लिए अजनबी बने रहे—एक ऐसे व्यक्ति, जिसे मै कभी तो पसद करती थी और कभी नापसद। कुछ साल बाद जब सत्याग्रह-आदोलन शुरू हुआ और जवाहर राजनीति मे कूद पडे, तो मैने उन्हे ज्यादा करीब मे देखा और जैसे-जैसे मै उन्हे ज्यादा जानने लगी, वह मुझे ज्यादा पसद आते गये और मेरा अपने इस भाई से, जिसे मै पहले गलती से घमडी समझती थी, प्रेम बढता गया।

एक बडे भाई की हैसियत से जवाहर मे कोई भी खामी नही। वह मेरी बहन से और मुझसे उम्र मे बहुत बडे है, उन्होने कभी इसकी कोशिश नही कि हमारे लिए नियम-कानून बना दे, जैसा अक्सर बडे भाई अपने छोटो के लिए किया करते है। अगर हमारी कोई बात उन्हे नापसद हुई है, तो भी उन्होने नर्मी से हमे इस तरह समझाया है कि हमारी भूल खुद हमारी समझ मे आ जाय। अगर किसी बारे मे हम उनमे सहमत न हो और इससे उन्हे कितनी भी तकलीफ क्यो न हो, फिर भी वह यह कोशिश करते है कि अपनी नाराजगी जाहिर न होने दे।

अपने विचार वह हम पर कभी भी नही लादते। स्वरूप और मेरे लिए वह बडे अच्छे स्नेहशील बडे भाई ही नही है, वह हमारे बडे भारी दोस्त और साथी भी है, जिमने अपने प्रेम और समझदारी से अपने-आपको हमारे लिए बडा कीमती मित्र बनाया है। हम जानते है कि जिस तरह पहले पिताजी थे, उसी तरह अब वह हमेशा हमारे साथ हैं—शक्ति का एक ऐसा स्तभ, जिसका हम जब चाहे सहारा ले सकते है और जिंदगी के छोटे-छोटे सवाल जब हमे परेशान करे, तो उनकी मदद लेकर उन्हे हल कर लें। वह कभी उपदेश नही देते, पर जब कभी जरूरत हो, मदद देने और रास्ता दिखाने के लिए तैयार रहते है। वह एक ऐसे विश्वसनीय मित्र है, जिन्हे इन्सान मजाक उडाये जाते या झिडकिया खाने के डर के बिना अपने मन की गुप्त बात बता सकता है। खुद उनमे बहुत ज्यादा इन्सानियत होने की वजह मे वह हमेशा दूसरे की कमजोरी समझने मे कसर नही रखते।

पिताजी की मृत्यु के बाद जवाहर को सबमे ज्यादा फिक्र माताजी की और मेरी थी। स्वरूप की शादी हो चुकी थी और उसका अपना घर था। अब हमारे छोटे से घर के मुखिया जवाहर थे, पर वह यह नही चाहते थे कि माताजी को या मुझे यह खयाल हो कि हमारा भार जवाहर पर पड रहा है, जैसाकि हिंदुस्तानी

घरो मे आम-तौर पर होता है। हमे कभी इसका खयाल भी नही आया, पर जवाहर को जरूर आया। पिताजी ने कोई वसीयतनामा नही छोडा, न हमे उनसे इसकी आशा थी कि वह ऐसा करेगे, क्योकि यह चीज उनकी तबीयत के खिलाफ थी। फिर भी कुछ चीजे थी, जो जवाहर को परेशान कर रही थी। उन्हे लगा कि शायद अब मै अपने-आपको ऐसा आजाद न समझू, जैसा पिताजी के सामने मै समझती थी और शायद उनसे रुपया-पैसा वगैरा मागना भी ठीक न समझू। इसलिए उन्होने मुझे एक खत लिखा, जिसमे लिखा था कि उनकी यह इच्छा है कि माताजी और मै अपने-आपको आनद-भवन का और पिताजी ने जो कुछ छोडा है, उस सबका असली मालिक समझे। वह खुद केवल एक ट्रस्टी है, जिसका काम हमारी और हमारे कामो की देख-भाल करना है और हम भी उन्हे यही माने। उन्होने यह भी लिखा था कि खुद उन्हे और उनके परिवार को बहुत कम खर्च की जरूरत होगी। इसलिए हम लोग बिना किसी झिझक के पहले की तरह रहे और यह समझे कि वह सिर्फ इसलिए है कि जब जरूरत हो, हमे रास्ता दिखाये और हमारी मदद करे। मेरा खयाल है कि कोई और भाई यह न करता। यह जवाहर ही की खूबी है। वह जो बात कहते है, करते भी है और उनके कदम कभी डगमगाते नही।

पिताजी की तरह जवाहर का गुस्सा भी बडा बुरा है। जब मै चौदह साल की थी, तो जवाहर ने कहा कि मुझे हिसाब सिखायेगे। यही वह विषय था, जो मुझे परेशान करता था। मै इस बात से खुश न थी, पर उन्हे टाल भी नही सकती थी। उन दिनो मै जवाहर से कुछ घबराती भी थी, पर यह नही समझती थी कि वह मुझपर खफा भी होगे। शुरू के कुछ पाठ बडे अच्छे रहे और जवाहर का पढाने का तरीका मुझे खूब पसद आया। जिस विषय को मै दिल से नापसद करती थी, उसीमे मुझे बडा मजा आने लगा और मै हर रोज उस घटे का इन्तजार करने लगी, जिसमे जवाहर मुझे पढाया करते थे। पर जब मुझमे कुछ-कुछ विश्वास पैदा होने लगा और जवाहर का डर भी मेरे दिल से कम हुआ, तो इसी बीच एक रोज गडबड हो गई। एक दिन न मालूम क्यो मै सबक पर ध्यान नही दे पा रही थी और कोई बात मुझे याद ही नही रहती थी। इस चीज ने जवाहर को खफा कर दिया, (मै उन्हे दोष नही देती) और उन्हे गुस्सा आना शुरू हुआ। उनके गुस्से का नतीजा यह हुआ कि मेरा मन सबक पर से एकदम उठ गया और मै बिलकुल ही खामोश हो गई। वह मुझपर बिगडे और चिल्ला-चिल्लाकर कुछ वाक्य उन्होने

कहे, जिसमे मैं और भी घबरा गई। हैरान और परेशान होकर मै उठ खडी हुई और जाने लगी। मै सोच रही थी कि आखिर एक दिन सबक भूल जाना कोई ऐसा बडा गुनाह तो नही है, जिसपर भाईसाहब इतने खफा हो। मुझे बहुत बुरा लगा और तकलीफ भी हुई और जब मैं अपनी किताबे उठा रही थी, तो आँसू, जिन्हे दबाने की मैं बहुत कोशिश कर रही थी, मेरी आखो से लुढक पडे। जवाहर ने मेरे आँसू देखे और उनका गुस्सा काफूर हो गया। अब जो कुछ हुआ, उसपर उन्हे अफसोस होने लगा। वह भी उठ खडे हुए और अपनी बाहे मेरे गले मे डालकर उन्होने मुझसे माफी मागी। पर उन्होने जो कुछ भी कहा या किया, इसके बाद मेरा मन कभी भी जवाहर से सबक लेने के लिए तैयार न हुआ।

जो लोग जवाहर को अच्छी तरह नही जानते, उनका यह खयाल है कि उन्हे जिदगी मे राजनीति और लिखने-पढने के सिवा कोई और दिलचस्पी नही है। इसमे शक नही कि इन कामो मे उनका ज्यादा वक्त निकल जाता है, पर उन्हे और भी कई चीजो से बडी दिलचस्पी है और इनपर वह जितना वक्त खर्च करना चाहते है, कर नही सकते। राजनैतिक काम के बाद जो भी वक्त बच रहता है, उसे जवाहर पढने मे बिताते है। कभी-कभी लिखने मे भी, पर लिखने का काम वह अक्सर उस वक्त करते है, जब वह जेल मे होते है। उन्हे घोडे की सवारी बहुत पसद है और वह बडे अच्छे सवार है। तैरने का भी बडा शौक है, पर उन्हे इसका मौका बहुत कम मिलता है। जबतक हम लोग उन्हे मजबूर न करे, वह सिनेमा या थियेटर नही जाते और अगर खेल सचमुच अच्छा हुआ, तो उसमे खूब लुत्फ उठाते है। जवाहर को बहुत ही खुश देखना हो, तो उन्हे बच्चो के साथ देखना चाहिए। उन्हे बच्चो से बडी दिलचस्पी है और बच्चे भी उन्हे बहुत पसद करते है। चाहे वह कितने ही व्यस्त या थके हुए क्यो न हो, अगर कोई बच्चा उनके पास जाये और कोई सवाल करे, तो जवाहर उसे कभी भी नही टालते, बल्कि अपना और सब काम रोककर उस बच्चे के सवालो का जवाब देते है।

दिन-भर की थका देनेवाली महनत के बाद जवाहर अपने छोटे भानजो, भानजियो या दूसरे बच्चो के साथ जब कुछ वक्त गुजारते है, तो उन्हे इस हालत मे देखने मे बडा मजा आता है। उस वक्त ऐसा मालूम होता है कि वह अपनी तमाम फिक्रो और परेशानियो मे आजाद हो गये है और बच्चो से मिलकर खुद भी बच्चा बन गये है। वह बच्चो के साथ दौडते है, खेलते है और खुद भी इन बातो से उतना ही

लुत्फ उठाते है; जितना उनके साथ खेलने मे बच्चे। हममे से ज्यादातर लोग ऐसा नही कर सकते; क्योकि हमे अपने वडप्पन का वहुत खयाल होता है और हम यह वात किसी तरह भूल नही सकते कि हम वडी उम्र के है। जवाहर ऐसा कर सकते है, क्योकि उनमे वहुत सादगी और इन्सानियत है और यही सबब है कि छोटे वच्चो को भी उनके साथ खेलने मे बडा मजा आता है।

जवाहर मे एक वडी भारी खूवी है, जो उनका कभी साथ नही छोडती। चाहे वह जेल मे हो, वाहर हो, कितने ही काम मे हो और हारे-थके हो, उन्हे जन्म-दिन, वार्षिकोत्सव और इस तरह के दूसरे मौके याद रहते है। इन छोटी-छोटी वातो का भी वह जितना खयाल रखते है, उसीकी वजह से उनके जाननेवालो को वह और भी ज्यादा पसन्द आते है और उनका प्रेम उन लोगो के दिल मे दुगना हो जाता है। एक वार यह हुआ कि हिन्दुस्तानी तिथि के हिसाब से मेरी सालगिरह १९ अक्तूबर, १९३० को पडती थी। उसी दिन जवाहर गिरफ्तार हुए और गिरफ्तारी के कुछ देर वाद उन्हे यह वात याद आई। कुछ दिनो के वाद उन्होने मुझे लिखा

"अभी-अभी मुझे यह वात याद आई है कि ब्रिटिश सरकार ने दफा १४४ का आर्डर निकालकर और उसके वाद मुझे १९ अक्तूबर को गिरफ्तार करके एक वडी भारी वात का खयाल नही रखा, जो उसी तारीख को हुई थी। उस दिन मै अपनी प्यारी वहन को उसकी सालगिरह का जो सुन्दर और कलापूर्ण तोहफा भेजता, वह न भेज सका। मेरी तरफ से यह गफलत वडी ही अफसोस की वात थी और इस गलती को मै अव ठीक करता हू। इसलिए अव किताबो की किसी दूकान पर जाकर कुछ ऐसी किताबे खरीदो, जिनमे प्राचीन विद्वानो का ज्ञान, मध्य युग का विश्वास, वर्तमान युग का शकावाद और भविष्य के गौरव की झलक हो। ये किताबे तुम खरीद लो, उनकी कीमत अदा करो और उसे अपने गाफिल भाई की तरफ से, जिसे अपनी छोटी वहन अक्सर याद आती रहती है, सालगिरह का देर मे पहुचा हुआ तोहफा समझ लो। फिर इन किताबो को पढो और उन्हे पढकर एक जादू की नगरी खडी करो, जो सपनो से भरी हुई हो, जिसमे वडे-वडे महल और फूलो से खिले हुए वाग और वहते हुए चश्मे हो, जहा सुख-ही-सुख का राज हो और हमारी यह दुखी दुनिया जिन खराबियो की शिकार है, उनका उस शहर मे प्रवेश भी न हो सके। तव जिन्दगी इस जादू की नगरी के वनाने और चारो ओर की

वदसूरती और दुख-दर्द के हटाने के लिए एक लम्वी और सुख-भरी कोशिश वन जायगी।"

जवाहर जव इग्लैड से वापस आये, वह वडे ही शानदार और मनमोहक युवक थे, पर किसी क़दर स्वाभिमानी और विगडे हुए भी, जैसेकि अक्सर अमीरो के लडके हुआ करते है। यहा आकर उन्होने जो साल गुजारे, वे उनके लिए वडे तजुर्वे के, मगर साथ ही दुख और मायूसी के थे। पर इन सव वातो का उनकी तवीयत पर वडा अच्छा असर हुआ और अव वह पहले से भी कही ज्यादा प्रिय वन गये। उनकी पश्चिमी शिक्षा ने उनपर काफी असर डाला है और लोग समझते है कि अपने दृष्टिकोण मे वह हिन्दुस्तानी से ज्यादा यूरोपियन है। पर उस नैतिक और राजनैतिक उथल-पुथल ने, जिसमे से दुनिया लडाई के और भुखमरी के पिछले वरसो मे गुजरी है, हममे से वहुत-सो को और खासकर जवाहर को, उन गहरे और विशद स्रोतो ने खीच लिया है, जिन्होने हिन्दुस्तान और चीन के लोगो के विचारो को प्रेरित किया है। अव उनके व्यक्तित्व की जडे पुरानी जमीन मे गहरी जा रही है और हमारे गौरवपूर्ण अतीत से उन्हे कीमती खुराक मिल रही है। अनेक निराशाओ के वावजूद भी उनकी मानसिक शाति वनी रहना और कटुता दूर हो जाना, ये ऐसी चोजे है, जो विशुद्ध भारतीय है। उनमे पूर्व और पश्चिम का समिश्रण है, पूर्व उन्हे जिंदगी का रास्ता दिखाता है और वह उन शक्तियो को ज्यादा अच्छी तरह समझ पाते है, जो इन्सानो की किस्मत वनाती है। उनकी ज्वलत राष्ट्रीयता ने उनमे यह दृढ विश्वास पैदा कर दिया है कि हमारे राष्ट्र की सच्ची आजादी कायम रह नही सकती जवतक कि दूसरे देशो मे जुल्म और जवर्दस्ती होती रहे। उनके समवेदनशील हृदय पर एशिया या यूरोप के किसी भी हिस्से मे होनेवाली किसी भी घटना का उतना ही असर होता है, जितना हिन्दुस्तान की किसी घटना का। वह आजादी के सच्चे सिपाही है और जहा कही भी और जव कभी भी आजादी खतरे मे होती है, वह उसकी रक्षा के लिए अपनी पूरी शक्ति से लडने के लिए तैयार रहते है।

कुछ लोग ऐसे भी है जो समझते है कि जवाहर दभी और अपनी ही चलानेवाले आदमी है। वे लोग इस वात को नापसद करते है। कभी-कभी ऐसा जरूर मालूम होता है कि जवाहर ऐसे ही है, पर सच पूछिये, तो स्वभाव से वह दभी या दूसरो पर हुकूमत चलानेवाले नही है। अगर मुमकिन हो, तो वह शोहरत से दूर ही रहना पसद करेगे। मुझे यकीन है कि अगर ऐसा हो सकता, तो जवाहर

जवाहर को ज्यादा मानसिक शाति मिलती, पर ऐसा हो नही सका। उनकी हालत बहुत-कुछ सपने देखनेवालो-जैसी है और अक्सर जब वह काम से थककर आराम करने लगते है, तो ऐसा मालूम होता है कि वह दूर की कोई चीज देख रहे है। उनकी आखे स्वप्निल हो उठती है और ऐसा मालूम होता है कि वह किसी दुनिया मे जा पहुचे हो। कभी-कभी उनकी आखो मे अजीब दुख-दर्द का पता चलता है, और उनका चेहरा जो इतनी उम्र होने पर भी जवानो का-सा है, अचानक बूढो का-सा दिखाई देने लगता है। जिंदगी जवाहर के लिए आसान नही है और कुर्बानियो और तकलीफो ने उनपर अपना असर छोडा है। ऐसी मुसीबते और बहुत-सो पर भी गुजरी है, जिन्होने यही रास्ता लिया है।

ऐसे लोग भी है जो जवाहर को दोष देते है और उनपर इलजाम लगाते है, पर ऐसे लोग या तो उन्हे समझते ही नही, या उनकी गहराई तक पहुच नही पाते। वह हम सबकी तरह इन्सान है और उनमे वही सब कमजोरिया है, जो और इन्सानो मे होती है। फर्क सिर्फ इतना है कि जहा अक्सर लोग गिर जाते है, वहा जवाहर नही गिरते। यही उनकी खूबी है। अगर हिंदुस्तान जवाहर की पूजा करता है, तो केवल जवाहर की खूबियो और शक्ति के कारण नही, इस भक्ति का सबब जवाहर की वे खूबिया भी है, जो मामूली इन्सानो मे होती है, वह न तो अपने-आप को जन-नायक समझते है, न शहीद। वह तो बस यही मानते है कि वह देश के सेवक है और उन्हे यह फख्र हासिल है कि देश की जरूरत के मौके पर उसकी सेवा करे और वह यह काम आखिर तक करते रहेगे। हालाकि उनका करीब-करीब आधा जीवन जेल मे गुजर चुका है, फिर भी वह जेल जाने को कोई बडी भारी कुर्बानी नही समझते और न ऐसी बात कि उसका कोई शोर मचाया जाये। जब हम विदेशी सत्ता के खिलाफ अपनी आजादी के लिए लड रहे है, तो यह बात होती ही है। एक बार उन्होने मुझे जेल से लिखा था "आज की दुनिया मे जेल जाना बहुत छोटी और मामूली बात है। अब दुनिया अपनी जड-बुनियाद से हिल रही है। हमेशा होनेवाली एक बात की तरह से मैं समझता हू कि जेल की भी कुछ कीमत जरूर है और इसमे आदमी को फायदा भी पहुचता है, पर जबतक यह काम अदरूनी लगन से न किया गया हो, यह कीमत कुछ बहुत ज्यादा नही होती। अगर दिल मे लगन मौजूद हो, तो फिर और चीजो की पर्वाह ही नही रहती, इसलिए कि अद-रूनी लगन बडी भारी चीज है।"

मगर फिर भी वार-वार जेल जाना और जाते ही रहना कोई मामूली आसान वात नही है और न जेलखाना कोई फूलो की सेज ही है, जहा जाकर आद कभी-कभी आराम कर ले । कुछ लोग समझते है कि जो लोग वार-वार जेल ज है, उन्हे इस वात की आदत हो जाती है और वे इसकी कुछ पर्वाह नही करते । ऐ खयाल रखनेवाले लोग अगर कुछ महीने भी जेल मे गुजारे, तो उनका यह गल खयाल दूर हो जायगा । जेल मे शारीरिक तकलीफे तो होती ही है और जव क आदमी जेल जाता है, तो यह समझ कर जाता है कि ऐसी तकलीफ तो होगी । पर जिस वात से वहुत तकलीफ होती है, वह है मानसिक कष्ट, जो जेल की जिद मे आये दिन छोटी-छोटी मुसीवतो के रूप मे भुगतना पडता है ।

अपने प्रियजनो से जुदा कर दिया जाना और उनसे सिर्फ उस वक्त मि सकना, जव जेल के हाकिमो को मर्जी हो, ऐसी वाते है जिनसे आदमी को तकल होती है और कभी-कभी उसके दिल मे कटुता भी पैदा हो जाती है । जेल मे का लम्वी मुद्दत तक रहना और फिर भी दिल मे कडुवाहट पैदा न होने देना, यह व भारी वात है और इसे जवाहर ने कामयावी से हासिल किया है ।

जैसाकि जवाहर ने मुझे लिखा था, किसी काम के लिए अगर दिल की लग हो, तभी आदमी अपना मकसद हासिल करने के लिए तकलीफ उठा सकता है अ मुसीवत वर्दाश्त कर सकता है । जवाहर जव कभी गिरफ्तार होते है, तो हम अक्स परेशान होते है, पर वह अपनी तकलीफ को हमेशा वहुत छोटा वनाकर जो मुसीवत आये, उसे सहन करने के लिए हमे हिम्मत और शक्ति दिलाते रहते है ।

१९४० मे जवाहर को चार साल की सख्त कैद की सजा दी गई । जिस किस भी यह खवर पढी, उसे इस सजा के राक्षसी रूप ने हैरान कर दिया । हम लो पर भी यह एक वडा भारी वार था । हम लोगो को हुकूमत के अचानक और अर्ज फर्मान सुनने की कुछ आदत-सी हो गई थी, पर जवाहर की यह सजा सुनकर ह भी इतनी तकलीफ हुई, जितनी इससे पहले की किसी सजा के हुक्म से नही हुई थ मै इससे वहुत ज्यादा परेशान हुई और मैने अपनी यह परेशानी एकाध खतो जाहिर भी की । एक खत मे मैने पूछा था कि क्या राजा और मै देहरादून जेल आकर तुमसे मिल सकते है ? मेरे खत के जवाव मे जवाहर ने लिखा "राजा औ तुम कभी भी चाहो, शौक से आ सकते हो । मै खासतौर पर राजा से मिल चाहूगा, क्योकि हो सकता है फिर इसके वाद कुछ समय तक मुझे उनसे मिल

का मौका ही न मिले, (राजा कुछ दिनो के वाद व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेवाले थे)। मुझे यह मालूम करके दुख हुआ कि मेरी सजा की खवर सुनकर राजा परेशान हो गये और हा, मेरी प्यारी वहन तुम भी! आजकल मुझे जो मानसिक शाति हासिल है, वैसी इससे पहले कभी शायद ही मिली हो और हमारी आजकल की पागल दुनिया मे यह सचमुच वडी वात है। मैने इस वात की आदत डाल ली है कि जव चाहू अपने-आपको अन्दर की तरफ समेट लू और अपने दिल के वे दरवाजे वन्द कर लू, जिनका सवध उन कामो से होता है, जो जेल मे आ जाने से रुक जाते है। तुम्हे मेरे वारे मे विना सवव परेशान न होना चाहिए। जिदगी हम सवके लिए कठिन होती जा रही है और आराम के पिछले दिन एक ऐसे जमाने के मानिद मालूम होते है, जो गुजर चुका, वे दिन फिर न जाने कव वापस आयेगे और क्या कभी वापस आयेगे भी? कोई नही जानता कि क्या होगा?. जिदगी जैसी भी है, उसीमे सुखी रहने की आदत हमे डालनी चाहिए और जो वात मौजूद नही है, उसके लिए तरसना नही चाहिए। दिल मे जो तूफान उठते है और मन को जो तकलीफ होती है, उसके मुकावले मे शारीरिक कठिनाइया वहुत मामूली चीजे है और चाहे जिदगी तकलीफ से गुजरे, चाहे चैन से, आदमी उससे हमेशा कुछ-न-कुछ हासिल कर सकता है; पर जिदगी से पूरा लुत्फ उठाने के लिए आदमी को यह फैसला कर लेना चाहिए कि वह इस वात का खयाल दिल से निकाल दे कि उसे इस वात के लिए क्या कीमत अदा करनी पडती है।"

वचपन ही से पिताजी ने हमे यह सिखाया था कि हम खतरे मोल लेने और उनका मुकावला करने से न घवराये। "खतरे से दूर रहो" यह कभी भी हमारा आदर्श नही रहा है और मुझे आशा है कि न हमारे वच्चो का रहेगा। वहुत वार ऐसा हुआ है कि हममें से हरएक को ऐसा रास्ता चलना पडा और ऐसा सफर करना पडा, जो खतरे से भरा हुआ था; पर इस चीज ने हमारे कार्यक्रम को पूरा करने से कभी नही रोका। जहातक जवाहर का सवध है, अगर कही इस वात का शुवहा भी हो कि जो काम वह करना चाहते है, उसमे कोई खतरा है, तव तो यही वात उन्हे उस काम के करने के लिए तैयार करने का एक और सवव वन जाती है। शायद कभी-कभी यह वात वचपन की-सी मालूम हो, पर यह समझकर कि जो भी कदम उठाया जाय, उसमे खतरा जरूर है, सारी उमर डरते-डरते गुजारने से यह कही अच्छा है कि निडरता का तरीका अख्तियार किया जाय।

एक वार जवाहर अलीपुर-कलकत्ता की जेल मे थे। उनकी गिरफ्तारी के वाद से उनका कोई खत हमे नही मिला था। इसलिए कुदरती तौर पर हम जरा परेशान थे। उन्ही दिनो उनका एक खत मेरे पास आया, जो उनके मन का पता देता था "मेरी प्यारी बहन, मुझे आशा है कि तुम और घर के और लोग मेरे वारे मे परेशान न होगे। मे अच्छा हू और आराम कर रहा हू। मै यहा खूव पढूगा, इसलिए कि यहा कोई और काम ही नही है। पढना, सोचना और इस तरह दिनचर्या पूरी करना। इसलिए जव मै वाहर आऊगा, और अभी तो इसमे वडी देर है, तो हो सकता है कि मै अव जितना अक्लमद हू, उससे कुछ ज्यादा अक्लमद वनकर वाहर निकलू। पर यह वात हो भी सकती है और नही भी। अक्लमदी वडी चकमा देनेवाली चीज है और उसको पा लेना जरा मुश्किल काम है, और फिर भी कभी-कभी वह अचानक और विना किसी इत्तला के मिल जाती है। इस दरमियान मे मै श्रद्धा से उसकी भक्ति करता रहूगा और उसकी कृपा हासिल करने की कोशिश करूगा। हो सकता है कि किसी दिन वह मुझपर मेहरवान हो जाय। खैर, उसकी भक्ति करने और उसकी मर्जी हासिल करने के लिए जेल वुरी या गलत जगह नही है। जिदगी की दौड-धूप वहा से काफी दूर है और मन को वेचैन नही करती और यह अच्छा ही है कि आदमी हर किसी की जिदगी को जरा दूर से और सवसे अलग रहकर देख सके।"

जवाहर खेल-कूद के शौकीन है, पर इसका यह मतलव नही कि उन्हे इसका मौका भी मिलता है। उन्हे सर्दी के खेलो मे वडा मजा आता है। जव हम लोग स्विजरलैड मे रहते थे, तो वरफ पर फिसलने और वरफ पर दौडने मे घटो गुजार देते थे। उन्हे कुदरत की खूवसूरती—अपने कुदरती अदाज मे—वहुत पसद है इसलिए कि वह खुद भी वडी आसानी से कुदरत मे घुल-मिल सकते है और मासूम वच्चो की तरह उनसे लुत्फ उठा सकते है।

जवाहर हर एक से यही आशा रखते है कि वह जो काम करे अच्छी तरह करे, चाहे वह कोई काम हो या खेल। दूसरो से वह सख्ती से काम लिया करते है। १६३१ मे कोई छ महीने मैने उनकी सेक्रेटरी का काम किया और मुझे यह काम दिल से पसद था। फिर भी मुझे हरदम यह डर लगा रहता था कि मुझसे कोई गलती न हो जाय और मुझसे खफा न हो जाये। खुशनसीवी से मै इससे वच गई, पर मै आज तक यह फैसला नही कर सकी हू कि यह वात मेरे काम करने की खूवी

से हुई या यू ही इत्तफाक से हो गई। सुस्त, नाकाबिल और काहिल होना जवाहर की नजर मे ऐसा गुनाह है, जिसे वह कभी माफ नही करते। एक वार उन्होंने स्विजरलैड मे मुझे स्कीइग (वर्फ का एक खेल) सिखाना चाहा। जो दिन मुझे पहला सवक देने के लिए चुना गया, वह अच्छा नही था। दो दिन से वर्फ नही गिरी थी और इससे पहले जो वर्फ गिरी थी, वह जमकर सख्त हो गई थी और उसपर पैर फिसलते थे। हर वार जब मै खडी होती, तो मै धम से गिर पडती थी। मै किसी तरह अपना सतुलन ठीक नही रख पाती थी और इससे जवाहर को वडी कोफ्त हो रही थी। वह समझ रहे थे कि मै डर रही हू और विगडते जाते थे। मैने वहुत कोशिश की कुछ कदम चलू, पर हर वार जब मैने कोशिश की, गिर-गिर पडी और अक्सर बुरी तरह गिरी। इसपर जवाहर मुझपर बरस पडे और कहने लगे कि मुझे लाखो वरसो मे भी यह काम न आयेगा। मुझे वडा सदमा पहुचा और मैने अपने एक स्विस दोस्त से कहा कि यह खेल मुझे सिखा दे और अपने भाई की पेशीनगोई के होते हुए भी मै तीन दिन मे वर्फ पर अच्छी तरह स्कीइग करने लगी।

वीमार के कमरे मे जवाहर वडे ही आदर्श तीमारदार सावित होते है। उनमे वेहद नर्मी और समझदारी है और भारी मुसीवत की हालत मे भी वह हैरान नही होते और वडे सब्र से अपना काम करते है। उनकी सवसे वडी खूवी यह है कि वह जिस हालत मे भी हो, अपने-आपको उसीके मुताविक बनाते हैं और अपने आस-पास की छोटी-छोटी चीजो से लुत्फ उठाते है और राहत हासिल करते है। यह वडी भारी कामयावी है। एक वार उन्होने देहरादून जेल से मुझे लिखा

"दोपहर की कडी धूप ने पहाडो की चोटियो की वर्फ के सिवा बाकी सब वर्फ पिघला दी है। वादल हट गये हैं और अव गहरे नीले रग के आकाश की झलक मुझे दिखाई दे रही है, जो उत्तर हिदुस्तान मे बारिश के वाद दिल को सवसे ज्यादा मोहनेवाली चीज है। क्या वम्बई मे भी यह वात होती है? शायद वहा भी होती हो, उसपर कोई ध्यान न देता होगा। आज की शाम असाधारण रूप से सुदर थी। वादल खुशी से झूम रहे थे और हँसते हुए सूरज की किरणो को गिरफ्तार करके उन्हे दिल खोलकर चारो तरफ विखेर रहे थे। असाधारण रग आते और जाते थे, अजीव-अजीव तस्वीरे बनती और विगडती थी और उन सवसे वढकर यह रगो की होली थी, जो आकाश मे खेली जा रही थी। पहाडो की खुली चोटिया लाल सुर्ख हो रही थी

श्रौर उन्हे देखकर ग्लैवर के इलाके के पहाड याद श्राते थे। कभी-कभी वर्फीले हिस्से चमक उठते थे श्रौर पलक मारते ही नजरो से गायव हो जाते थे श्रौर इसके थोडी देर वाद चाद, जो करीव-करीव पूनो के चाद के वरावर था, निकल श्राया था श्रौर उसने इस सुदरता को श्रौर भी वढा दिया था।"

हालाकि जवाहर हमेशा हँसमुख रहते है श्रौर देखने मे ऐसा मालूम होता है कि वह वहुत सुखी है, पर उन्हे काफी दुख झेलने पडे है। जव उन्हे श्रपनी जवान पत्नी के प्रेम श्रौर ससर्ग की वहुत ज्यादा जरूरत थी, ऐसे समय मे उसे खो देना वडे भारी दुख की वात थी। उन्होने कोशिश की कि वह श्रपना दुख किसीपर जाहिर न होने दे। श्रपने ऊपर से उन्होने काबू कुछ ही क्षणो के लिए खोया श्रौर उसके वाद वह फौरन सभल गये। उनके चेहरे से फिर वही शान टपकने लगी श्रौर ऐसा मालूम हुश्रा, मानो उन्हे कोई परेशानी ही नही थी।

बहुत शुरु उम्र मे ही जवाहर राजनैतिक कामो की श्रोर झुकने लगे थे। उस वक्त उन्हे इसका पता भी न था कि श्रागे चलकर यही उनकी जिन्दगी-भर का काम हो जायगा। इसके बाद जो वाते होती रही, वे उन्हे धीरे-धीरे इसी लहर मे वहाती ले गई श्रौर फिर हमेशा के लिए वह इसीमे फस गये। लेकिन श्रगर जवाहर को श्रपनी सारी पिछली जिन्दगी वापस मिल जाये श्रौर उन्हे नये सिरे से कोई काम करना हो, तव भी वह वही सव करेंगे, जो उन्होने इससे पहले किया है। यह हो सकता है कि कामो के करने का उनका ढङ्ग कुछ वदल जाय—श्रगर काम वही सव होगे, जो पहले उन्होने किये है। वहुत-से लोग जवाहर को यह दोप देते है कि वह वडे झक्की है, सपने देखते रहते है, वडी-वडी वाते करते है श्रौर जो काम श्रपने सामने पडा होता है, उसे पूरा नही करते। ये सव वाते ठीक हो या न हों, पर एक वात से इन्कार नही किया जा सकता कि जवाहर सपने जरूर देखते रहते है। वह वडे भारी स्वप्नदर्शी है। वह श्रानेवाले जमाने के वारे मे ऊचे-ऊचे सपने देखते रहते है श्रौर ऐसी वाते सोचते है, जो वह खुद तो शायद न कर सकेंगे, मगर कोई श्रौर भविष्य मे कभी कर सकेगा। उनके सपने व्यक्तिगत कभी भी नही होते—वे सारे हिन्दुस्तान के भविष्य से सम्वन्ध रखते है। ऐसे हिन्दुस्तान के वारे मे, जिसकी श्रानेवाली महानता के वारे मे जवाहर को जरा भी शक नही है श्रौर जिसकी सेवा मे जवाहर श्रपनी जान तक वडी खुशी से दे देंगे।

: १५ :

छाया की भाति मै उन स्थानो में घूमता-फिरता रहा, जहां मेरा बचपन बीता था। धरती मुझे रेगिस्तान दिखाई दी, जिसे अपने पुराने पूर्व परिचित बंधुओं की खोज में मुझे पार करना था।

× × ×

उनमें से कुछ तो चल बसे, कुछ मुझे छोड गये और कुछ अब छोडते जा रहे थे। सब चले गये हैं, सब—वे पुराने पूर्व परिचित बधु!

—चार्ल्स लैम्ब

अबसे कोई साल-भर पहले मै अपने दोनो छोटे लडको—हर्ष और अजीत के साथ इलाहाबाद जा रही थी। राजा हमारे साथ नही आ सके थे, पर बाद मे आनेवाले थे। हम लोग इदिरा की शादी के लिए जा रहे थे। सफर हमेशा का जाना-बूझा था और मुझे इस रास्ते की हर चीज याद थी। पिछले साढे नौ साल मे मै इस रास्ते से बीसियो बार सफर कर चुकी थी, पर हर बार मुझे यह परेशानी रहा करती थी कि न मालूम घर जाकर मुझे क्या खबर मिले, क्योकि हमेशा ऐसा होता था कि कोई-न-कोई बुरी बात अचानक हो जाती थी। कभी तो यह हुआ कि माताजी बीमार पडी और कभी जवाहर की गिरफ्तारी की खबर मिली। पर इस बार मै अपने सफर से बहुत खुश थी, इसलिए कि मै जिस काम के लिए जा रही थी वह खुशी का काम था। मेरी प्यारी भतीजी की शादी हो रही थी।

हम लोग रात को बडी देर से स्टेशन पर उतरे और अपने लिए आई हुई गाडी पर बैठकर घर की ओर रवाना हुए। पन्द्रह मिनट बाद दूर से आनंद-भवन पर हमारी नजर पडी और मेरे मन मे अपने पुराने घर के लिए प्यार उमड पडा। रात बहुत हो चुकी थी, फिर भी आनद-भवन मे खूब रोशनी थी और चहल-पहल नजर आ रही थी। लोग घर मे आ-जा रहे थे और नौकर काम मे लगे हुए थे। मकान के हर कमरे से बातचीत और हँसी-मजाक की आवाज आ रही थी। बहुत बरसो के बाद फिर एक बार आनद-भवन मे आनद-ही-आनद दिखाई दे रहा था।

था कि कोई पुरानी वात याद आकर उसको दुखी कर रही है। आखिर वह कौन-सा काला वादल था, जो इस शुभ दिन की खुशी मे ग्रहण लगा रहा था? कही उसे अपनी मा की याद तो नही आ रही है, जो अव इस दुनिया मे नही है और जिसके न होने से एक महत्वपूर्ण जगह खाली हो गई है? या उसे अपने प्रिय पिता से जुदा होने का खयाल सता रहा था, उस पिता से, जिसके लिए वह जिदगी मे सव-कुछ थी? वह अव अपने पिता से जुदा होनेवाली थी और अव उन्हे पहले से भी कही ज्यादा अकेलेपन मे अपना जीवन विताना होगा। हो सकता है कि इस खयाल से दुलहन को कुछ परेशानी हो रही हो कि अव तमाम पुराने वधन टूट रहे हैं और एक नया जीवन शुरू हो रहा है, क्योकि कौन कह सकता है कि भविष्य मे उसके लिए क्या वदा है! सुख या दुख? मन की इच्छाओ का पूरा होना? या मायूसी? उसकी काली आखे और ज्यादा काली पड गई; पर सिर्फ एक क्षण भर के लिए। फिर वे पहले की तरह हो गई और अव उनसे किसी खास वात का पता नही चलता था।

शादी की शुभ घडी करीव आ गई और इदिरा अपने पिता के साथ उस जगह आई, जहा शादी की रस्म होनेवाली थी। दूल्हा उसी जगह उसकी राह देख रहे थे। शादी की रस्म वहुत सादा और आडवरहीन थी। दूल्हा और दुलहन साथ-साथ वैठे और उनके सामने दुलहन के पिता। उनके करीव एक खाली आसन रखा हुआ था। यह उनकी पत्नी के लिए था, जो अव इस दुनिया मे नही थी; पर उस दिन भी उसकी याद उनके मन मे मौजूद थी, इसलिए कि वह उनके जीवन भर की साथिन थी। मैने जव उस खाली आसन पर नजर डाली और उसके दर्द-भरे मतलव पर गौर किया, तो मेरा कण्ठ भर आया। आज अगर वह जिदा होती, तो कितनी खुश होती? मेरी आखो मे उनकी हँसती हुई तस्वीर खिच गई। मुझे ऐसा दिखाई दिया कि उनकी आखे मारे खुशी के चमक रही है और वे दुलहन की आखो से कुछ वडी ही मालूम हो रही है। पर मैने कोशिश की कि ऐसे दुख के सारे विचार अपने दिल से दूर कर दू। अगर यह सिलसिला इसी तरह जारी रहता, तो और भी ऐसे वहुत-से विचार मेरे मन मे आते और इस दिन की सारी खुशी को खराव कर देते।

कुछ दिनो तक शादी की दावते जारी रही और हमारे पुराने घर मे काफी खुशी और चहल-पहल रही। फिर एक के वाद एक मेहमान वापस जाने लगे और

कुछ हफ्तो के बाद मै बम्बई वापस लौट आई।

एक साल बीत चुका था। फिर एक बार इलाहाबाद गई। इस बार मै अपनी बहन स्वरूप के साथ एक हफ्ता गुजारने जा रही थी। स्वरूप नौ महीने जेल मे काटकर पन्द्रह दिन के लिए पैरोल पर बाहर आई थी। रात को बहुत देर बाद मै उस स्टेशन पर आई, जिससे मै खूब वाकिफ थी। यह स्टेशन पिछली मर्तबा जितना पुराना दिखाई दे रहा था, उससे अब और ज्यादा पुराना हो गया था। एक दोस्त, एक जवान भानजी और स्वरुप की बेटी, मुझे स्टेशन पर मिले और हम सब घर गये। अबकी बार मोटर पर नही, इसलिए कि अब हमारे पास कोई मोटर नही थी। हम एक पुराने तागे पर घर गये, जो इलाहाबाद की खराब सडको पर रेगता-सा जान पडता था।

आखिर हम आनन्द-भवन के दरवाजो मे से दाखिल हुए। इस बार मैने वहा जो-कुछ देखा, वह उससे बिलकुल भिन्न था, जो मै साल-भर पहले देख चुकी थी। अब न तो वहा ज्यादा रोशनी थी, न इधर-उधर दौडनेवाले नौकर-चाकर। पूरे मकान मे अधेरा था, सिर्फ बाहर के दरवाजे पर एक बत्ती धीमी-धीमी जल रही थी और एक कमरे मे कुछ रोशनी दिखाई दे रही थी। हमारा घर उदास, उजडा हुआ और खामोश दिखाई दे रहा था। मुझपर भी कुछ गम और उदासी छाई थी और मुझे ऐसा लग रहा था कि मै किसी ऐसी जगह आगई हू, जिससे मै वाकिफ नही हू और नही जानती कि आगे चलकर क्या नजर आयेगा। सहमे हुए दिल से मै तागे से उतरी और स्वरूप की तलाश मे गई। जब मैने उनके कमरे मे कदम रखा, तो वह मुझसे मिलने और मुझे गले लगाने के लिए आगे बढी। मैने अपनी बाहे उनके गले मे डाल दी और यह कोशिश की कि वह मुझे देखकर यह पता न लगा सके कि उनकी खराब हालत देखकर मुझे कितना दुख हो रहा है। अभी साल-भर पहले जब मैने उन्हे देखा था, तो वह अपनी उमर से दस वर्ष कम मालूम हो रही थी। अब वह नौ महीने जेल मे गुजारकर चद हफ्तो के लिए बाहर आई थी। फिर एक बार जेल की जिदगी ने मेरी एक अजीज की जिंदगी को तबाह कर दिया था और उसके चेहरे पर इस तबाही के निशान दिखाई दे रहे थे। इन चद महीनो मे वह पहले से कही ज्यादा बूढी दिखाई देने लगी थी।

मै एक हफ्ता उनके साथ रही और फिर अपने घर और अपने बच्चो मे वापस लौटी। जिदगी फिर अपने प्रियजनो के बिना ही कटने लगी। स्वरूप को न जाने

कवतक के लिए जेल वापस जाना था और अपनी तीन छोटी वच्चियो को ऐसी दुनिया मे छोडकर जाना था, जहा आशा और सुख की जगह निराशा और कटुता ने ले ली थी। ऐसी दुनिया मे इन छोटी वच्चियो को विना किसी खास सहारे के अपना जीवन विताना था।

जब मै रेल पर ववई वापस लौट रही थी, तो यही विचार मेरे मन को सता रहा था कि मै फिर आनन्द-भवन कव जाऊगी और अवकी वार जव जाऊगी, तो वहा और क्या-क्या अतर पाऊगी। क्या फिर कभी वह घर वैसा ही सुहावना और हँसी-खुशी से भरा हुआ घर होगा, जैसा पहले कभी था ? या वह ऐसा ही सुनसान और उदासी-भरा घर रहेगा, जिससे हँसी-खुशी हमेशा के लिए रुखसत हो गई हो ? मुझे उम्मीद थी कि ऐसी वात न होगी और मैने खामोशी से अपने मन मे यह प्रार्थना की कि आनन्द-भवन सचमुच फिर एक वार वैसे ही आनन्द से भर जाये, जैसाकि उसका 'आनन्द-भवन' नाम रखते वक्त पिताजी की भावना थी।

मै फिर एक वार अपने छोटे-से घर मे वापस आ गई। मेरा दिल टूट रहा था। हमारा छोटा-सा घर भी उदास ही था, क्योकि राजा अव हमारे साथ नही थे। जीवन चल जरूर रहा था, मगर उसमे कोई सुख और आनन्द नही था, कारण कि जवाहर और हमारे दूसरे सैकडो-हजारो देशवासी लोहे की सलाखो के पीछे वद थे। पिछले चार साल से लडाई जारी है, जिसने सारी मानवता को घेर रखा है और हम हिदुस्तानियो को अपनी आजादी से महरूम रखा गया है। हमारी इच्छा मालूम किये विना लडाई की इस भट्टी मे हमे झोक दिया गया है। हमसे कहा गया है कि इस लडाई से सारी दुनिया को शाति और आजादी मिलेगी, पर इसपर भी पिछले चार साल मे हर कदम पर हमे अपनी आजादी से रोका गया है और इसका भी मौका नही दिया गया कि हम अपने विशाल देश के लोगो और उसकी शक्तियो को अपने ही नेताओ की निगरानी मे इकट्ठा कर सके। हमारे देशवासियो के मन मे एक तरफ मित्र राष्ट्रो से हमदर्दी थी और दूसरी तरफ साम्राज्यवाद से नफरत थी और इन दोनो के वीच मे हमारी खीचातानी हो रही थी। इसलिए हमने यह माग रखी कि लडाई के उद्देश्य क्या है, उनका साफ ऐलान किया जाय, जिससे सभी को इस वात का भरोसा हो कि लडाई से उन्हे भी आजादी मिलेगी। पर हमारी माग का कोई जवाव नही मिला। १९४२ मे वहुत काफी झिझक और पशोपेश के वाद हमसे यह वायदा किया गया कि लडाई के वाद हमे आजादी दी जायगी, पर

इस वायदे के साथ ऐसी-ऐसी शर्ते लगाई गई, जो दुनिया का कोई राष्ट्र कभी भी पूरी नही कर सकता था। फिर ऐसे वायदे तो हमसे पहले भी बहुत बार किये जा चुके थे, जो कभी भी पूरे नही हुए। यह कितना बडा जुल्म और मजाक है कि हमसे उसी आजादी और लोकतन्त्र के लिए, जो खुद हमे नही दिया जाता, हमे अपना खून बहाने के लिए, अपने लोगो को भूखा मारने के लिए और तरह-तरह की तकलीफ उठाने के लिए कहा जाय!

आज अपनी आजादी के लिए हमारा आदोलन जारी है। हम चाहते है कि अपनी किस्मत के आप मालिक बने। हम साम्राज्यवाद से छुटकारा चाहते है, केवल उस हदतक ही नही, जहा उसका हमसे सबध है, बल्कि हम उसे दुनिया भर मे हर जगह से मिटाना चाहते है। हमारी आजादी उसी शोषण को मिटानेवाली शक्ति का एक रूप है और उसका मकसद खुद अपने-आपको और बाकी सारी दुनिया को भी विदेशियो की गुलामी और लूट से मुक्ति दिलाना है। १९४१ मे हमने व्यक्तिगत सत्याग्रह का जो आदोलन शुरू किया था, उससे हमारी मुराद यह थी कि ब्रिटेन अपने लडाई के मकसदो का साफ ऐलान कर दे। यह दुनिया की नैतिकता से हमारी अपील थी, पर इस अपील का कोई जवाब नही मिला। हमारी अपील मे ज्यादा जोर पैदा करने और दुनिया को उसे सुनाने के लिए हमारी तरफ से और ज्यादा कुर्बानियो की जरूरत थी। हमारी सरहदो पर हालत बहुत खतरनाक होते हुए भी काग्रेस को लोगो से यह कहना पडा कि वे और ज्यादा कुर्बानियो के लिए तैयार हो जाये। चूकि अब सवाल सिर्फ सारी दुनिया की शाति और आजादी का नही था, बल्कि अब अपने देश को फासिस्ट हमले से बचाने का भी था, इसलिए हमे यह नया आदोलन शुरू करना पडा और हालाकि अभी यह आदोलन शुरू नही हुआ था और हुकूमत से बातचीत चल ही रही थी कि हमारे नेताओ को पकड लिया गया। हिंदुस्तान की आजादी के लिए हम आज जो आदोलन चला रहे है, वह हमारी तग राष्ट्रीयता का प्रतीक नही है, बल्कि सही मायनो मे मानव-स्वतत्रता प्राप्त करने की जागरूक इच्छा है। हिदुस्तानियो ने फासिज्म और साम्राज्यवाद का हमेशा विरोध किया है और अपने खाली हाथो से वे चीन, स्पेन और दूसरे देशो को जो भी मदद दे सके, उन्होने बराबर दी है। जहा वे कोई प्रत्यक्ष मदद नही दे सके, वहा उन्होने कम-से-कम यह किया है, कि अपनी हमदर्दी और अपना विश्वास दुनिया के गिरे हुए और कमजोर लोगो के साथ जाहिर किया है।

आज हमारे सामने और सिर्फ हमारे ही नही, सारी दुनिया के सामने जो चीज है, वह यह कि लडाई के दौरान मे एक ही ऐसी राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक बुनियादी तब्दीली हो जाये कि जिससे हम अपनी पूरी जनता को जापानी हमले के मुकाबले के लिए खडा कर सके और हिंदुस्तान को तरक्की के रास्ते पर डालकर अपने देश की तबाही रोक सके। इस वक्त सारी दुनिया मे अजीब गडबडी फैली हुई है और यह हमारा काम है कि उसमे किसी हद तक सही शाति और व्यवस्था कायम करे। हो सकता है कि यह काम सिर्फ हम हिंदुस्तानियो के बस की बात न हो, पर जबतक हम इस मकसद को अपने सामने रखे रहे, और इस मशाल को रोशन रखे, तो हो सकता है कि जो काम हम न कर सके, वह और लोग कर सकेगे। अपनी इस एक ही मजिल तक पहुचने का जो रास्ता है, उसमे बहुत-सी रुकावटे हो सकती है, पर जबतक हमारे कदम सीधे रास्ते पर हो और हमारी नजर ठीक से अपनी मञ्जिल पर हो, तो हमे इन रुकावटो की क्या पर्वाह है ?

इन विचारो को माननेवाले हजारो लोगो के लिए, जो दुनिया मे जगह-जगह फैले हुए है, और खासकर हम हिंदुस्तानियो के लिए, जबतक हम अपनी आजादी प्राप्त न कर ले, आराम करने या चैन लेने का सवाल ही पैदा नही होता, चाहे हमे उसकी कितनी ही कीमत क्यो न अदा करनी पडे। अगर हमारी किस्मत मे यही लिखा है कि हम सारी उम्र तकलीफे उठाते रहे, तो हमे उसके लिए भी तैयार रहना चाहिए और अपना काम इस उम्मीद के सहारे जारी रखना चाहिए कि भले ही हमे सुख और वैभव प्राप्त न हो, हम अपनी आनेवाली पीढियो के लिए ऐसी दुनिया बनायेगे, जो हमारी इस दुनिया से ज्यादा सुखी और सपन्न होगी। पीयरी वा पासे ने अपनी किताब 'केवल वह दिन' मे लिखा है

"एक दिन ऐसा जरूर आयगा जब इन्सान अकेले घूमने से तग आकर अपने भाई की तरफ देखने लगेगा। वही दिन होगा, जब हम दूसरे के सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझने लगेगे और जब दूसरो की तकलीफे और आशाए हमारी तकलीफे और आशाए बनेगी। वह ससार, जिसमे प्रेम और न्याय भरा हुआ हो, उसी दिन करीब आयेगा, जिसके लिए सारी दुनिया बेकरार है और जिसका नमूना खामोश रात के तारे भी बढिया, लेकिन अधूरी तौर पर पेश करते है।"

जब से मै पैदा हुई, तब से १६१६ तक का जीवन मेरे लिए सुख, शाति और आनंद का था। मेरी खामोश जिदगी मे पहली बेचैनी जलियावाला बाग के कत्ले-

श्राम से पैदा हुई और इस घटना से मै उन वातो को सोचने लगी, जिनपर मैंने पहले गौर नही किया था। यह पहली उथल-पुथल थी। इसके बाद तो और कई ऐसी घटनाए हुई और वे एक-से-एक वढकर थी। १९२० के वाद हममे से शायद ही किसीको शात जीवन नसीव हुआ हो, पर हमारा खानदान एक जगह वना रहा और यह वडी वात थी। १९३१ मे पिताजी की मौत ने यही नही कि हम लोगो के जीवन मे एक वडी कमी कर दी, वल्कि उसने हमारे लिए और मुसीवतो का भी दरवाजा खोल दिया। १९३६ मे कमला चल वसी और दो साल वाद माताजी। हमारी आर्थिक हालत अव इतनी अच्छी न थी। हममे से किसीके लिए भी जीवन सुखी या आसान नही था, पर मेरा खयाल है कि इसके कारण हम लोगो से ज्यादा तकलीफ दूसरी पीढी को उठानी पडी। वार-वार अपने रिश्तेदारो की जुदाई और दूसरी छोटी-वडी तकलीफो और मुसीवतो ने मुझे कभी-कभी वहुत ज्यादा परेशान किया है और मायूस भी कर दिया है। पर जिस वात के कारण मैंने विलकुल हिम्मत नही हारी, वह मेरी अटल श्रद्धा और पूर्ण विश्वास है कि हम इन्साफ के लिए लड रहे है। यह केवल हमारा ही काम नही है, दुनिया-भर के दलितो का और आम लोगो का काम है। यही विचार मेरी सहायता करता है और मुझे यकीन है कि और वहुत-सो की भी इसी तरह सहायता करता होगा। यही सवव है कि हम तमाम दुख और जुदाइया विना किसी शिकायत और कडुवाहट के सह लेते है।

जीवन की अनिश्चितता जो मेरे कुटुव के हिस्से मे आई है और जो हमारे और वहुत-से देशवासियो के हिस्से मे भी आई है, ऐसी चीज है, जो इन्सान को धीरे-धीरे थका देती है। मै इस आशा पर जीती हू कि फिर सव कुछ ठीक होगा, फिर अजीज एक साथ मिल वैठेंगे, फिर सुख और शाति के दिन आयेगे, फिर हमारा देश सपन्न होगा, पर सच तो यह है कि भविष्य अभी इतना रोशन नजर नही आता। फिर भी उन सव तकलीफो और परेशानियो के होते हुए भी—और मैं समझती हू कि हमे इन चीजो का हिस्सा जरूरत से कुछ ज्यादा मिला—और उन कुर्वानियो के, जो हमे अवतक देनी पडी हैं और शायद आगे चलकर भी देनी पडेगी और उस वेचैनी और उथल-पुथल के, जो मेरे पूरे जीवन की साथिन वनी हुई है, जव मैं जो कुछ हुआ, उस सव पर नजर डालती हू, तो मुझे किसी तरह की भी कोई शिकायत नही होती।

"ओ मेरे बंधुओ, अपनी सादगी की श्वेत पोशाक में अभिमानी और शक्तिशाली के सामने खडे होने पर तुम्हे लज्जित होने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे सिर पर मानवता का मुकुट हो और तुम्हारी आजादी का अर्थ हो आत्मा की आजादी। अपनी निर्धनता और अभावो पर प्रतिदिन भगवान का सिंहासन बनाओ और गाठ बांध लो कि जो विशाल दिखाई देता है, वह महान नही है और अभिमान कभी भी चिरजीव नही होता।"

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

['दो वहनें' और 'स्मृतिया' लेखो के विषय को ही वढ़ाकर प्रस्तुत पुस्तक 'कोई शिकायत नहीं' तैयार की गई है। पुस्तक तो यहा समाप्त हो जाती है, लेकिन उसका विषय खत्म नहीं होता, वह आगे जारी रहता है। मैं इन लेखो को यहां इसलिए दे रही हू कि जो स्मृतिया सदैव मेरे मस्तिष्क में चक्कर लगाती रहती है, वे इन लेखो में सग्रहीत है।]

दो वहने

दस साल की एक छोटी लडकी अपनी मा के विस्तरे के पास खडी उस नई वच्ची की तरफ देख रही थी, जो हाल ही मे पैदा हुई थी। यह उसकी छोटी वहन थी। इतनी नन्ही, पर ऐसी सुदर! दस साल की उस लडकी मे उससे ज्यादा अक्ल थी, जो उसकी उम्र के और वच्चो मे होती है। इसलिए उसने इस किस्म के वेवकूफी के सवाल नही किये कि यह छोटी वच्ची कहा से और किस तरह आगई। उसे इन वातो का कुछ मोटा-सा अदाज था और वह कुदरत की इस कारीगरी पर ताज्जुव कर रही थी। वह यह भी सोच रही थी कि क्या कभी उसके भी कोई ऐसा ही छोटा वच्चा होगा, जिससे वह खेल सकेगी? उसका दिल उस नाजुक वच्चे की ओर गया, केवल उस प्रेम से नही, जो वहन से होता है। उसके साथ एक ऐसी कोमलता और रक्षा का खयाल भी था, जो प्रेम की अपेक्षा कही अधिक था।

साल-पर-साल गुजरते गये। एक वडे अमीर घराने मे एक उत्सव का मौका था और हर तरह खुशी की चहल-पहल थी। पुराना मकान वहुत खूवसूरती से सजाया गया था और अदर से गाने-वजाने और हँसी-मजाक की आवाज आ रही थी। घर की सवसे छोटी लडकी की उस दिन शादी हो रही थी। वह अपने घर के एक कमरे मे वैठी हुई थी। अभी वह कमसिन ही थी, अपनी गुलावी रग की साडी मे वह सुहावनी सुवह से भी ज्यादा खूवसूरत दिखाई दे रही थी। उसे उस दिन के महत्व का ठीक से अदाजा भी न था। उसके पास ही उसकी वडी वहन वैठी थी। वह भी जवान थी और सुदर भी। वह एक सफेद साडी पहने हुए थी। उसके कोई गहना न था, क्योकि वह वचपन मे ही विधवा हो चुकी थी। कम उम्र मे ही उसकी शादी हुई थी, पर शादी के साल-भर वाद ही उसके पति की, जिसे वह

पूरी तरह जान भी न सकी थी, मृत्यु हो गई। आज उसके दिल मे दुख या खुद अपने ऊपर अफसोस के लिए जगह न थी। उसकी छोटी वहन का, जिसे उसने अपनी बच्ची की तरह पाला था, आज ब्याह हो रहा था और उसके लिए आज वडे ही आनद का दिन था। उसकी सारी ममता अपनी छोटी वहन के लिए थी। खुद अपने लिए उसके मन मे किसी चीज की भी इच्छा न थी, न अच्छे कपडो की न गहने-पाते की, न ऐश-आराम की। हर रोज और आज के दिन खासकर उसकी जो प्रार्थना थी, वह वस यही थी उसकी प्यारी वहन के रास्ते मे किसी तरह का दुख न हो और जव वह उस नन्ही-सी दुलहन के करीव बैठी थी और अपनी दुखभरी आखो से उसकी तरफ प्रेम से देख रही थी, तो उस सुदर दृश्य को देखकर उसका दिल गर्व से वल्लियो ऊचा उछल रहा था।

और भी कई साल गुजर गये। छोटी वहन अव वडी खूवसूरत औरत वन गई थी। वह कई वच्चो की मा थी और एक वडे सुखी घर की मालकिन। इस तरह कई और साल सुख और सतोष के साथ बीत गये।

अव उस वडे घर मे पहले से कुछ फर्क हो गया। अव उस घर के मालिक घर को शोभित करने के लिए मौजूद न थे। घर की स्वामिनी गमगीन और अकेली थी, और वही घर जो कभी हँसी-खुशी से भरा-पूरा रहता था, अव खामोश और दुखी था। ऐसा मालूम होता था कि इस घर का सारा तेज और सुख उसीके साथ चला गया, जो घर की जान था।

वाग के एक कोने मे दो वडी उमर की औरते बैठी थी, पर उमर के वढने से उनकी जवानी की खूवसूरती और वढ गई थी। उन दोनो मे जो वडी थी, वही ज्यादा मजबूत मालूम होती थी। उसके सिर मे शायद ही कोई सफेद बाल होगा और उसके दुखी चेहरे मे कुछ ऐसी कोमलता और दयालुता थी, जो वयान से बाहर थी और ऐसा मालूम होता था कि यह किसी दूसरी दुनिया की वसनेवाली है। दोनो मे से छोटी अव भी वडी ही नाजुक और कमजोर थी। उसके वाल करीव-करीव सभी सफेद हो चुके थे, पर वे उसके चेहरे को, जिसपर दुख और तकलीफे अपने निशान छोड गई थी, कुछ अजीव शोभा दे रहे थे। दूर से हवा के झोको के साथ जव छोटे नाती-पोतो की आवाज उनके कानो मे पडती, तो उनके चेहरो पर हँसी खेलने लगती थी।

वह विस्तरे के पास खडी थी, पत्थर की तरह खामोश। वह अपनी छोटी वहन

के शात और सुदर चेहरे को देख रही थी। मरने के वाद भी वह वैसी ही सुदर दिखाई दे रही थी, जैसीकि जीवित अवस्था मे थी। पर यह कैसे हो सकता था कि जव जीवन का काम खत्म हो गया, तो वह अपनी वडी वहन को पीछे छोडकर अकेली आगे चली जाय! यह मुमकिन न था। वह जो हमेशा से डरनेवाली थी, अनजान रास्ते का इतना लवा सफर अकेले कैसे कर सकती थी? वडी वहन उसे अकेला जाने नही दे सकती थी। उसे भी उसके साथ-साथ जाना चाहिए, उसका हाथ थामने के लिए और उसे हिम्मत दिलाने के लिए।

छोटी वहन चली गई, तो वडी वहन के पास टूटे हुए दिल के सिवा और कुछ न था, जो खून के आँसू रो रहा था। वह चुपचाप एक कोने मे पडी हुई थी, हैरान, परेशान और थकी हुई। उसकी आखे वद हो गईं और उसके दिल की आखो के सामने तरह-तरह की तस्वीरे घूमने लगी, एक नन्ही-मुन्नी वहन, जो अपनी मा के पास बिस्तर पर लाचार पडी हुई थी, एक जवान दुलहन जो वडी ही खूबसूरत, मगर वच्चो की तरह मासूम थी, एक शानदार मा और उसके साथ उसके वच्चे, एक वूढी वहन, कमजोर और थकी हुई, और फिर उसकी प्यारी वहन ही की तरह नजर आनेवाली प्रतिमा, निस्तेज और खामोश, गोया उसमे अव जान वाकी न थी! लेकिन नही, वह मरी नही थी, क्योकि वह तो अपनी वडी वहन को इशारे से वुला रही थी कि आओ और इस धारा को पार करने मे मुझे मदद दो। अव वडी वहन के चेहरे पर हँसी की चमक दिखाई दी, अद्वितीय कोमल हँसी। उसने अपना हाथ इसलिए आगे वढाया कि अपनी छोटी वहन का हाथ पकडे और उसे दूसरी दुनिया मे कदम रखने मे मदद दे।

अव उसके चेहरे पर भी अनत शाति छाई हुई थी। शाति और सुख। इसलिए कि क्या वह भी सिर्फ कुछ घटो की जुदाई के वाद फिर अपनी वहन से जाकर नही मिल गई थी और उसके साथ इस दुनिया के आखिरी छोरतक और इसके वाद की दूसरी दुनिया मे भी नही जा रही थी? उसका पूरा जीवन अपनी वहन की श्रद्धाभरी और निस्वार्थ सेवा की एक लवी कहानी थी। मौत मे भी इतनी शक्ति न थी कि उन दोनो को जुदा रख सके।

स्मृतियां

किसी कवि ने कहा है, "स्मृतिया वसत ऋतु के फूलो की-सी होती है।" जव पिछली वाते याद आती है, तो वे मन को ऐसा ही आनद देती है, जैसी सुदर फूलो की सुगध किसी अकेले मन को देती है। पर हर वात की याद ऐसी सुहावनी नही होती। कुछ वाते ऐसी भी होती है, जिनकी याद के साथ कुछ दुख भी होता है, कुछ ऐसी, जिनसे अफसोस होता है और कुछ ऐसी भी कि जिनके आते ही ऐसा दर्द होता है, जो समय के गुजरने से या वातावरण के वदलने से कम नही होता। इन्सान को ऐसे दिनो की याद भी होती है, जो खुशी और आनद के दिन थे, जिनमे चारो ओर प्रकाश और प्रसन्नता थी। फिर ऐसे दिनो की भी याद आती है, जव खुशी का सूरज दुख के वादलो मे घिरा हुआ था और जीवन सूना और वेकार मालूम होता था, पर इन सब वातो की याद गुजर जाती है, इसलिए कि उसे गुजर जाना ही चाहिए, पर जाते-जाते इनमे से कुछ बातो की याद ऐसे निशान छोड जाती है, जो कभी भी मिटाये नही जा सकते।

इसी तरह जव मै अपने वचपन के घर को हर वार वापस जाती हू, तो पुरानी स्मृतिया जाग उठती है। वडे ही अच्छे बचपन की सुख भरी याद, फिर वाद के वरसो की दुख भरी याद और उन दिनो की याद, जो अब कभी पलटकर नही आ सकते। ऐसी याद, जो दिल को इतना गमगीन बनाती है कि दिल बस टूटने लगता है, इसलिए कि मेरा घर अव वह पुराना घर नही रहा, जो वह पहले था और हर वार जब मै वहा जाती हू, तो कोई-न-कोई नई बात मुझे दिखाई देती है।

मै उसी पुराने वाग मे जा बैठी, जहा मै वचपन मे बैठा करती थी। हरदम वदलती रहनेवाली इस दुनिया मे यही जगह ऐसी है, जो वदली नही है। मेरे सामने वह शानदार मकान था, जिसमे मै वडी हुई थी और जव मैने इस मकान को देखकर पिछली वातो को याद करना शुरू किया, तो वह किताव, जो पढने के इरादे से अपने साथ लाई थी, यो ही पडी रही। मेरे पैरो के पास और इधर-उधर खूब-सूरत तितलिया उड रही थी। घास की ताजा खुशबू थी और हवा के झोको के साथ गुलाव की महक भी मुझ तक आ रही थी। मै एक आह भरकर खामोश बैठ

गई, इसलिए कि अपने आस-पास की हर चीज के सुदर और शात होने पर भी मेरे मन मे एक दर्द था, जिसे मै रोक नही सकती थी। मुझे किसी ऐसी चीज का वियोग सता रहा था, जो मै खो चुकी थी और जो अब फिर कभी पा नही सकती थी। मेरे विचार इसी तरह इधर-उधर भटकते रहे और मेरी आखे बद हो गई और मै उन दिनो के सपने देखने लगी, जो अब बस याद के रूप मे ही रह गये थे।

मुझे कुछ ऐसा दिखाई दिया कि एक वडा भारी पुराना मकान है—आदमियो से भरा हुआ, इसमे वे सारे सामान मोजूद है, जो अच्छी तबीयत और दौलत, दोनो मिलकर जमा कर सकते है। इस मकान का मालिक, जिसका वडा ही भव्य व्यक्तित्व है, पूरे घर पर छाया हुआ है। उसको अपने वाल-वच्चो से वडा प्रेम है और उसकी हँसी चारो ओर गूज रही है। ऐसा मालूम होता था जिन लोगो मे उसे प्रेम हे, उन्हे उसके जीते-जी कोई तकलीफ पहुच ही नही सकती। इस घर की मालकिन, जो वडी ही सुदर और कोमल थी, अपने घर के प्रवध मे मगन थी और इधर-उधर घूम-फिर रही थी। उसकी फुर्ती को देखकर आश्चर्य होता था कि इतनी कमजोर औरत भी इतना काम कर सकती है। इस घर मे हर जगह जीवन और चहल-पहल दिखाई दे रही थी, सुख और सतोप था और ऐसे वातावरण मे तीन वच्चे पल रहे थे।

कुछ साल वाद। मकान वही था, पर वहा की शान-शौकत सब गायव हो चुकी थी। कुछ साल पहले वहा जो ठाट-वाट दिखाई दिया करता था, उसकी जगह अब सादगी ने ले ली थी। पर मकान मे रहनेवाले वही पुराने लोग थे और मकान के मालिक की दिल से निकली हुई हँसी अब भी घर भर मे गूजती थी और जिन लोगो के दिल पर कुछ उदासी छाई हो, उनका दिल वढाती थी। इस मकान मे और उसमे रहनेवालो मे जो फर्क हुआ था, वह किसी मुसीबत या वदनसीवी से नही हुआ था, वल्कि उसका सवव यह था कि लोगो के दृष्टिकोण मे और राजनैतिक विश्वासो मे तब्दीली हो गई थी।

कुछ साल और निकल गये। पुराने मकान के करीव ही अव एक नया मकान और वन गया था। नया मकान क्या था, एक सपना था, जिसे एक प्रिय पिता ने अपने प्रिय पुत्र के लिए मकान का रूप दे दिया था, पर इसके रहनेवालो को उससे सुख बहुत कम और दुख वहुत ज्यादा मिला।

मकान के वडे कमरो मे एक वूढा आदमी वैठा था। उसके वाल वर्फ की तरह

सफ़ेद ही गये थे। उसका सिर झुका हुआ था और वह कुछ सोच मे मगन था। वह वहुत वीमार था और कुछ राजनैतिक विचारो के लिए उसके वेटे को जेल भेज दिया गया था। वेटे के जेल जाने से पहले उससे मिलने के लिए उसने घर तक पहुचने मे सैकडो मील का सफर किया था। उस बूढे ने भी उन्ही विचारो की खातिर कई महीने जेल की कोठरी मे गुजारे थे और फिर वही जाने के लिए वह तैयार था। वह ठीक समय पर घर पहुचा। वस इतनी देर पहले कि अपने वेटे के जेल जाने से पहले उससे एक वार हाथ मिला ले। उसके पास ही वह छोटी-सी औरत वैठी थी, जिसने वडी वहादुरी के उसके पूरे जीवन मे और उसके हर दुख-सुख मे उसका साथ दिया था। वह अव पहले से भी ज्यादा कमजोर दिखाई देती थी, पर आश्चर्य की वात यह है कि हर नया वार सहने के लिए वही अपने बूढे पति को शक्ति देती थी, वही जो इतनी दुवली-पतली और कमजोर और शर्मीली थी, अपने उस पति को सहारा देती थी, जो हमेशा निडर और मजवूत था।

कमरे के एक कोने मे उस घर की वडी लडकी वैठी थी। उसका व्याह हो चुका था और वह वच्चो की मा वन गई थी और उसे इस वात का पूरा अदाजा था कि उसके माता-पिता को इस समय कितना दुख हो रहा होगा। उसकी नजर उन्ही दोनो के चेहरो पर जमी हुई थी और उसका दिल यह देखकर टूट रहा था कि वह अपना दुख खामोशी से झेल रहे है और वह खुद उनकी कुछ भी मदद नही कर सकती। उसी कमरे के दूसरे हिस्से मे दीवार से सिर टेककर और अपना मुह सव लोगो की ओर से मोडकर उस घर की छोटी लडकी खडी थी। उसके दिल मे भी दर्द था। उसकी आखो मे आँसू थे, जो अभी छलके नही थे। उसके दिल मे क्रातिकारी विचार भरे हुए थे। और सव लोग तो यह कह चुके थे कि अव किस्मत मे जो कुछ लिखा होगा, हो जायगा, पर यह लडकी कुछ और ही सोच रही थी। कभी तो उसे यह खयाल आता था कि जो वडा भारी मकसद उसके सामने है, उसके लिए यह सव त्याग और कुर्वानी जरूरी है। कभी-कभी जव वह अपने माता-पिता की परेशानियो का पहाड देखती थी और उनकी तनहाई महसूस करती थी, तो उसके दिल मे वहुत शकाए पैदा होती थी। वे अगर चाहते, तो दुनिया को हासिल कर सकते थे और चैन से रह सकते थे, पर उन्होने कर्तव्य का कठोर रास्ता अपने लिए पसद किया और अपना जीवन मानव-जाति की और अपने देश की सेवा के काम मे लगा दिया। उसके दिल मे परस्पर विरोधी विचार पैदा होते थे और उसे

यह हिम्मत न होती थी कि वह अपने माता-पिता की तरफ देखे, जिनका दुख वह खुद कम नही कर सकती थी। घर के प्यारे बेटे के बिना सारा घर सूना था, पर वह पुराना घर भी कुछ अजीब शान से खडा था और ऐसा मालूम होता था कि उसे भी उस बेटे पर गर्व है, जो उसकी छाया मे पला और बडा हुआ है। माता-पिता को वक्त का कुछ खयाल ही न था। वे तो बस उस बेटे की राह ताक रहे थे, जो कुछ मील के फासले पर जेल की बर्फ जैसी ठडी कोठरी मे पडा था और इधर ये दोनो अपने आलीशान महल जैसे मकान मे बैठे थे और उस आराम से नफरत कर रहे थे, जो उनके चारो ओर था।

कुछ देर तक वे दोनो ऐसे ही बैठे रहे। वे दोनो अपने ही विचारो मे डूबे हुए थे, पर वे विचार एक ही व्यक्ति के लिए थे। यह हालत सिर्फ थोडी देर के लिए रही। पिताजी अपनी आह को दबाकर उठे, उनके चेहरे, खासकर उनकी ठुड्डी, से उनके दृढ निश्चय का पता चल रहा था। वह सोच रहे थे कि अब उन्हे उठ खडा होना चाहिए और जिस काम के करने से उनके बेटे को रोक दिया गया था, उसे आगे बढाना चाहिए। यही सोचकर वह उठ खडे हुए और वहा से चल दिये। और वह छोटी-सी औरत, जो एक बहादुर बेटे की माता थी, वह भी उठ खडी हुई। उसके दिल मे दर्द था, पर उसके चेहरे पर हिम्मत की मुस्कराहट झलक रही थी। वह उठी और अपने रोज के कामो मे लग गई।

कई साल और बीत गये। मीलो तक हजारो आदमी रास्ते के दोनो तरफ खडे थे। इनमे कोई आख ऐसी न थी, जो आँसू न बहा रही हो और न कोई दिल ऐसा था, जो दर्द से टूट न रहा हो। हर एक यही समझ रहा था कि खुद उसीका अपना कोई आत्मीय उसे छोडकर जा रहा है। ये सब लोग उस महान व्यक्ति की, जो उनके बीच मे नही था, मृत्यु पर श्रद्धाजलि अर्पित करने इकट्ठे हुए थे। उन्होने कई दिन और कई राते मौत का भी मुकाबला किया और प्रयत्न करते रहे कि कुछ साल और जिदा रहे और अपनी जिदगी भर के काम का नतीजा अपनी आखो से देख ले, पर विजय मौत की हुई, जैसीकि अत मे उसीकी होनी थी और वह दुनिया से विदा हो गये। जो घर कभी हँसी-खुशी से भरा रहता था, उसी घर के एक कमरे मे एक बहादुर वीर की विधवा बैठी हुई थी, जो अपने आखिरी सफर पर रवाना हो चुका था। अपने पति से जुदाई का सदमा इतना जबर्दस्त था कि वह गरीबिनी आँसू भी नही बहा सकती थी। पास ही अपनी बाहे उसके गले मे डालकर उसका बेटा

[illegible] उसकी आखो मे भी आँसू भरे थे, क्योकि कि वह अपने पिता को वहुत चाहता था। उसकी समझ मे नही आता था कि अपनी माता को दिलासा कैसे दे, पर माता ही खुद उसे दिलासा दे रही थी और अपने जवान वहादुर वेटे का हाथ थामकर उसका दिल वढा रही थी।

जमाना आगे वढता गया। उस पुराने घर ने वहुत से परिवर्तन देखे थे और अभी उसे और भी वहुत-कुछ देखना था। उस घर की तरफ जानेवाले रास्ते पर पुलिस की गाडिया खडी थी और मकान के अहाते मे भी जगह-जगह पुलिस दिखाई दे रही थी। यह सव तैयारी उस घर की दोनो लडकियो की गिरफ्तारी के लिए थी। इतने साल वे दोनो भी खामोश नही वैठी थी। वे भी काम करती रही थी और अपने पिता के कदमो पर चलकर अपने खानदान की पुरानी परम्पराओ पर कायम थी। इसीलिए उन दोनो को भी उसी तरह जेल जाना पडा, जिस तरह इससे पहले उनके पिता और भाई जेल गये थे। पुलिस के अफसर ने अदव से वारट पेश किया और लडकियो ने उसे हँसकर कवूल किया और अपनी कुछ जरूरी चीजे लेने अन्दर चली गई। ऐन उस वक्त उनकी मा अपने कमजोर पैरो से जितनी तेजी से चल सकती थी, चलकर वाहर आई और पूछने लगी, "यह सब क्या हो रहा है? इतनी गाडिया और इतने लोग क्यो जमा है?" वडी लडकी ने अपनी मा के गले मे वाहे डाली और चुपके से उनके कान मे वात कह दी। एक क्षण भर के लिए उन्होने कमजोरी दिखाई। उनकी आखो मे आँसू आ गये। उन्होने लडकी का हाथ पकडकर कहा, "तुम्हारे विना तो मै विलकुल अकेली रह जाऊगी।" पर यह हालत एक क्षण भर ही रही। वह फिर तनकर खडी हो गई और इस नई आजमाइश का एक शेरनी की तरह मुकावला करते हुए उन्होने कहा, "मुझे तुम पर गुमान है, वहुत गुमान और मै भी अभी इतनी वूढी तो नही हू कि तुम्हारे पीछे न चल सकू।" यह वात कहते वक्त उनकी आखे चमक उठी। उन्होने अपनी दोनो लडकियो को खूव जोर से गले लगाया और आशीर्वाद दिया। पर उनका कोमल और कमजोर शरीर इतने कष्ट सहन कर चुका था कि अव ज्यादा सहन करने की शक्ति उसमे वाकी नही रही थी। जैसे ही उन्होने अपने हाथ उठाये, वह बेहोश हो गई। दोनो लडकियो को उस जगह भेज दिया गया, जहा उन्हे ले जाने के लिए वे गाडिया आई थी। और जिदगी इसी तरह गुजरती रही।

जेल का एक कमरा और उसकी काली भयानक दीवारे! उसके अन्दर दो

बहने बैठी थी। अब वे एक नये रिश्ते से—कैदी होने के नाते—एक-दूसरी के और ज्यादा करीब थी। एक-दूसरी के सहारे वे बिलकुल करीब-करीब बैठी थी और लोहे की शलाखो मे से खूबसूरत सुर्ख आसमान को देख रही थी, जिसका अर्थ यह था कि जेल की दीवारो के बाहर कही सूरज डूब रहा था। वे दोनो बहने अपने-अपने विचारो मे मगन थी। एक को अपना घर, अपने पति और अपने छोटे बच्चे याद आ रहे थे, जिन्हे उसने पीछे छोडा था। दूसरी का दिल अपने पिता की वह हँसी सुनने के लिए तडप रहा था, जो उसे हमेशा हिम्मत और आशा दिलाती रही थी। अपनी मा की गोद भी उसे याद आ रही थी—उसी मा की, जो उस बडे और सुनसान मकान मे अब अकेली रह गई थी।

जजीरो की झकार और किवाड खुलने की आवाज सुनाई दी। कैदी सोचने लगे कि क्या बात है। एक पहरेदारिन उन दोनो बहनो के पास आई। उसके हाथ मे एक तार था। उन्होने तार डरते-डरते लिया और एक क्षण के बाद वे एक-दूसरी की तरफ देखकर मुस्कराई। अच्छा! तो उनकी बहादुर मा ने अपना वचन सच कर दिखाया और अब वह भी किसी जेल मे बन्द है! कितनी बहादुर थी उनकी मा और कितने जालिम और निष्ठुर थे वे लोग, जिन्होने पैंसठ साल की इस बूढी औरत को भी जेल मे बन्द कर दिया था!

कुछ साल और बीत गये। जिस घर ने सुख-दुख के इतने मौके देखे थे, उसीके सामने आज फिर बडा भारी मजमा था। यह मौका उस मा की मृत्यु का था, जो एक शाम को चुपचाप दुनिया से कूच कर गई। वह हमेशा दूसरो के लिए जिदा रही थी और अब किसीको तकलीफ दिये बिना ही चल बसी। वह अपने बिस्तर पर पडी थी। मृत्यु के बाद भी वह वैसी ही कोमल और सुदर दिखाई दे रही थी, जैसी जिदगी मे थी। फूलो से लदी हुई वह एक रानी मालूम दे रही थी। सचमुच वह रानी ही थी।

मैंने एक सुनसान घर देखा, जिसमे अब हँसी-खुशी नाम को न थी। यह मकान एक बाग के बीच मे था, पर बाग की अब देख-भाल नही होती थी। मकान के अदर एक कमरे मे उस घर का बेटा बैठा हुआ था। वह अपनी मेज के पास बैठा काम कर रहा था। हमेशा काम करते रहना उसकी आदत थी। उसकी जिदगी आराम की जिदगी नही थी और न उसे आगे चलकर कोई खास सुख या आराम मिलने की आशा थी, क्योकि उसने अपने लिए एक सीधा और तग रास्ता अख्ति-

या [illegible] था और उस रास्ते से पीछे फिरने का सवाल ही पैदा नही होता था। कभी-कभी वह अपनी थकी हुई आखे उठाता था और देखनेवाले को उन आखो मे ऐसा दर्द और गम खिाई देता था, जो बयान से बाहर था, क्योकि वह अब बिलकुल ही अकेला रह गया था। पर जब कभी और लोग मौजूद होते, तो वह अपने अकेलेपन को छुपा लेता था और अपनी मुस्कराहट और अपने मन मोह लेनेवाले बर्ताव से वह सभी के दिल मे घर कर लेता था।

मैंने कष्ट से नीद ही मे करवट बदली। मेरा दिल पत्थर की तरह भारी था। पिछले बरसो मे इस प्यारे घर मे बडी-बडी तब्दीलिया हुई थी, पर यह विचार दिल को खुश कर रहा था कि वह भाई, जिससे मिलने मैं इतनी दूर आई थी, अभी जेल से बाहर है, क्योकि भाई के बिना घर मे कभी वह आनद नही आता था, जो उनके होते हुए आता था। मैंने अपनी आखे खोली और इरादा किया कि दौडकर ऊपर जाऊ और भाई से बाते करूँ। मैंने अपनी किताब उठाई और घर की तरफ दौडी। जैसे ही मैं घर मे दाखिल हुई, टेलीफोन की घटी बजी। मैंने चोगा उठाया, तो किसी अजीब आवाज ने कहा, "सुनिये, आपके भाई का मुकदमा कल होगा।" "कल मुकदमा ? कैसा मुकदमा ?" मैं आश्चर्य से सोचने लगी। मेरी आखो मे अभी नीद भरी हुई थी। इसलिए वह खबर ठीक मेरी समझ मे नही आई, पर एक ही क्षण बाद सारी बात मेरी समझ मे आ गई। भाई अदर नही थे, जिनसे आकर मै मिलती। मै सपना देख रही थी। इसलिए कि भाई तो दो दिन पहले ही गिरफ्तार किये जा चुके थे।

थकी-मादी मै ऊपर अपने कमरे मे गई। मेरा साथ देने के लिए मेरे भाई वहा नही थे। उनकी जगह पिछले दिनो की बाते थी, सुख और दुख की बाते, जो मुझे याद आ रही थी।